

महुआ-आम के जंगल'

[आंचलिक कथाओं का संकलन]

Mahuwa - Aam kay
Jungle.

~~By Rajender Awasthi
Trasht.~~
राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित'

~~Rajew~~

Bombay Prakashan
Private Ltd.
Bombay

बम्बई प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

बम्बई १

H83. R 21203 2.50

प्रथम संस्करण : १९५९

② 3.2.1961

75

© राजेन्द्र अवस्थी, १९५९

1959

रु० २.५०

2-8

प्रकाशक : बम्बई प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, निकिल रोड, बम्बई १

मुद्रक : ओम्प्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी ५५८६-१६

646
A157
दो आंचलिक उपन्यासों और दो कथा-संग्रहों के बाद यह मेरा तीसरा कहानी-संग्रह है। लेकिन पिछले दो संग्रहों से यह भिन्न है और इस दृष्टि से यह पहिला संग्रह माना जाना चाहिए।

स्वाधीनता के बाद हिन्दी का कथा-साहित्य एक नयी दिशा की ओर उन्मुख हुआ है। उसने हमारे ग्रामीण क्षेत्रों के उन अछूते तत्वों का स्पर्श किया है, जो अब तक उपेक्षित और एक साहित्यकार की दृष्टि में अगोचर थे। स्वतंत्रता मिलने के बाद इसकी आवश्यकता भी थी। कारण हमारे पर्वतों की उपत्यकाओं और उनकी छाया में पले ग्रामों के निवासियों के जीवन और संस्कृति का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करना नितान्त आवश्यक है। हमारी सांस्कृतिक विरासत को इन्हीं ने अछूते कौमार्य की भाँति सुरक्षित रखा है। उनकी उपेक्षा कर कोई भी देश प्रगति नहीं कर सकता। सांस्कृतिक तत्वों को सामने रखने की जिम्मेदारी साहित्यकारों की है और यह कार्य अपने हाथ लेकर हिन्दी के साहित्यकारों ने एक स्वाधीन देश के चेतन प्रहरी का कर्तव्य पूरा किया है। इस दृष्टि से ऐसे साहित्यकार अभिनन्दनीय हैं। लेकिन जो प्रयास अब तक इस दिशा में हुए हैं, वे पर्याप्त नहीं हैं। उन्हें प्रारम्भ मात्र माना जा सकता है। इस मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ हैं, जिनमें सबसे बड़ी कठिनाई अर्थ की है। जब तक एक साहित्यकार चूल्हा-चक्की की शंशट से मुक्ति नहीं पा जाता, तब तक वह न तो ऐसे क्षेत्रों में जा सकता और न वहाँ का अध्ययन ही कर सकता है। इसके लिए इस देश की साहित्यिक संस्थाओं और राज्य तथा केन्द्रीय सरकारों को सहायता करनी चाहिए।

मुझे मध्यप्रदेश, उड़ीसा, और बिहार की अनेक आदिम जातियों को निकट से देखने-परखने का अवसर मिला है। उनके अनोखे रीति-रिवाजों, उनकी असम्भव-सी प्रतीत होनेवाली मान्यताओं तथा उनके सुदृढ़ सामाजिक जीवन ने मुझे आकर्षित किया है। और प्रस्तुत कथा-संग्रह की कथाओं के माध्यम से मैंने उन्हें सानने रखने का प्रयत्न किया है। ये

सारी कथाएँ हिन्दी की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। कुछ आकाशवाणी से प्रसारित भी हुई हैं। इन्हें जिन कृपालु पाठकों और सम्पादकों ने पसन्द किया है, उन सबका मैं आभारी हूँ। प्रायः प्रत्येक कथा के छपने के बाद मुझे उनके अनेक पत्र मिले हैं, जिनमें उन्होंने कृपापूर्वक कहानियों की सराहना की है। यह उनकी उदारता है।

इस संग्रह की दो कथाएँ ऐसी हैं, जिन्होंने मेरे उपन्यासों में पृष्ठभूमि का काम किया है। “जलता सूरज” मेरे उपन्यास “सूरज किरन की छाँव” के प्रथम अंश का संक्षिप्त रूप ही है। उसी तरह दूसरा उपन्यास “भूमकाल” लिखने की प्रेरणा मुझे “चाँद के पीछे : चाँदनी के नीचे” कहानी से मिली थी। “ऊसर खेत” को पढ़कर एक मित्र ने यह आरोप किया था कि यह सर्वथा काल्पनिक घटना है। ऐसी कोई घटना बस्तर में कभी नहीं हुई। सच तो यह है कि बस्तर में ऐसी घटनाएँ होती रही हैं और सन् १८८० के लगभग यह घटना घट चुकी है। इसके सम्बन्ध में वहाँ के सरकारी रिकार्ड देखे जा सकते हैं।

इन कथाओं की अपनी एक लम्बी कहानी है। वह सब यहाँ बताना सम्भव तो नहीं है, किन्तु इतना अवश्य बता देना चाहूँगा कि इस कहानी का आरम्भ “लमसेना” के छपते ही हुआ था। “लमसेना” हिन्दी की लोकप्रिय मासिक पत्रिका “सरिता” में छपी थी। वह क्या छपी जैसे एक बवण्डर आ गया। मेरे एक मित्र (!) इसे सहन नहीं कर सके। फल यह हुआ कि बाध्य होकर “लमसेना दम्पति” को कोर्ट जाना पड़ा। कुछ माह यह मामला पत्रों में चर्चा का विषय बना रहा। मैं चाहता था कि वह पूरा चले। कारण इस मामले में स्वयं मुझे नये-नये अनुभव तो मिल ही रहे थे, उन मित्र के सम्बन्ध में भी अनेक रोचक तथ्य मेरे सामने आते जा रहे थे। पर खेद है उन्होंने मुझसे कोर्ट में क्षमा माँग ली और यहाँ-वहाँ से मुझ पर अनेक दबाव भी डलवाए। विवश हो मुझे अपनी इच्छाओं का शमन करना पड़ा। उसके बाद एक और मित्र ने (!) मेरी कथाओं के सम्बन्ध में दो-तीन जगह लेख लिखे। लेखों में

इस संग्रह की कुछ रचनाओं की उन्होंने तीव्र आलोचना (शायद बिना पढ़े ही) की और मेरे प्रति उनके मन में जितनी भी सद्भावनाएँ (!) थीं, सब उन्होंने उगल दीं। उनके आक्षेपों का उत्तर अन्य पाठकों ने ही दे दिया और मैं इस पूरे विवाद में एक दर्शक मात्र ही बना रहा। मैं अपने उन मित्र का यहाँ आभार मान लेना अपना कर्तव्य समझता हूँ, कारण, संघर्ष में मेरा विश्वास है। उससे हमें नयी जिन्दगी मिलती है, कार्य करने की शक्ति आती है और यदि हमारा जीवन संघर्ष से दूर हो जाय तो शायद उससे जीवन-तत्त्व ही धीरे-धीरे दूर होने लगें। मेरा विश्वास है कि ऐसी भी कोई आलोचना जो बालू की नींव पर खड़ी होगी, अधिक नहीं ठहर सकेगी। उक्त मित्र ने मुझ पर यह आक्षेप लगाया था कि मैं अपने को एक 'क्षेत्र विशेष' का विशेषज्ञ घोषित करता हूँ। मैंने आज तक ऐसा दावा कभी नहीं किया। कर भी नहीं सकता। विशेषज्ञ बनना सहज बात नहीं है। जो हैं, जब उनसे अपनी तुलना करता हूँ तो मैं उनके चरणों की धूल के योग्य भी अपने को नहीं पाता। अतः ऐसा झूठा अहम् न मैंने कभी किया है और न ऐसी मेरी झूठी भावना ही रही है।

मैं बचपन से देहात में रहा हूँ। अपने माता-पिताजी के साथ रहते वहाँ जो देख सका हूँ, तब से जब कि मैं बोल भी नहीं सकता था, वही मैंने अपनी कलम के सहारे अपनी सामर्थ्य के अनुसार यहाँ उतारने का यत्न किया है। जितना मुझसे बन सकेगा, आगे करता जाऊँगा।

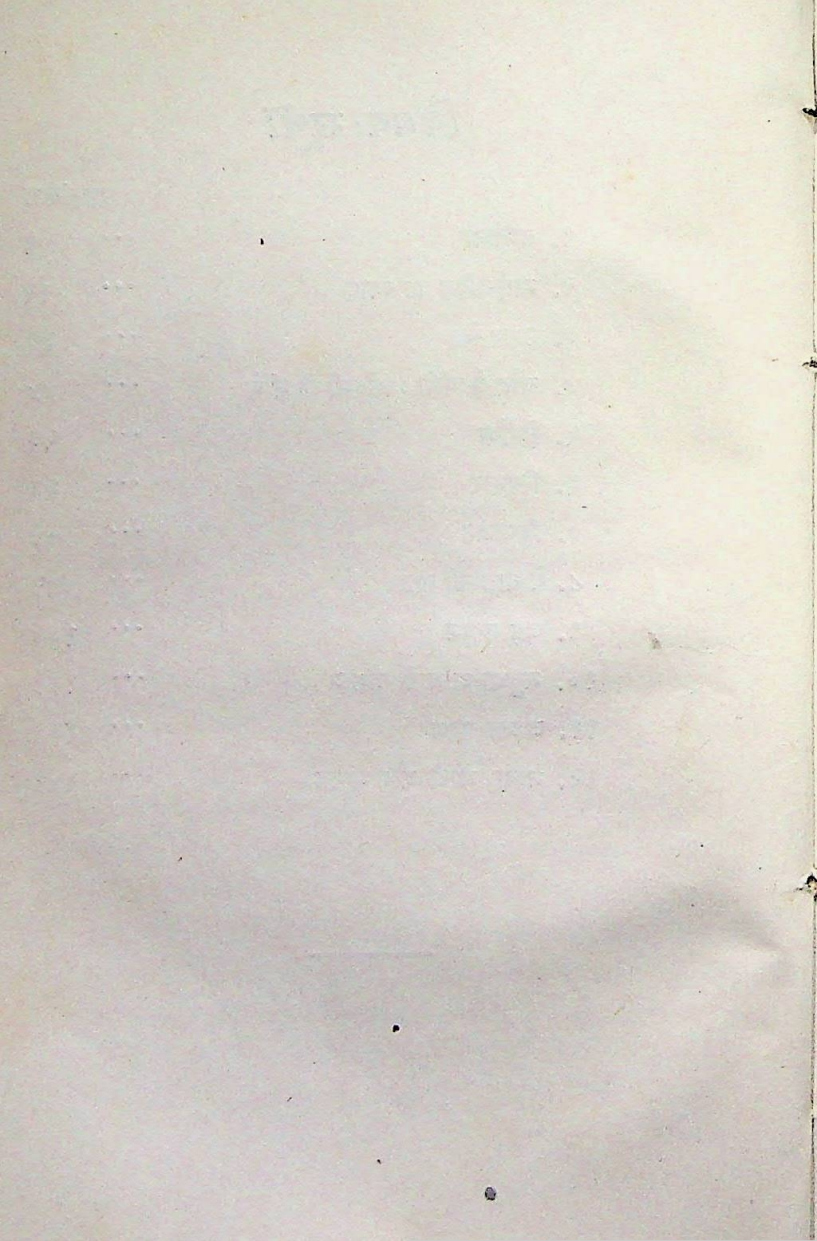
अभी तक जो कुछ मैंने लिखा है, उसे मेरे पाठकों ने सराहा है, यह उनकी गुणग्राहिता है। उन सबके सामने मैं नतमस्तक हूँ और उनसे आशीर्वाद की कामना करता हूँ कि आगे उन्हें मैं वह दे सकूँ जो वास्तव में देना चाहता हूँ। इससे अधिक और क्या? अब तो ये कथाएँ आपके हाथ हैं। आप जैसा चाहें, इनके साथ व्यवहार करें।

“नवभारत” (दैनिक)
नागपुर-२

—राजेन्द्र अवस्थी “तृषित”

विषय-सूची

	पृष्ठ संख्या
१. लमसेना	... ९
२. भाई-बहिन का ब्याह	... २२
३. ऊसर खेत	... ३६
४. चाँद के पीछे : चाँदनी के नीचे	... ४४
५. हिरौंदा	... ५३
६. सिरदार	... ६६
७. विभाजन	... ७४
८. वे बात की बात	... ९२
९. जड़ बन्धन	... १०४
१०. महुआ-आम के जंगल	... ११८
११. जलता सूरज	... १३३
१२. माया, माटी और मानव	... १४१



१. लमसेना

सरसों-सी फूली और उजली दुपहरी ढलकर स्याह पड़ गई थी। मँगरू काँधे पर हल रखे और हाथों में बैलों की डोर थामे गाँव के गेंवडे की ओर बढ़ा आ रहा था। फुलिया हाथ में गुलेल लिए आँगन में खड़ी थी। कभी वह खाली गुलेल चारों ओर हिलाती, तो कभी उसमें पत्थर लगाकर बाँसों के झुरमुट में दे मारती। संध्या की हवा जैसे बाँसों के झुरमुट में छिपी गीत गा रही थी। फुलिया का पत्थर उसमें वेदना भर देता और सारा झुरमुट एकदम कराह उठता। पर इस कराह की फुलिया को चिन्ता कहाँ ! वह एक नादान बच्चे की भाँति गुलेल और पत्थर के साथ खेल रही थी। अभी उसके दिन ही तो खेलने के थे। उमर कोई सोलह वर्ष से अधिक नहीं होगी। धुएँ की हलकी परत की तरह साँवले, गठे और ठिगने बदन में बच्चों जैसी अल्हड़ता और चपला जैसी चपलता भरी थी। घुटने तक वह धोती पहने थी। सीने पर ओढ़नी का बच्चा छोटा-सा छोर पड़ा था, जिसमें से एक स्तन तो एकदम खुला और दूसरा आधा ढँका था। किन्तु इस खुले और ढँके का भेद फुलिया क्या जाने ? यह भेदभाव तो किसी शहर की लड़की में ही देखने को मिलता है। गाँव की खुली हवा में पली फुलिया तन-मन दोनों से साफ थी।

वह आँगन में खड़ी गुलेल के साथ खेलती रही। पक्षियों के झुंड के झुंड आए, उसके सिर से उड़कर चले गये, पर उसका खेल खतम नहीं हुआ। उसे यह भी पता नहीं कि मँगरू ने बैलों की डोर छोड़ दी है।

और वह काँधे पर हल रखे गेंवड़े के पास पगडण्डी पर खड़ा उसे घूर रहा है। मँगरू आत्मविस्मृत था। खिरका पहिले ही निकल चुका था। चरवाहों की भीड़ भी पीछे से निकल गई, पर वह खड़ा रहा। अबकी बार फुलिया ने फिर गुल्ले में पत्थर रखकर बाँस के छुरमुट का निशाना लगाया, पर वह मँगरू के माथे से जा टकराया। मँगरू का तन-मन काँप गया और मुँह से एक हलकी चीख निकल गई।

इस चीख ने फुलिया की मुद्रा भंग कर दी। उसका मुँह खुला और थोड़ी देर खुला रहा। अंगों में जाड़े जैसी सिरहन उठी, पर वह अपनी जगह से नहीं हटी। मँगरू ने कपाल पर हाथ फेरा और हथेली को जोर से चूम लिया।

“क्यों रे, यहाँ खड़ा-खड़ा क्या देख रहा है?”—फुलिया को इस चुम्बन से जैसे जलन हुई।

“वाह री बुलबुल, सड़क पर बैठकर आँख दिखाना इसी को कहते हैं। पत्थर मार दिया मेरे माथे पर—कहीं भाग फूट जाते तो।”

“तेरे भाग और क्या फूटते रे मँगरू, वैसे ही फूटे हैं। दिन-रात पतंगे की तरह मेरे चक्कर काटा करता है। गाँववालों को खबर लग जायगी तो किरकिरी मेरी होगी। तुझे क्या है, लोग कहेंगे...”

“कि फुलिया मँगरू से आँख लड़ा रही है—यही न?”—उसके मुँह के शब्द छीनकर मँगरू ने पूरे कर दिए—“पर इसमें डर काहे का है? सब जानते हैं कि तेरी मेरी लगी है।”

मँगरू ने कन्धे से हल नीचे उतार दिया और दो कदम आगे आकर खड़ा हो गया—“तू मेरे दिल का दर्द क्या जाने फुलिया। मैंने सुना है कि औरत बड़े नरम दिल की होती है—तू कैसी औरत है री।”

“देख रे मँगरू, दिल और दर्द का किस्सा किसी और को जाकर सुना। तूने सुनी होगी औरत के नरम दिलवाली बात, पर अब मैं दिखाए देती हूँ कि औरत का दिल पत्थर होता है। तू जाता है यहाँ से, या नहीं।”—फुलिया ने आगे बढ़कर जो दाँत पीसे तो मँगरू दो कदम

पीछे हट गया ।

“काहे को आँखें तरेरती है, छोकरी ! तू खाद पड़े खेत में पके गेहूँ की बाल है, फुलिया न जाने किस दिन कहाँ से हवा का झोंका आये और तुझे उड़ाकर ले जाए । तू तो जानती है, मेरे बाप की बहिन की मझली लड़की तेरे भाई के साथ ब्याही है । तू सीधे-सीधे मुझसे ब्याह करने की हामी भर दे, वरना पंचायत भराऊँगा और दूध लौटाने की बात करूँगा । दो बरस तेरे घर रहकर घास थोड़े छीली है । जाने उस कलूटे चैतू में क्या धरा है जो तू उस पर मरी जाती है ।”

अबकी बार फुलिया अपने गुस्से को नहीं सम्हाल सकी । उसने एक बड़ा पत्थर उठाया और बोली—“भागता है कि मारूँ ? हरामखोर, तू कहाँ का दूध का धुला आ गया है ।” फुलिया मनमानी गालियाँ देती रही ।

मँगरू दाँत पीसता वहाँ से चला गया—“देखूँगा, आखिर घोटुल छोड़कर जायगी कहाँ ?”

आधी रात को फुलिया की नींद खुली । उसने बाहर एक हलकी-सी थपथपाहट सुनी जैसे किसी ने दरवाजा खटखटाया हो । उसने उठकर दरवाजा खोला तो चैतू आँगन में खड़ा था । रात अँधेरी थी, आसमान की छाती पर अनगिनत तारे चमक रहे थे और सामने झुरमुट के आसपास चमगादड़ों के झुण्ड-के झुण्ड चक्कर काट रहे थे ।

“इत्ती रात को ?”—फुलिया ने चैतू का हाथ थामा और उससे लिपट कर खड़ी हो गई ।

१. भारत के अनेक आदिवासियों में यह प्रथा है कि यदि एक परिवार की लड़की दूसरे परिवार को दी गई है, तो लड़की देनेवाले परिवार को अधिकार है कि वह उस दूसरे परिवार की किसी लड़की से शादी कर ले—मरजी से नहीं तो जबरन ही, इस प्रथा को “दूध लौटाना” कहते हैं ।
२. घोटुल—अर्थात् कुमार-गृह, जहाँ गाँव के कुमार युवक और युवतियाँ रात में विश्राम करते हैं । बस्तर, बिहार और उड़ीसा के गोड़ों में घोटुल में सोने का आम रिवाज है ।

“हाँ फुलिया, चैन नहीं पड़ा तो चला आया अपनी गोरी से मिलने।”

फुलिया शरमा गई। बोली—“ऐसी रात को भी कोई बाहर निकलता है? तू जानता है न, चैतू, कल नाले के पास बाघ पटेल के लड़के को उठा ले गया था?”

“मुझे भी उठा ले जाता तो कितना अच्छा रहता फुलिया।”

फुलिया ने अपनी हथेली चैतू के मुँह पर रख दी—“ऐसा मत कह, मुझे बाघ ले गया तो मेरा क्या होगा?”

“तू तो मँगरू के साथ जायगी।”

“क्या कहा, मँगरू के साथ? उस कलमुँहे का नाम न ले चैतू। आज संज्ञा को आया था। बड़ी देर खड़ा-खड़ा मुझे घूरता रहा। कहता था, मेरे साथ ब्याह कर ले, दर्ईमारा कहीं का।”

“ठीक तो कहता था फुलिया। तू उसकी धरोहर जो ठहरी। मेरे यहाँ भी आया था वह, और पंचायत भराने की धमकी देता था। कहता था फुलिया का ख्याल छोड़ दे, नहीं तो...”

“नहीं तो क्या?”—फुलिया ने व्यग्रता से पूछा।

“कहता था पंचायत भराऊंगा और दूध लौटाने की बात तेरे बाप से करूँगा। फिर वह तेरे यहाँ लमसेना भी तो रहा है। कहता था, दो बरस तक छाती फाड़ कर दिन-रात काम किया है और बाद में एक दिन तेरे बाप ने डंडा मार कर उसे निकाल दिया।”

“निकाल न देता तो क्या उसका अचार बनाकर रखता? हरामजादा, बाजार गया तो व्रैलों की जोड़ी बेच आया। मैंने कहा था, मेरे लिए एक धोती और कण्ठी ले आना, तो कुछ लाना-वाना तो दूर रहा, शराब पीकर लौटा और लगा मुझे मारने, जैसे मैं उसकी रखैल होऊँ। मेरा खाता था और मुझे ही मारता था। जब अपनी कमाई खिलाएगा तब तो शायद मेरे शरीर के ही टुकड़े-टुकड़े कर डाले।” फुलिया ने अपनी दाईं मुट्ठी बायें हाथ की हथेली से दबाकर दाँत पीसे—“नास हो जाय

कलमुँहे का । मैं तो उसकी सूरत भी नहीं देखना चाहती ।”

“नहीं फुलिया, गाँव के पंच उसका साथ देंगे । दो साल काम लेकर निकाल देना सहज नहीं है ।”

“सहज क्यों नहीं है ? देखा नहीं, पटेल ने चार बरस के लमसेना को लोहे की गरम-गरम सलाखों से पिटवाकर निकाल दिया ।”

“उसकी बात छोड़ फुलिया । हम गरीब आदमी हैं । पटेल जैसे समर्थ होते तो ••।”

“तो क्या तू भी उसकी धमकी में आ गया । दिल तो गरीब-अमीर का एक-सा ही होता है न ? भरोसा न हो तो एक दिन मेरे साथ चल—छोटे पटेल का दिल तुझे दिखाऊँगी । वह मुझे बहिन जो मानता है ।”

“तू भी पागल जैसी बातें करती है । हम दिल देखने चलेंगे ?”

“तुझे भरोसा तो हो किसी तरह ।”

“भरोसा क्या करूँ । एक दिन कह रहा था कि पंचों ने भी यदि ठीक फैसला नहीं दिया तो नाले के किनारे मुझे और तेरे बाप को जिन्दा गड़वा देगा ।”

फुलिया ने कान में हाथ लगा लिए—“ऐसा मत कह चैतू । तू भी तो पिछले साल शेर से लड़ा था, और हाँ, कितना भारी सुअर था वह जिसे तूने अभी-अभी जंगल में पछाड़ दिया । अपनी भुजाओं पर भरोसा रख और यदि तुझे ऐसा ही डर है तो घोटुल का मुंशी कहाँ गया है । कल हम उससे कह देंगे कि ब्याह करना चाहते हैं । वस, फिर क्या है, हमारा ब्याह हो जायगा ।”

“कल मत कहियो फुलिया । मैं तो अपनी काकी के यहाँ जाने का बहाना बनाकर आज रात घोटुल नहीं गया ।”

उसकी बात पर फुलिया ने कोई आश्चर्य नहीं दिखाया, बोली—“सो तो मुझे पता था इसीसे मैं भी घोटुल नहीं गई, वहाँ मँगरू जो मिलता—पर मेरा करता क्या ?” उसने भूखी शेरनी की तरह अपने दाँत पीसे जैसे मँगरू को सामने पा ले तो कच्चा खा जाय ।

“अच्छा फुलिया, तो मैं अब जाता हूँ। भुनसारा होने आया है, सीधे खेत चला जाऊँगा।” फुलिया ने उसे रोका—“अभी तो अंधेरा है चैत।”

“नहीं फुलिया, नाले में मुँह-हाथ धोते तक उजाला हो जायगा।”

चैत चला गया और फुलिया लौटकर खटिया पर लेट गयी, पर उसे नींद नहीं आई। उसे वह दिन याद आ गया जब दादर गाँव के माल-गुजार का खेत काटने वह गई थी।

बरस भर पहिले की बात है। मँगरू तब उसके यहाँ लमसेना था। वह उस पर मरा जाता था। शुरू-शुरू में फुलिया ने भी उसकी खूब आवभगत की। दोनों में बड़ा प्रेम रहा, पर एक दिन बाजार से लौटकर जब उसने फुलिया को मारा तो फुलिया का मन फटे दूध जैसा हो गया। अब फुलिया मँगरू को देखते ही नाक-भौंह सिकोड़ने लगी। मँगरू उसे लगातार मनाता रहा, पर फुलिया न मानी। इस बार खेत काटने जब वह दादर गाँव गई तो साथ में मँगरू को नहीं ले गई।

गंगा सागर बाँध गेहूँ की पकी बालियों से लदा था। हवा का झोंका जब उस भारी बाँध से गुजरता तो समुद्र की तरह सारे खेत में एक लहर-सी उठ जाती और लगता जैसे किसी ने सोने की चादर हिला दी हो। तब फुलिया का कलेजा कसक उठता था। उसकी हिरन की तरह खेलती-खाती जिन्दगी जैसे कराह उठती थी। वह खेत के चारों ओर नजर डालती। झुण्ड-के-झुण्ड औरत और मर्द उसे दिखाई देते, पर आँखों की प्यास न बुझती।

एक दिन चैत की धूप उस सोने के खेत में अचेत पड़ी सो रही थी और हँसिए की पैनी धार गेहूँ के पौधे को जमीन पर सुला रही थी। फुलिया भी एक हाथ से पौधों को थामती और दूसरे हाथ का हँसिया किसी कसाई की तरह उन पौधों पर चला देती। गीतों की धुन से सारा खेत गूँज रहा था। एक गीत खतम होता तो कोई खड़ा होकर दूसरा

शुरू कर देता, इसलिए कि गीत उनकी जिन्दगी है और धूप तथा मिह-
नत से उन्हें बचाता है। फुलिया के मन में भी उमंग उठी। हँसिया
हाथ में लेकर वह खड़ी हो गई। पुरवाई के झोंकों से उसका आँचल
ढोल उठा। उसके हृदय के तार जैसे किसी ने छेड़ दिए। वह लचक-
लचक कर करमा की धुन में गा उठी :

ओ हो ! हाय रे हाय,

मोला पयरी के साध,

लय दे, हीरा रुनझुन बाजै रे।

गीतों को सारे साथियों ने दुहराया। इसी बीच मेंड पर खेत काटते
एक युवक पर फुलिया की नजर पड़ी। वह पसीने से लथपथ था और जब
सब लोग गीत गा रहे थे तो वह चुपचाप फसल काटने में लगा था।
फुलिया के उमंग भरे मन ने यह सहन नहीं किया। उसे लगा, जैसे यह
युवक उसके गीत के साथ विद्रोह कर रहा है। उसने मिट्टी का ढेला
उठाकर उसकी ओर फेंका और फिर अपनी कमर पर लचक देकर हवा के
साथ झूलती हुई आगे गाने लगी। अब की बार उस किसान युवक का
मन भी बवाँडोल हो गया। भर्राई-सी आवाज में उसने भी उत्तर के स्वर
छेड़ दिए :

पयरी के तोरा साध गोरी,

हीरा मोर रुनझुक बाजै रे।

गीत सुनकर फुलिया का तन-मन सूरजमुखी की तरह खिल उठा
और इसी खुशी में उसने करमा की कई धुनें छेड़ीं, जिनका उस युवक
ने बराबर जवाब दिया। यह रफ्तार चलती ही रहती यदि फुलिया
मालिक के लड़के को आते न देखती। उसे आते देखकर वह बैठ गई
और फिर तेजी से फसल काटने लगी, पर मन उसका उस बाँके युवक
ने हर लिया था। बार-बार वह उस पर नजर डालती और वह युवक भी
नीची नजरों से उसे घूरता रहा।

फुलिया ने फसल काटने की दिशा बदल दी और उसकी ओर बढ़ी। जब वे दोनों काफी पास आ गये तो फुलिया ने बड़ी चपलता से पूछा—“तुझे तो खूब करमा आते हैं रे ?”

“क्यों नहीं ! तेरी सूरत देखकर कौन न गा उठेगा !”

“सच,”—फुलिया खरगोश के बच्चे की तरह उचकी—“मेरी सूरत पसन्द है न ?”

उत्तर में मुँह बनाकर चैतू ऐसा हँसा कि उसकी हँसी फुलिया के कलेजे में तीर की तरह जा चुमी। वह एक हाथ आगे सरककर बोला—“तेरा नाम ?”

“फुलिया, और तेरा ?”

“चैतू”—वह बोला।

“इसी चैत में हुआ था ?”

चैतू ने उसकी शरारत भाँप ली—“हाँ, अभी घंटे भर पहिले। कहाँ रहती है ?”

“कोटरवाही, और तू ?”

“कोटरवाही, वहीं तो मैं भी रहता हूँ। किसकी लड़की है ?”

“सुरूआ मेरा बाप है। तू कभी घोड़ल नहीं आता ?” फिर फुलिया ने चुटकी ली। “हाँ, समझी—मिहरिया होगी घर में। मारती है कभी ?”

चैतू ने उसके जूड़े को पकड़कर धुमा दिया। फुलिया काँख उठी।

“देखा नहीं, अभी मिट्टी का ढेला उठाकर मारा था उस चुलबुली मिहरिया ने।”

फुलिया के साँवले गाल शरम के मारे गेहूँ जैसे लाल हो गये। शरारत भरी आँखें नीचे झुक गई—“देख लेगी तो सिर के बाल न बचेंगे। पराई लड़की से आँखें लड़ाता है।”

“देख लेने दे—तेरी बला से।” चैतू ने कहा।

फुलिया थोड़ा पास सरकी—“सच बता रे, चैतू, मिहरिया है ?”

“कहा तो—हाँ है। अभी मिट्टी का ढेला मार रही थी। शायद वह नहीं जानती कि चैतू भी पत्थर है।”

“चैत का पत्थर किस काम का, जिस पर पैर रखो तो जल जाए। उसे तो पानी चाहिए, चैतू।”

“पर पानी देनेवाली हो तब न।”

चैतू की इस बात से फुलिया का रास्ता जैसे साफ हो गया।

“समझी।” उसे जैसे किसी पहेली का सही हल मिल गया—“पर तू घोड़ल क्यों नहीं आता? लमसेना है कहीं?”

“मुझ गरीब को कौन लमसेना रखेगा, फुलिया—” चैतू ने लम्बी साँस ली।” बाप तो छोटे में परलोक सिंघार गया, माँ अपने रखैल के साथ रहती है। अकेला हूँ घर में। सब काम-धाम अकेले करना पड़ता है। घोड़ल आने की फुरसत ही नहीं मिलती। पर मुंशी के रजिस्टर में नाम लिखा है मेरा।”

“सच? तो मैं तुझे फुरसत दूँगी। रोज घोड़ल आया कर।”

फुलिया और चैतू का यह प्रथम परिचय क्रमशः खूब बढ़ा और फिर यह हालत हुई कि फुलिया अपने लमसेना मँगरू के लिए नागिन बन गई। अपने बाप से उलटी-सीधी चुगली खाकर वह दिन में दो-एक बार उसे पिटवा दिया करती, पर मँगरू ने फुलिया का पीछा नहीं छोड़ा।

शाम को गले में घुँघची की माला, चाँदी के सिकों का हार, हाथ में लाल-पीली चूड़ियाँ, रंग-विरंगी लाखें तथा चाँदी के चूरा और पैर में गिल्ट की पायल डाले और कौड़ियों के गुच्छों से सजी हवा में नागिन की तरह झूलती बेनी लटकाए फुलिया घोड़ल की ओर इस चाल से चली कि जो उसे देखे एक बार मन में साँप लोट जाये।

घोड़ल में उसका आज आखिरी दिन था। वह अपने मँगैतर को चुनेगी और फिर कल से घोड़ल का प्रवेशद्वार उसके लिए सदा को बन्द हो जायेगा। पयरी की उसकी साध पूरी होगी। यह एक ऐसा दिन होता है जो कुमारी के जीवन का इतिहास बदल देता है, उसकी जिन्दगी की

गोड़ी में बैल लग जाते हैं, तब उसकी चाल बढ़ जाती है ।

घोटुल में सखियों ने फुलिया का दिल खोलकर स्वागत किया । छैल-छवीले और बने-ठने नवजवान लड़कों ने भी फुलिया के हाथ चूमे । घोटुल के मुंशी ने उसको आशीर्वाद दिया और फिर सब लोग आग की धूनी को घेरकर बैठ गये । फुलिया ने देखा, चैतू एक कोने में बैठा हँस रहा है । वह खुशी से फूल गई ।

मुंशी की मरजी के अनुसार पहले एक-दो करमा की धुनें हुईं और फिर सारी सखियों ने मोटियारी (घोटुल की वह युवती जो वर चुनने के लिए शृंगार करके आती है) के वालों में लकड़ी की कंधियाँ खोंसाँ । जब यह सब चल रहा था तो मँगरू भी वहाँ आ धमका और धूनी के पास बैठ गया । मँगरू को देखकर मोटियारी का कलेजा काँपा, चैतू भी धवराया, पर किसी ने कुछ पता नहीं लगने दिया ।

अन्त में आशा और उमंग से हाथ में काड़ियों की माला लिये फुलिया उठकर खड़ी हो गई । सारे चेलिकों (घोटुल के कुमार सदस्य) के मन में जैसे काँटा गड़ने लगा । वह सब को तम्बाकू बाँटेगी, और जिसे तम्बाकू नहीं देगी वही उसका मँगेतर समझा जायगा । इसी से सारे चेलिकों की आँखें फुलिया पर गड़ी थीं । मँगरू को भरोसा था कि फुलिया उसके साथ चाहे जैसा व्यवहार करे, पर फिदा वह उसी पर है । उसी को वह माला पहनायेगी । उसने अपने सारे मित्रों को दावत दे रखी थी । जो थोड़ा-सा संशय उसके मन में था, उसकी दवा भी मँगरू कर चुका था । आखिर दो साल फुलिया के साथ उसने काटे हैं, वह सहज ही उसे कैसे छोड़ देता । उसने गाँव की पंचायत के पंचों से भी बात-चीत कर ली थी ।

फुलिया ने तम्बाकू बाँटना शुरू किया । सब को तम्बाकू बाँटते-बाँटते जब वह मँगरू को भी देने लगी तो उसकी सुप्त हिंसा जाग उठी । क्रोध से वह तमतमा उठा । उसने फुलिया का हाथ पकड़कर सारी तम्बाकू छीनकर फेंक दी ।

घोटुल में हंगामा मच गया। मुंशी ने फुलिया और मँगरू को अलग अलग किया और कहा, “भाई इसमें झगड़े की क्या बात है। वह चैतू को चाहती है तो तू क्यों बीच में आता है।”

मँगरू लाल-पीला हो रहा था, “यह नहीं हो सकता। मैंने पंचायत बुलाई है, फैसला पंचायत करेगी।” बहुत चें-चें हुई पर मँगरू अपने साथ पलटन जो लाया था—फुलिया चैतू को माला न पहना सकी और मुंशी ने पंच-फैसला होने तक समारोह स्थगित कर दिया।

गाँववालों के लिए पंच परमेश्वर होते हैं। उनका न्याय भला-बुरा चाहे जैसा हो, सभी को सिरमाथे चढ़ाना पड़ता है। इसीलिए फुलिया, चैतू और मँगरू आँख लगाये पंचों की ओर देख रहे थे। पंचों ने फुलिया के बयान सुने और फिर मँगरू की वारी आई। मँगरू ने पहले दूध लौटाने की बात कहकर अपना रोब गालिब किया, पर फुलिया के बाप ने इस हक को स्वीकार नहीं किया। तब मँगरू ने लमसेना की बात उठाई। दो साल लमसेना रखने का हरजाना माँगा। फुलिया, उसके बाप नरसू और चैतू सभी ने अपनी सफाई पेश की।

फुलिया का बाप दुविधा में पड़ा था। उसके सामने विकट उलझन थी। मँगरू उसके यहाँ दो साल लमसेना रहा, पर दो सालों में दोनों के बीच खाई पड़ चुकी थी। मँगरू ने उसका बड़ा नुकसान किया था और अपने चरित्र से उसका मन खट्टा कर दिया था। नरसू अपनी इकलौती बेटी की मरजी को भी नजर अंदाज नहीं करना चाहता था। चैतू गरीब परिवार का सीधा-सादा मेहनती नवयुवक था। फुलिया और चैतू प्यार के धागे में बँध चुके थे।

समस्या यहीं खतम नहीं हो जाती। यदि मँगरू को उसने फुलिया नहीं दी तो उसे हरजाना देना पड़ेगा और हरजाना भी पंच न जाने कितना लगायें। उतना पैसा देने की सामर्थ्य उसमें होगी? क्या चैतू हरजाना दे सकेगा?

अंत में जिसकी आशंका थी हुआ भी वही। पंच-फैसला सुनाया

गया। पंचों ने राय दी कि फुलिया चैतू से ब्याह कर सकती है, पर फुलिया के बाप को मँगरू के लमसेना का हरजाना देना पड़ेगा और दूध लौटाने की या तो कीमत चुकानी पड़ेगी अथवा किसी दूसरी लड़की का ब्याह मँगरू से या उसके किसी भाई से करना पड़ेगा।

यह फैसला फुलिया के बाप के लिए बड़ा कड़ा था। फुलिया उसकी इकलौती बेटी थी, और कोई लड़की होती तो नरसू वह भी कर देता। पंचों ने लमसेना की कीमत दस रुपये महीने के हिसाब से दो सौ चालीस आँकी थी। दूध न लौटाने की स्थिति में उसे जातवालों को भोज देने और बड़ा महादेव की पूजा का विधान बताया था। उसका सिर चक्कर खाने लगा।

फुलिया की आँखें जैसे पथरा गई थीं। वह एकटक चैतू को देख रही थी। वह सोचती, पंचों को क्या अधिकार है कि वे उसका प्रेमी छीनें? पर कहने की सामर्थ्य उसमें नहीं थी। शायद वह जानती थी कि कहने से क्या होगा, समाज की अंध मान्यताओं में सारा गाँव जकड़ा है। फिर उसमें अकेले विद्रोह करने की शक्ति ही कहाँ है। सच तो यह है कि विद्रोह की भावना न तो फुलिया के मन में और न चैतू के ही मन में थी। युगों से चले आ रहे बंधनों में जकड़े हुए ये मोलेभाले युवा हृदय भला विद्रोह क्या जानें। वे सिर्फ पंचों को ईश्वर जानते थे और उनकी व्यवस्था को ईश्वर का न्याय मानते थे। इस न्याय को पलटने की हिम्मत वे नहीं कर सकते थे।

फुलिया घबरा रही थी—उसका चैतू आज उससे छिन रहा था। बीते जमाने की स्मृतियाँ उसकी आँखों के सामने नाच रही थीं। चैतू सिर नीचा किए चुपचाप बैठा था। वह सोच रहा था कि क्या करे? इतना रुपया कहाँ से लाए? घर-द्वार होता तो शायद वह उसे भी बेच देता, पर एक टूटी-सी झोपड़ी का मोल पचास रुपये से अधिक क्या होगा। और मँगरू? वह विजेता की तरह सीना ताने हँस रहा था। उसकी आँखें उस शिकारी की भाँति चमक रही थीं जिसके हाथ मनचाहा

शिकार लग गया हो । उसे विश्वास था कि पंच-फैसले की पूर्ति करना उनके लिए असंभव है ।

नरसू ने अपनी हताश दृष्टि चैतू पर डाली, तो चैतू की आँखों में आँसू आ गए । वह वहाँ से उठकर चला गया । फुलिया फफक-फफक कर रो पड़ी ।

तभी घोड़ल के मुंशी ने घोषणा की कि शाम को फुलिया और मँगल का घोड़ल से संबंधविच्छेद होने की खुशी में एक भारी समारोह होगा ।

२. भाई-बहिन का ल्याह

आसमान की छाँह ने जब नीचे उतरकर धरती और आकाश को एक में मिला दिया तो सारा गाँव खिरके की धूल से सराबोर हो गया। जैसे सोता बालक एकदम चौंककर जाग उठे, गाँव भर में चहल-पहल मच गई। जानवर भी जैसे आदमी से बातें करने लगे। सारे जानवरों को गेंवड़े में छोड़कर जेठिया ने सन्तोष की साँस ली और अपने जुड़वाँ बैलों को पास के नाले से पानी पिलाकर घर की ओर बढ़ी। यह उसका प्रतिदिन का नियम था लेकिन आज न जाने क्यों उसे सब तरफ एक अजीब परिवर्तन-सा नजर आ रहा था। गाँवभर के स्त्री-पुरुष जैसे आँख फाड़-फाड़कर जेठिया को निहार रहे थे। सबकी आँखों की पुतलियाँ एक ही तरह से तनी थीं, जैसे उन सबका एक ही प्रश्न हो। जेठिया यह परिवर्तन बड़े आश्चर्य से देख रही थी। उसकी समझ में यह नहीं आ रहा था कि उसकी सहेली—ढुलिया भी आज उससे क्यों नहीं बोली ? जब वह पीपल के पेड़ के नीचे पहुँची तो ढुलिया ने जेठिया को देखकर केवल मुसका दिया और उँगलियों से कोई अनजाना-सा इशारा कर अन्दर चली गयी। जेठिया उससे आकर लिपट जाती थी, जंगल की बातें बड़े प्यार से पूछती थी और उसके आँचल में बँधे चार, करौंदा, महुआ या तेन्दू के फलों को छिना लेती थी। उन्हें जब वह बड़े प्यार से चखती तो जेठिया मुसकाकर कह देती—“देख ढुलिया, तू अकेले सारे फल न

खा जाना, उन्हें भी देगी न ?” दुलिया लाल हो जाती और छुई-मुई होकर भीतर भाग जाती थी। आज सब कुछ बदला था, न उसने कुशलता पूछी और न पास आकर फल ही छीने। इससे जेठिया का चिन्तित होना स्वाभाविक था। कुछ सोचते वह थोड़ा आगे बढ़ी ही थी कि उसके पड़ोसी ताऊ ने रोककर कहा—“बेटी यह अच्छी बात नहीं है, जमाना खराब है, पैर सम्हालकर रखना चाहिए।” वह इन शब्दों का अर्थ क्या समझे, रुककर उसने पूछा—“तुम्हारा मर्म नहीं समझी ताऊजी।” बूढ़े ने अपनी काँपती गरदन हिलाकर कहा—“हाँ, मेरा मतलब काहे को समझने चली है, पर जो निकल आये,” और बूढ़ा आगे बढ़ गया। जेठिया ने चाहा कि वह लौटकर ताऊ से इस उपेक्षा का कारण पूछे, पर वह काफी आगे निकल चुका था, वह भी आगे बढ़ गयी।—यह सब देखते-सुनते जब वह घर पहुँची तो सन्न रह गई। उसकी माँ दुलारी दालान में बैठी सिसक रही थी। जेठिया ने दोनों बूँदों को सार में बिना बाँधे ही छोड़ दिया और माँ के पास जा पहुँची। जेठिया को देखकर दुलारी उससे लिपट पड़ी और अपनी गोद में भरकर जोर-जोर से रोने लगी। यह सब जैसे जेठिया की समझ के परे था, वह भौंचक्की तमाशा देख रही थी। थोड़ी देर यही चलता रहा—माँ रोती रही और बेटी फूस के घर का छप्पर एक टक निहारती रही। इसका भी अन्त हुआ, जेठिया ने माँ के आँसू पोंछे। माँ बोली—“देटी, कल भुनसारे सारा गाँव डण्डा लेकर बड़े सरकार की बखरी में धावा बोलनेवाला है। बड़े वीर के घर अभी पंचायत भरी थी, उसमें यह बात सब लोगों ने मिलकर तय की है।”

“बड़े सरकार की बखरी में !”—अनजाने ही जेठिया का मुँह खुला—“उसने गाँव का क्या बिगाड़ा है माँ ?”

जेठिया की इस अनावश्यक हमदर्दी ने माँ की ममता को सताई हुई नागिन की भयंकर फुसकार में बदल दिया। धक्का देकर गोद से उसे अलग करते हुए बोली—“अब तू दूध पीती छोकरी नहीं है, जेठी, इसका जवाब तो तू खुद अपने आप से पूछ। सारे गाँव की आँखों में धूल झाँककर

बड़े सरकार के साथ नाले के किनारे चुहल करते तुझे शरम नहीं आई। रहती है फूस की झोपड़ी में और सपना देखती है महलों का। कुछ अपनी और अपने बाप दादों की इज्जत का भी तो खयाल किया होता।”

सुनकर जेठिया के होश फाखता हो गये। रास्ते भर की सारी बदला-हट का मर्म वह बात की बात में समझ गई। नाले के किनारे की वह रंगीन दुनिया उसकी आँखों के सामने झूलने लगी। उसे याद आया, बड़े सरकार के साथ जब वह नाले के किनारे आँख-मिचौनी खेल रही थी तो आम के बगीचे के सूखे पत्ते एकाएक इस तरह सरसराये थे जैसे कोई भारी अजगर उनके ऊपर से निकल गया हो। उन दोनों ने चौंकर देखा तो वहाँ कोई आदमी नजर नहीं आया था, तब वह खूब खिलखिला कर हँसी थी और बड़े सरकार को न जाने कितने ताने दे रही थी—“डर-पोंक कहीं के, बस इतने-से ही घबड़ा गये। मेरे बाप ने तो घने जंगल में अकेले एक नरभक्षी शेर को अपने हाथों से मार डाला था और तुम सूखे पत्तों की सरसराहट से डर गये!”

बड़े सरकार ने कहा था—“ऐसी बात नहीं जेठी, यह सरसराहट साधारण नहीं हो सकती। देख न, सामने के झाड़ का एक पत्ता भी नहीं हिलता, जरूर कोई जासूस हमारे पीछे है।”

जेठिया ने अँगूठा दिखाते हुए कहा था—“लगा रहे, कलमुँहा क्या बिगाड़ लेगा हमारा?” पर बड़े सरकार तभी सहम गये थे और सिर-दर्द का बहाना कर वहाँ से भाग खड़े हुए थे। “अब क्या होगा माँ?”—जेठिया ने भय और उत्सुकता भरे शब्दों में पूछा।

माँ ने कहा—“होगा क्या, या तो गाँव भर मारा जायगा या बड़े सरकार मारे जायँगे। आज तो जंगी भी खार खाये बैठा है। न जाने बड़े सरकार से कौन-सा बदला लेना चाहता है। तू तो जानती है कितना खूँखार आदमी है वह। उस दिन शरों का हाथ, कालपी के पटवारी ने अकेले में क्या पकड़ लिया, उसे जान से हाथ धोना पड़ा। जंगी ने अपनी

टंगिया (कुल्हाड़ी) से उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये थे और खुद पुलिस में जाकर अपना खून कबूल कर आया था। अपनी इसी ईमानदारी के कारण सरकार ने उसे जमानत में छोड़ा है, पर आजकल तो वह बौरा गया है। उस पर खून चढ़ा है। कहता था, सुबह होते ही बड़े सरकार की बखरी में जाऊँगा और बाहर निकलते ही कुल्हाड़ी की चोट से उसका काम तमाम कर दूँगा—।”

“माँ...” जेठिया के मुँह से एक लंबी चीख निकली और उसका सिर नीचे झुक गया। दुलारी ने उसके बालों को सहलाते हुए कहा—“अब पछताने से क्या बेटी...” इसी समय उसके गले में जब दुलारी की नजर पड़ी तो खून सूख गया, बोली—“सोने का हार।... यह तूने क्या किया बेटी? अपने गले में यह साँप पहनते तुझे डर नहीं लगा। कौड़ियों और घुँघचियों की माला ने तेरा क्या बिगाड़ा है। इनकी कीमत भले ही माटी हो, पर साँप का जहर तो नहीं है।” वह जेठिया के कुम्हलाये चेहरे को बैठी-बैठी देखती रही। उसके झुके मुख पर अभी भी लाल घुँघचियों जैसी आभा चमक रही थी और बड़ी-बड़ी आँखें नीली सरसों की भाँति कोमल तथा लुभावनी लग रही थीं।

दुलारी की आँखों से मोती जैसे बड़े-बड़े आँसू ढुलक रहे थे और पिछली जिन्दगी की तस्वीर एक के बाद एक उसकी आँखों की पुतलियों के सामने से गुजरती जा रही थी। कितनी मुश्किल से उसने जेठिया को पाला है। उसी के पीछे उसने तीन-तीन घर बदले और यह चौथा साथी भी बुढ़ापे में छोड़कर चला गया। कहने को तो दुलारी ब्याही है, पर कभी उसके शरीर में ब्याह की हल्दी नहीं लगी। पिछले ५० सालों की जिन्दगी में न जाने कितनी बार उसे जानवरों की तरह पीटा गया है, न जाने कितने घाव उसकी पीठ पर अभी भी बने हैं। बार-बार घर बदलने के सिलसिले ने उसे कितना तड़पाया है। कई बार उसने गले में फन्दा लगाने की बात भी सोची है, नाले में डूब मरने की इच्छा भी उसने की है, पर इस लड़की के मोह ने वह सब नहीं करने दिया। इन सब मुश्किलों

के लिए जिम्मेदार कौन है, जमाने का इतना रंग देखने के बाद भी दुलारी जान नहीं पाई थी। और जब कोई चीज समझ के परे होती है तो भाग्य और भगवान् का भरोसा ही जी को समझाने का एकमात्र रास्ता रह जाता है।

वसन्त का वह अलहड़ महीना जब दुमकुरिया' के कुमार सदस्यों का दल "फागुसंगरा"^२ के लिए बाहर गया था। दलसिंह उस दल का मुखिया था। उस नवजवान के रूप-सौन्दर्य पर दुलारी मोहित हो गई थी। दोनों ने खूब खुलकर पहाड़ियों में शिकार खेला था—खमैर, गूल्हर और महुआ के पेड़ों के नीचे, चकौड़ा और पथरचटा की आड़ में प्रेम के गीत गाये थे। फागुसंगरा के बाद जब यह दल वापस लौटा था तो गाँव भर ने उसका खूब स्वागत किया था। उसी रात को खुले वातायन के नीचे गाँव के जमींदार ठाकुर प्यारेलाल के आँगन में एक जलता हुआ दिया और थोड़ा पका चावल रखा गया था। पण्डा ने पहले तेल में हाथ डुबाकर फिर चावल में हाथ डुबाये और प्रत्येक सदस्य के माथे पर टीका लगाकर आशीर्वाद दिया था। इसी समय ढोलिए मैदान में कूद पड़े थे, उनके पीछे दो-तीन आदमी गले में माँदर लटकाये खड़े थे। उन्होंने वहाँ थाप दी और यहाँ दलसिंह दुलारी का हाथ पकड़कर मैदान में कूद पड़ा। उस दिन रातभर खूब करमा हुए। दुलारी का मन बेहद फूला था, उसने दिल खोलकर खूब करमा गाये। इसी नाच के बीच दलसिंह ने उसकी एड़ियों को दबाकर जब अपना प्रेम जताया था, तो दुलारी पलाश के फूलों की तरह लाल हो गई थी। तब सीना तानकर केंचुए की तरह अपने शरीर को मोड़ते-मरोड़ते उसने इतने पैतरे दिखाये, प्रेम-भरे गीतों के स्वरों में मगन होकर वह इस तरह लहराई कि जिसने उस दिन उसका नाच देखा, उसकी आँखों में वह काँटा बनकर चुभ गई थी। ठाकुर

१. दुमकुरिया, जिसे 'घोटल' भी कहते हैं, कुमार युवक-युवतियों का रात्रि के लिए शयन-केन्द्र है। वस्त्र, विहार और उड़ीसा में ऐसे घर पाये जाते हैं।

२. फागुसंगरा वसन्त के महीने में मनाया जानेवाला एक उत्सव है।

साहब का दिल-दिमाग भी, हिरनी की तरह उचटती दुलारी पर अटक गया था। अभी उनकी उमर ही क्या थी—बस कोई २५ बरस, कमल की तरह खिला चेहरा और कदम्ब की तरह छिटका यौवन ! दुलारी उनकी नजरों से न बच सकी। दूसरे दिन किसी बहाने उसे बखरी में बुलाया गया और एकान्त में न जाने कितनी झूठी दिलासाएँ देकर उसका कौमार्य भंग कर दिया गया था। तब ठाकुर ने उसे सोने का एक हार भेंट किया था। उन्होंने अपने मस्तिष्क का भार तो हलका कर लिया पर वह दुलारी के लिए मुसीबत बन गया था। वही दलसिंह जो एक दिन उसके पीछे अपनी जान भी देने को तैयार था, अब उसे देखते ही नाक-भौंह सिकोड़ लेता था। और सिकोड़े भी क्यों नहीं—दुलारी ने उसे धोखा जो दिया था।

दलसिंह ने ठुकरा दिया तो क्या ? दुलारी के भाग्य ने साथ दिया और धरमू के साथ उसका “भूलविहाव”^१ हो गया। विवाह के दो महीने बाद ही वह एक लड़की की माँ बन गई थी। लड़की पाकर दुलारी खुश थी, उसका सूना घर किलकारियों से गूँज उठा था, परन्तु पुरुष का मन भला कब इस बहकावे में आ सकता है। धरमू को लगा कि इस लड़की के आते ही दुलारी का प्यार छिन गया है, वह बदल गई है। एक रात उसे दमयन्ती की तरह अकेली छोड़कर वह भाग गया और फिर आज तक उसका पता नहीं चला। उसके बाद उसी घर में वह अपने देवर के साथ रहने लगी। डेढ़-दो बरस चैन से गुजरे। देवर ने उसका बड़ा ख्याल रखा, ऐसी सुन्दर पत्नी पाकर वह खुश था, लेकिन एक दिन अचानक ब्रीड़ के पास काले साँप ने उसे डँस लिया। गाँव के गुनियाँ ने खूब झाड़-पूँक की, पर दुलारी के “भाग खोटे” थे, वह न बच सका।

पाँच साल दुलारी ने मुसीबत में काटे। बनी-मजूरी से जो मिलता

-
१. जब कोई कुमारी गर्भवती कन्या ऐसे व्यक्ति के साथ ब्याह करे, जिसका वह गर्भ नहीं है तो ऐसे ब्याह को ‘भूलविहाव’ कहते हैं।

उसी से वह किसी तरह अपना और अपनी बेटी का पेट भरती रही। तभी बिल्ली के भाग्यछीं का टूटा—दसरू की दूसरी मिहरिया क्या मरी दुलारी के भाग्य पलट गये। दसरू के घर में तीन छोटे-छोटे बच्चे थे, उनकी देखभाल के लिए उसे एक औरत की जरूरत थी। यह जरूरत पूरी करने के लिए दुलारी को सहारा मिल गया। बच्चों से भरा-पूरा घर और नया-नया पति—दुलारी जैसे अपने अतीत को भूल गई। पर नयी जिन्दगी की यह चमक थोड़े दिन तक ही चली। दसरू ने उसके और उसकी लड़की के साथ मनमाना दुर्व्यवहार करना शुरू कर दिया था। वह दसरू के सिर पर बैठकर खाती हो, सो बात नहीं। दिन भर मजूरी करती थी और रात को बच्चों के बीच में सारी मिहनत भुलाने में लग जाती थी। इस पर भी दसरू किसी-न-किसी बहाने उसे मारता-पीटता और परेशान करता था। दुलारी अपने ऊपर होते अत्याचारों को तो सह लेती, पर जब दसरू उसकी भोली-भाली लड़की पर हाथ उठाता, उसे खाने न देता और कभी-कभी रात को घसीटकर घर के बाहर कर देता, तो उसका कलेजा मुँह को आ जाता था। उसके तन-बदन में दवाँर लग जाती और उसका मातृत्व चीख उठता। आखिर खून खून पर ही गिरता है। कितना भी हो वह पराये बाप की लड़की थी, दसरू को उसकी सुख-सुविधा की फिकर क्यों हो? जब कभी अपनी लड़की का पक्ष लेकर, धोखे से भी दुलारी अपना मुँह खोल देती तो जैसे उस पर पहाड़ टूट पड़ता था।

वह भयानक रात! याद आते ही दुलारी का कलेजा थरा उठता है और हिचकी आ जाती है। कटकटाती और ठिठुरती ठंड में आधी रात को बेतों की मार के बाद १० बरस की उस लड़की को घर के बाहर निकाल दिया गया था और वह भी उस समय जब गाँव के बाहर जंगल से रह-रहकर चीते की भयानक आवाज सुनाई दे रही थी। दुलारी का ममता-भरा हृदय भला यह कैसे सहन कर सकता था। उसी कटकटाती रात को वह भी घर के बाहर चली गई। इसके सिवाय उसके पास चारा

ही क्या था । उसके सामने दो रास्ते थे—या तो अपनी कली जैसी लड़की को इस कच्ची उमर में ही अपने हाथ से मसल दे, क्योंकि उस दिन दसरू का दानव प्रबल रूप लिये खड़ा था, अथवा दसरू का आसरा छोड़ दे । दुलारी ने दूसरा रास्ता ही अपनाया और तभी से वह एकाकी जीवन बिता रही है । ऐसे झूठे सौभाग्य से उसे वैधव्य पसन्द है और इसी-लिए उसका मन फिर किसी की छाया में आसरा ताकने का नहीं हुआ ।

जिन्दगी की इतनी लम्बी और इतनी ऊबड़-खाबड़ तस्वीर देखकर दुलारी चीख उठी । उसे लगा जैसे कोई उसकी बेटी का गला घोट रहा है, वह काँपने लगी—“नहीं, यह नहीं होगा, मैं अपनी बेटी की जिन्दगी को राख में नहीं भिला सकती ।”

तब रात की काली चादर ने सारे गाँव को ढँक लिया था । तारे जैसे टिमटिमाते दीपक, उसमें खो गये थे, ढोलक और टिमकी की आवाज सो गई थी । केवल गाँव के कुत्ते भौंक रहे थे और गेंवड़े से किसी पागल स्यार के रह-रहकर चिल्लाने की दर्दभरी बेहूदी आवाज आ रही थी ।

दुलारी चुपचाप उठी और अपना डंडा लेकर मालिक की बखरी में जा पहुँची । यहाँ की एक-एक जगह उसकी पहचानी थी । ठाकुर साहब जिस कमरे में सोते थे, वही कमरा बड़े सरकार का शयन-कक्ष था और यह कमरा भी बैठक की बाजू में सड़क पर ही था । उसने दरवाजे की साँकल खटखटाई । बड़ी देर तक किसी ने आवाज नहीं दी, लगभग १५-२० मिनट के बाद बड़े सरकार की नींद खुली । लैम्प जलाकर जब उन्होंने दरवाजा खोला तो दुलारी को लाठी लिये बाहर खड़ा पाया । गुस्से से उन्होंने नाक-भौंह सिकोड़ी, आखिर इतनी रात को उसे क्या काम अटका था जो परेशान करने आई थी, वे झल्ला पड़े—“तेरी इतनी हिम्मत, इतनी रात को मुझे उठाने की जरूरत ?” दुलारी घबड़ाई थी, उसी तरह अटपटे और अस्पष्ट शब्दों में बोली—“तुम्हारे पैर पड़ती हूँ बाबू, सिर्फ़ दो मिनट—तुमसे बात करूँगी लेकिन बाहर, परछी में नहीं ।”

“तो क्या मेरे घर में घुसेगी ?”—बड़े सरकार का रोष अभी भी शान्त नहीं हुआ था ।

“हाँ बाबू, भगवान् के लिए, मेरे लिए और अपने लिए, दो मिनट इतना भी कर लो ।” इस गिड़गिड़ाहट के सामने बड़े सरकार को झुकना पड़ा ।

दोनों अन्दर गये तो दुलारी ने कहा—“सरकार आज तुम पर एक भारी मुसीबत आ पड़ी है, उसीसे तुम्हें सचेत करने आई हूँ ।”

“मुसीबत और मुझ पर !” बड़े सरकार ने ठहाका मारकर हँस दिया । इतने अधिक ऐश, आराम में पले बड़े सरकार मुसीबत क्या जानें, वह तो जैसे उनसे भय खाती और दूर भागती थी । फिर जवानी का ताजा खून उनकी रग-रग में दौड़ रहा था, एकाएक मुसीबत का पहाड़ भी टूट पड़े तो मुँह से “उफ” न निकले । अभी उन्होंने जिन्दगी ही क्या देखी थी और जो कुछ थोड़ी-बहुत देख पाये थे, उससे जिन्दगी का एक बेहद रंगीन और खुशनुमा रूप ही उनके सामने आया था । दुलारी की इस गम्भीर बात का उन पर कोई वजन नहीं पड़ा । कमरे में यहाँ-वहाँ घूमते हुए वे बोले—“अपनी मुसीबत देख दुलारी, हमारी चिन्ता तुझे क्यों ?”

“आज यही तो बताने आई हूँ बाबू, काश, तुम जान पाते कि तुम्हारे लिए, मेरे मन में कितनी ममता है, कितना स्नेह है, लेकिन...”

“लेकिन क्या ?”—बड़े सरकार गरजे—“हमारे पास पहेलियाँ बुझाने का समय नहीं है, तुझे क्या कहना है, जल्दी से कह दे । यदि पैसे चाहिए तो वह...”

दुलारी ने सरकार के पैर पकड़ लिये—“मुझे पैसे नहीं चाहिए बाबू, मैं अपनी लड़की की इज्जत और तुम्हारे प्राणों की रक्षा के लिए आयी हूँ ।”

सुनकर बड़े सरकार को जैसे काठ मार गया । उनकी आँखों के सामने नाले की रेत, भरे हुए मटर की फली जैसी जेठिया की फूली देह और उसका टमाटर जैसा खिला चेहरा झूलने लगा । प्रेम के जो दास्तान

सरई के जंगलों, ज्वार और मक्का के खेतों तथा नदी-नालों के किनारे बीते थे, सब उनकी आँखों के सामने एक-एक कर झूलने लगे। सहसा क्रोध और घृणा-भरी कुछ रेखाएँ उनके चेहरे पर उभरीं। वे सोचने लगे, जेठिया रंग-रूप में खूबसूरत है तो क्या, है तो एक गरीब गोंड़ की लड़की, जो चाँदी के चन्द टुकड़ों के सामने अपनी इज्जत हर कही लुटा सकती है। वह एक ऐसे नाले से कम नहीं है जो हर ढाल पर अपनी लगाम ढीली कर सकता है, भला उसकी भी कोई मर्यादा है। वे बोले—“तुम मुझ पर लांछन लगाने आई हो दुलारी ? तुम्हारी इतनी हिम्मत ! मैं नहीं जानता था कि दादा के मरते ही तुम लोग हमारे सिर चढ़ जाओगे। मालगुजारी नहीं रही तो क्या हुआ, गाँव के एक-एक आदमी को आज भी जिन्दा जलवा सकता हूँ।” वे आवेश में काँप रहे थे और दुलारी नीचे सिर झुकाये कह रही थी—“जानती हूँ मालिक, अच्छी तरह जानती हूँ। फिर भी इतनी रात को अकेली आई हूँ, तुम पर लांछन लगाने नहीं। यह तो मेरी ही गलती है सरकार, नहीं तो जहाँ पालने में ही ब्याह हो जाते हैं, वहाँ १६ बरस की जवान लड़की अनब्याही क्यों फिरती ? इसमें तुम्हारा क्या दोष, पर गाँववाले जब मानें तब न !”

“क्या मतलब”—बड़े सरकार ने गरजकर कहा—“गाँववाले हमारा बाल भी बाँका नहीं कर सकते।”

“ठीक है हुजूर, मैं तो यह बताने आई हूँ कि गाँव के सारे गोंड़ तुम्हारी जान लेने पर उतारू हैं। मुर्गे की बाँग होते ही वे तुम्हारी बखरी घेर लेंगे और तुम्हारे बाहर निकलते ही जान ले डालेंगे। शायद तुम नहीं जानते मालिक, आज जंगी भी खार खाये बैठा है।”

“क्या जंगी !...” बड़े सरकार के सामने उस हत्यारे का खूनी चेहरा झूलने लगा पर वे विचलित नहीं हुए, हार मानने के लिए उनका मन तैयार नहीं था, बोले—“तुम जानती हो इसका अंजाम ? मैं गाँव के सारे गोड़ों को गोली से उड़वा दूँगा, उनकी खाल खिंचवा लूँगा।”

“यह भी जानती हूँ सरकार”—बड़ी शान्ति से दुलारी ने कहा—

“लेकिन आज उन्होंने अपने तरकस भी खाली कर लिये हैं और दिन भर से बाणों की नोकों को पैना कर उनमें माहुर^१ लगा रहे हैं। यह जिद्द छोड़ दो बाबू और जो कहती हूँ सुन लो।”

बड़े सरकार तब भी कमरे में गर्व के साथ आगे-पीछे घूम रहे थे। अपनी मुद्रा कुछ नरम करते हुए बोले—“खैर, इतनी रात आई हो तो सुन लेता हूँ, बोलो, क्या कहना चाहती हो?”

‘सिर्फ यही कि जेठिया तुम्हारी बहिन है। स्नेह की आँखों में शान्ति बढ़ जाती है, आज अपनी आँखों में यही स्नेह भरकर लायी हूँ। तुम क्या जानो, तुम्हारा और मेरा क्या सम्बन्ध है! जिस मर्म को जिन्दगी भर अपनी कोख में छिपाये रही, आज तुम्हें बताती हूँ’—दुलारी के गले में वेग था और आँखों में आँसुओं की अविरल धारा—“काश! आज ठाकुर जिन्दा होते! ‘जवानी अंधी होती है बेटा, इसमें किसी का दोष नहीं, एक समय ठाकुर की नजर भी मुझ पर उठी थी और’ और, यही जेठिया उसका परिणाम है।”

दुलारी ने जमीन पर माथा टेक दिया और सिसक-सिसक कर रोने लगी। बड़े सरकार का मन तब भी न पसीजा, सिंह गर्जना-के स्वर में बोले—“मेरे बाप पर इतना बड़ा लालचन, तेरी जीभ नहीं कट गई दुलारी! हम नहीं जानते थे कि गाँव के जो लोग हमारे टुकड़ों पर पले हैं, वे ही एक दिन हमारे ऊपर आँख उठावेंगे। तू अबला है, दुलारी, कोई आदमी होता तो उसकी जवान निकाल लेता! ‘तू जा सकती है।”

“जाती हूँ बेटा, रहने नहीं आई”—दुलारी उठकर खड़ी हो गई। जाते-जाते बोली—“माँ के प्यार को पहचानो बाबू, मुझे तुमसे कुछ लेना नहीं है, जो मुसीबत तुम पर आनेवाली है, उससे अगाह कराने आई थी, सो करा दिया। अब तुम जानो। आदमी के किये होता क्या है, होगा

१. माहुर एक प्रकार जहर है जिसे आदिवासी अपने शिकारी बाणों की नोक में लगाते हैं। यह इतना जहरीला होता है कि इसके खून में स्पर्श मात्र से बड़े से बड़ा जानवर मर जाता है।

वही जो परमात्मा चाहेगा। भगवान् तुम्हारी रक्षा करे।”—और दुलारी बखरी के बाहर हो गई। बड़े सरकार ने क्रोध और उपेक्षा से दरवाजे लगा दिये।

जब वे विस्तर पर गये तो नींद नहीं आई। उनकी आँखों के सामने कभी दुलारी का रोता-सिसकता चेहरा झल रहा था तो कभी जेठिया की नाजुक देह उनके शरीर में हलचल मचा देती थी। वे सोच रहे थे—“इतनी रात को दुलारी का आना, वह भी कुछ लेने नहीं—जल्द उसकी बातें सत्य होंगी—पर मेरे पिता, नहीं, वे ऐसा नहीं कर सकते। मरते दम तक उन्होंने नैतिकता और सत्यता का पाठ पढ़ाया है। ईश्वर पर उनकी अटूट आस्था रही है—” उनकी बौद्धिकता अनेक तर्क-कुतकों में उलझी थी। कभी दुलारी पर उन्हें क्रोध आता तो कभी उसकी सौम्य और सरल मूर्ति के सामने उनका मन विनत हो जाता। वे सोचते—“हो कैसे नहीं सकता, पूजा-पाठ तो बुढ़ापे का ढोंग है। जैसे आज जेठिया की खूबसूरती ने मुझे छल लिया, क्या पता यही दादा पर बीती हो। आखिर औरत एक जादू है, न जाने कब किसे कहाँ उलझा ले। औरत एक काँटा है, जो उसे छुये उसी को वह चुभ जाय। आदमी का खून गिरता है और औरत उसे अपना सौभाग्य समझती है।”

बड़े सरकार न जाने क्या-क्या सोच रहे थे कि सुर्ग ने बाँग दी। यह आवाज सुनते ही उनका मन सम्भावित आशंका से काँप उठा। उन्होंने अपनी दुनाली बंदूक निकाली और उसमें गोलियाँ भरने लगे। तभी बाहर कोलाहल सुनाई दिया। वह क्रमशः तेज होता गया। उनके कमरे के चारों दरवाजों को नौकर जोर-जोर से खटखटा रहे थे—“मालिक, मालिक, गाँव के सारे के सारे गोंड धनुष बाण और कुल्हाड़ी लेकर बखरी पर हमला करने आये हैं।” हंगामा बढ़ता ही जा रहा था और बड़े सरकार—किंकर्तव्यविमूढ़ हाथ में बंदूक लिये कमरे में यहाँ-वहाँ घूम रहे थे।

एकाएक न जाने क्या हुआ कि उन्होंने बंदूक से गोलियाँ निकाल

दीं और खाली बन्दूक दीवाल के एक कोने में लटका कर, बरामदे का दरवाजा खोलकर बाहर निकल आये। ताजे खिले हुए गुलाब की तरह अपने हँसमुख चेहरे से उन्होंने सारे उत्तेजित गोड़ों का अभिवादन स्वीकार किया और बोले—“आज यह सब हंगामा कैसा ? अरे—जंगी, तू तो बखरी का सच्चा सेवक था, जमानत पर तुझे इसी बखरी ने छुड़ाया है रे। फिर...?”

“फिर क्या ?”—जंगी की आँखों से खून चूर रहा था—यह एहसान जताकर आज तुम नहीं बच सकते बाबू, तुमने गाँव की इज्जत पर हमला किया है, हमारी भी कुछ मान-मर्यादा है, हम गरीब हैं तो क्या हमने अपने सारे उसूल बेच खाये हैं। हमें भी आदमी समझो, तुम्हारी सार में बँधनेवाली गाय हम नहीं हैं। जेठिया की सुन्दरता यदि काँटा बनकर तुम्हारी आँखों में गड़ सकती है तो उस काँटे का दर्द सहने की ताकत भी तुममें होनी चाहिए। आदमी हम तुम्हें तब जाने जब तुम उससे ब्याह करने को तैयार हो जाओ...।”

“ब्याह, जेठिया से ब्याह”—उसी सरल मुद्रा में हँसते हुए बड़े सरकार ने उत्तर दिया—“हम वह भी कर लेते जंगी, यदि हमारी जात में भाई-बहिनों का ब्याह होता।”

“भाई-बहिन ! इस नाटक से काम नहीं चलेगा सरकार”—जंगी ने जमीन पर जोर से लात मारी।

“चलेगा क्यों नहीं”—बड़े सरकार के कुछ कहने के पहले ही दुलारी ने भीड़ से रास्ता बनाते हुए आगे आकर कहा—“यदि दुनिया में भाई-बहिन का मिलना पाप है तो निश्चय ही मालिक ने अपराध किया है। नहीं तो अपराधी तुम लोग हो, जो बिना जाने-बूझे अपने अन्नदाता की हत्या करने अपना काम-धंधा छोड़ कर यहाँ इकट्ठे हुए।”

सारा उत्तेजित समुदाय सन्न रह गया। गाँव के सबसे बूढ़े भोई ने तभी आगे आकर कहा—“दुलारी सच कहती है, ये दोनों भाई-बहन हैं।” सुनते ही सनसनी फैल गई। जंगी ने तो आगे बढ़कर देहरी पर माथा

टेक दिया । बिरजू ने दुलारी को उठा लिया—“तूने गाँव की इज्जत बचा ली दुलारी वरना मालिक भी जाते और गाँव भी तबाह हो जाता ।”

बड़े सरकार परछी में खड़े मुसकरा रहे । उनकी मुसकान दूर से आती जेठिया की अल्हड़ और भोली हँसी के साथ होड़ लगा रही थी और पूरव की खिड़की खोलकर सूरज की सुनहली किरणें उस गाँव में सोना बरसाने लगी थीं । सूरज किरण की छाँह में सूरज-मुखी की तरह सारे चेहरे खिल उठे थे, आज गाँव के नाते बदल चुके थे ।

3. ऊसर खेत

दन्तेवाड़ा की सूखी घाटियों पर पूरा खिला चाँद औंधा लटका था और उसकी चाँदनी में जंगल के सारे झाड़ चाँदी के पायजेब की तरह चमक रहे थे। घाटी के नीचे एक नाला था। नाले की हल्की-सी किलकारी दूर-दूर तक गूँज उठती थी, मानों वह चाँद की गोद में जाने का हठ कर रहा था। घाटी की एक ओर से बीजापुर के खेतों की सौंधी-सी हवा आ रही थी तो दूसरी ओर से कोतों की गरम किन्तु समतल और सुन्दर जमीन से विचरता अल्हड़ पवन सी-सी कर रहा था। इनके बीच खड़ी मुंदरी चारों ओर देख रही थी। हवा की लहरों से जब कभी सूखे पत्ते थोड़ा खड़खड़ा उठते, तो वह चौकन्ना हो जाती और अपने आँचल के छोर को सम्हाल लेती थी। उसे किसी जंगली जानवर का भय नहीं था, वह तो उज्जी पोदा का रास्ता ढेर रही थी। उसने आने को तब कहा था जब चाँद पहाड़ी की बराबरी से आ जाय, अब तक वह सिर पर चला गया था, पर वह नहीं आया। मुंदरी की चिन्ता का अन्त नहीं था। एक तो इतनी रात गये इतने बड़े जंगल में अकेले आना, फिर गाँववालों का भय और अपने पति पिन्ना के व्यवहार की चिन्ता। उसने घाटी की छोर पर आकर देखा। सामने कबूतर के पर जैसी सुफेद चाँदनी में नकलनार के सरसों के फूल जैसे छोटे और सुन्दर मकान तैर रहे थे। गाँव में कहीं कोई हलचल नहीं, सिर्फ कुछ कुत्ते यहाँ-वहाँ भूँक-भूँककर

अपने ही साथियों के साथ विद्रोह कर रहे थे। उसने देखा परगना माझी का झाबुआ कुत्ता, पड़ोस के पिद्दी कुत्तों पर रोव जमा रहा है। वे बेचारे भूकते हैं पर जब झाबुआ उन पर चढ़ बैठता है तो वे पूँछ दबाकर अपनी हार मान लेते हैं। मुंदरी सोचती है, पशुओं में भी कितनी मर्यादा है। झाबुआ समर्थ है, चाहे जिसे दवा सकता है, पर शक्ति और सामर्थ्य होते हुए भी वह प्रकृति के बन्धनों को नहीं तोड़ पाता।

मुंदरी को तभी पिन्ना भेजी की याद आ गई। पिन्ना उसका पति है, आठ-नौ बरस पहले वह उसे अपना समर्पण कर चुकी है। जिस ढंग से उसने समर्पण किया, वह भी गाँव के इतिहास में निराला है। बीरा गाँव का माझी था। उसके पास धन-दौलत की क्या कमी। चार छोटे खेत, जिसमें चालीस मन कोदों और सोलह मन कुटकी होती थी। गाँव के किसी किसान की धरती ने इतना सोना नहीं उगला। मुंदरी इसी बीरा की लड़की थी, अकेली। पिन्ना उसके यहाँ लमहादा था। आमतौर पर लमहादा होते हैं लड़की का कर्ज चुकाने के लिए, पर पिन्ना अपने बाप का कर्ज पटाने के लिए लमहादा (या लमसेना—अनेक आदिमजातियों में प्रथा है, जो वर लड़की की कीमत नहीं चुका सकता उसे कीमत पटाने के लिए पाँच से सात वर्ष तक लड़की के घर रहकर काम करना पड़ता है, इस अवधि में उसे लमहादा या लमसेना कहा जाता है) बना था। कहते हैं पिन्ना भेजी के बाप ने चार-पाँच कोरी रुपये उधार ले लिये थे। वह रुपये न पटा सका और इसलिए पंचायत के निर्णय पर पचास बरस की उमर में बीरा के यहाँ भगेला (जो आदमी कर्ज के बदले साहूकार के घर रहकर श्रम करता है—यह प्रथा केवल माडिया गोडों में है) बनकर रहने लगा था। दो साल बाद वह मर गया था तो उसके लड़के को भगेला बनना पड़ा। वह जिन्दगी भर काम करेगा पर अपने बाप का कर्जा कभी नहीं उतार सकेगा। उसका श्रम ब्याज भर चुका सकेगा और क्या यही कम है।

पिन्ना तेल पी हुई लाठी की तरह चिकना, सुन्दर, सुडौल, लम्बे तन का,

धुँधराले बाल और भूरे रंग की देहवाला सुन्दर जवान था। उसके व्यक्तित्व पर मोह जानेवाली मनचली छोकरियों की कमी नहीं थी। गाँव की हर गदराई लड़की अपने अरमानों की झोली उसके सामने पसारती, पर पिन्ना ने कभी किसी की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा और उस गाँव की न जाने कितनी छोकरियाँ विफल प्रेम की धूप में मुर्झा गईं। बीरा ने एक दिन संज्ञा को मुंदरी को बुलाया था और कहा था—“बेटी, साल भर हो गए, जवान सूखी थान से चिपका है।”

“हाँ बापू”—मुंदरी ने अनजाने ही जब कहा तो उसकी माँ उसे खींच कर भीतर ले गई थी, बोली—“मुंदरी, तुझे क्या हो गया है। तेरे मन का पंछी अब तक क्यों नहीं जागा? अरी, सम्हल जा पगली, वरना तेरे प्रेम का हर कोई तिरस्कार करेगा। प्रेम की ठुकराई औरत वज्र बन जाती है। देखा नहीं दल्लो को? न जाने कितने जवान उस पर मरते थे पर किसी ने उसे नहीं जगाया। उसका मन सोता रहा तो अन्त तक वह रोती रही और आज उसका मन पत्थर बन गया है। जानती है, गाँव की सोधन है, वह न जाने कितनों को खा चुकी है।”

मुंदरी जैसे सब कुछ समझ गई थी। उसने सिर हिलाया और बाहर देखा, द्वार के बाहर सार की बाजू में पिन्ना खड़ा था। छल्लाँ भरते वह दौड़ गई और उस दिन से ही दोनों एक हो गए। दोनों का ब्याह कर दिया गया। पर पिन्ना अब भी बीरा से घबड़ाता है। वह उसका दामाद है, पर आज भी जब कभी बीरा जोर से बोल देता है, वह काँप उठता है। वह जानता है कि वह रिश्ते में भले ही दामाद हो पर है अब भी उसका कर्जदार, उसका गुलाम, उसकी सेवा पिन्ना का कर्तव्य है। उससे मुकरेगा तो भूमसरियादेव की तेज आँखों का शिकार होगा।

पिन्ना और मुंदरी की जिन्दगी ने धीरे-धीरे एक नयी करवट ली और साल भर के भीतर ही उनका घर-किलकारियों से गूँज उठा। किलकारियों की याद आते ही मुंदरी का कलेजा हिल गया। वह घाटी की किनार से हट गई। सारा जंगल अब भी नाले की कल-कल से भरा था। उसे लगा

जैसे उसके प्यारे बच्चे की किलकारियाँ चारों ओर गूँज रही हैं और जब उसका मातृत्व जागा तो वह थर्रा उठी। उसने नीचे देखा। वहाँ पत्थरों के खम्भों के ढेर थे। देखकर उसके मन में हलचल हो गई। यहीं कहीं उसका नन्हा-सा बेटा उरसा गया (गाड़ा गया) होगा।

आठ साल हो गये यह सब हुए। फिर उसकी गोद अब तक नहीं भरी। वह सोचती है, आज वह होता तो भला इस पहाड़ी पर वह अकेली आती। उसकी हरी-भरी जिन्दगी उजाड़ होती! पिन्ना मुंदरी को जी भर प्यार करता था पर उसके मरते ही उसकी नजर बदल गई। अब वह अक्सर इस मेंड़ उस मेंड़ घूसा करता और मुंदरी को हर वक्त सौत लाने की धमकी देता है। मुंदरी का बाप बीरा भी उससे बिगड़ गया है। गाँव भर में कहता रहता है कि अकेली लड़की, वह भी डाइन्स निकली। माँ जब कभी उससे मिलती है, कहती है—“बेटी, औरत एक खेत है। यदि खेत ऊसर हो जाय तो उसकी जगह नया खेत तैयार कर लेना चाहिए।” मुंदरी यह सुनकर माँ से लिपट जाती है और विलख उठती है, कहती है—“तू भी यह कहती है माँ?”

माँ कहती है—“मुंदरी, स्त्री का धरम यही है। यदि वह अपना धरम न धर सकी तो स्त्री कहाँ रही। वैसे तो हर स्त्री रेत का ढेर होती है पर उस ढेर को सींच कर हरी जगह बनाने में ही जीवन का रस है।”

मुंदरी सुनती है और एक कड़वा घूँट पीकर रह जाती है। क्या उसे मातृत्व की साध नहीं है? क्या वह नहीं चाहती कि उसकी गोद भरे, उसके आँगन में भी सुन्दर-सुन्दर फूल खिलें और हर ओर से माँँँँँ की सुख-भरी किलकारी उसे सुनने को मिले। उसका बायाँ आँचल अक्सर भारी हो जाता है और अपने आप कसकने लगता है। वेदना से तब वह सिहर उठती है, पर वह करे क्या? बाँझ होती तो क्या उसकी कोख से वह फूल जैसा कोमल पिण्ड जन्मता जिसकी उसने अपने हाथ से हत्या कर दी।

हत्या की बात सोचते ही मुंदरी की आँखों के सामने अँधेरा छा गया।

एक माँ ने अपने बेटे की हत्या कर दी। विज्जा पाण्डुस (अप्रैल के महीने में मनाया जानेवाला त्योहार) का वह मजमा, गाँव भर के स्त्री-पुरुष, ढोल, मांदर और टिमकी बजानेवालों के साथ जुड़े थे। फसल के पहिले देवता को खुश करना जरूरी है, इसीलिए इस नाच का आयोजन किया गया था। मुंदरी को सामने नंगे खड़े झाड़ नाचते-से दिखाई देने लगे और वरसों पहिले की याद ताजी हो गई। उसे लगा कि सारा नकलनार नाच में मगन है। वह भी उनके बीच है। नाचते-नाचते हुंगा ने उसके पैर दबा दिये। मुंदरी गुस्से से लाल हो गई। उसे हुंगा के अनाड़ीपन पर तरस आया। वह यह भी नहीं जानता कि नाच के उस मजमे में पिन्ना भी शामिल है और वह यह देख लेता तो उसका हरा-भरा चमन बरबाद हो जाता। पिन्ना उसकी खाल खींच लेता और उसे घर के बाहर निकाल देता। गाँव भर में मुंदरी की हँसी होती। हुंगा उस दिन लौंदा में मस्त था। वह इतने से ही नहीं माना। नाच के बीच उसने मुंदरी से तम्बाकू माँगी (किसी स्त्री के प्रति बुरी नीयत प्रकट करने को तम्बाकू माँगना कहते हैं)। फिर क्या था, मुंदरी का चेहरा जलते अंगारों जैसा तमतमा उठा। उसने नाच के बीच ही हुंगा के गाल पर कसकर दो थप्पड़ जड़ दिये। थप्पड़ के पड़ते ही वहाँ हो-हंगामा मच गया। न जाने कितने किस्म की बातें हुईं। मुंदरी ने उन बातों तर ध्यान नहीं दिया और घर भाग गई। हुंगा की औरत तब घर के बाहर बैठी थी। उसका आठ महीना का पेट था इसलिए नाच के मजमे में वह भाग नहीं ले पाई थी। मुंदरी ने जाकर उससे उल्टी-सीधी बातें कहीं और बातों की लेन-देन में तनातनी बढ़ गई। मुंदरी गुस्से में थी, बोली—“अरी, तू अपने मरद को सुख नहीं दे पाती तो दो-चार सौत बुला ले। तू जाने काहे की बनी है। तेरे रहते, तेरा मरद पराई औरत से तम्बाकू माँगे।” हुंगा की औरत का इसमें दोष नहीं था, पर मुंदरी अपने मन का मवाल उतारती भी कहाँ? हुंगा की औरत ने दो-चार कसमें खाईं। यह भी कहा कि वह घर आयेगा तो वह उसकी

खबर लेगी पर मुंदरी लड़ती रही। उसने आरोप लगाया कि उसकी ही गलती के कारण आज हुंगा ने ऐसा किया है। वह यह भी कह गई कि हुंगा के इस काम में उसका भी हाथ है और दोनों मिलकर मुंदरी की सुखी जिन्दगी को उजाड़ना चाहते हैं। निश्चय ही तब मुंदरी अपना विवेक खो चुकी थी। वह यह भूल गई थी कि औरत सब कुछ कर सकती है पर अपने सुहाग पर किसी दूसरे का अधिकार नहीं देख सकती।

बात काफी बढ़ गई और तब जैसा कि उसके समाज में अब तक होता आया है, हुंगा की औरत ने अपने सवा साल के लड़के की गरदन मुंदरी के सामने तोड़ दी और अपने पवित्र होने का प्रमाण दिया। रात बीते जब सब घर आये और हुंगा ने यह देखा तो पंचायत को खबर दी गई। परगना माझी ने सब बातें सुनीं। पंचायत में गाँव के सिरहा (गुनाई करनेवाला), पेरमा (धार्मिक कृत्य करानेवाला), और हनगुण्डा (मृतक संस्कार करानेवाला) भी थे। सबने बात सुनकर मुंदरी को दोषी ठहराया। उनका यह न्याय वाजिव था। स्वयं मुंदरी ने अपना दोष स्वीकार कर लिया था। इसके बदले पिन्ना भेजी को भरी पंचायत के बीच अपने इकलौते लड़के की भी गरदन तोड़नी पड़ी।

मुंदरी अपने आप चीख उठी। वह सोचती है, सचमुच वह डायन है। अपने लड़के को वह खा गई और फिर आज तक वह दूसरा लड़का पैदा नहीं कर सकी। यदि उसका पति उससे आँखें तिरछी रखता है तो उसमें उसका क्या दोष है ?

सामने महुआ के झाड़ की एक डाल पर एक सनसनाता तीर आकर चुभ गया। मुंदरी ने देखा तो भय से काँप उठी। यह क्या हुआ ? क्या यहाँ कोई शिकारी है ? यदि किसी ने देख लिया तो। वह सोच ही रही थी कि उज्जी पोदा ने पीछे से आकर उसकी कमर जोर से पकड़ ली। वह चीखकर रह गई और जब दोनों की आँखें मिलीं तो दोनों एक-दूसरे से लिपटकर खिलखिला कर हँस पड़े।

मुंदरी ने उज्जी की नाक दबाई, बोली—“कहाँ रहा रे ? कब से तेरे

लिए तड़प रही हूँ।”

उज्जी बोला—“क्वॉरापन भी कितना विकट होता है, रानी। रातभर से कोसलनार में पंचायत जुरी है और पंचों के सामने एक मजेदार मामला आया है। मुझसे दो छोकरीयाँ ब्याह रचाना चाहती हैं। मैंने कह दिया है कि मैं उनमें से एक से करूँगा, तो दोनों ओर खींचतान मची है।”

मुंदरी ने सुना तो धतूरे के फूल जैसी अपनी बतीसी निकाल दी—
“बड़ा भागवान है रे—” “क्यों नहीं—” उज्जी ने मूँछों पर हाथ फेरा—
“आखिर ऐसा पट्टा किसे मिलेगा। तू भी—।” मुंदरी ने उसके मुँह पर हाथ धर दिया—“धत्तरे की—।” और तभी उसकी चमकती आँखें अनजाने मुरझा गईं। वह उज्जी से सटकर खड़ी हो गई और सिसकने लगी। उज्जी ने उसके आँसू पोंछे, बोला—“क्या बात है री?”

मुंदरी का मन भारी हो गया था, बोली—“वह लड़ाई दो क्वॉरी लड़कियों की है सो बाजिव है। मैं तो पाप कर रही हूँ और इस पाप में तुझे भी भागीदार बना रही हूँ।” “कहाँ का पाप? कैसा पाप?”—
उज्जी बोला—“मैं तो उन दोनों का तमाशा देख रहा हूँ। ब्याह उनमें से किसी से नहीं करूँगा।”

“क्या जनमभर क्वॉरा रहेगा?”—मुंदरी ने ऊपर आँख उठाकर देखा तो उज्जी की पलकों में उसे प्यार का अपार सोता झरता दिखाई दिया। उसने मुंदरी को और समेट लिया और एक गहरा चुम्बन लेते हुए बोला—“ऐसे फूल के सामने—।”

मुंदरी के मन पर जैसे किसी ने भारी पत्थर पटक दिया। उसे लुढ़ा कर वह अलग हो गई। सब कुछ होते हुए भी वह पिन्ना को जी-जान से चाहती है। पिन्ना भी तो उसे भरपूर प्यार देता है। वह सोचती है कि यदि वह प्यार न करता होता तो न जाने कब का सौत ले आता। आदमी तो जंगल जैसा आजाद है। औरत उसका कर ही क्या सकती है? मुंदरी को इसी समय अपने पति की वह बात याद आ गई—“छः माह की मुहलत देता हूँ। माँ बनने के लच्छन न दिखे तो सौत ले

आऊँगा और तुझे उसकी दासी बनकर रहना होगा।” मुंदरी को पूरा-पड़ोस की दासियों की याद आ गई और साथ ही उसमें फिर माँ बनने की लालसा भी जाग उठी। वह सोचने लगी कि—माँ का कहना ठीक है, दुनिया में उसी, स्त्री का जीवन सार्थक है जो माँ है। इसके बाहर जीवन एक छल है, एक पाप है। उसमें बबूल और करौंदे के काँटों की तरह चुभने के सिवाय और कुछ नहीं है।—मुंदरी के मुँह से एकाएक निकल गया—“नहीं ऐसा नहीं होगा। मैं माँ बनूँगी।” उज्जी चौंक उठा, बोला—“क्या नहीं होगा मुंदरी।” मुंदरी लजा गई। यह शब्द तो अकस्मात् उसके मुँह से निकल गये थे। बोली—“कुछ नहीं रे।”

दोनों बड़ादेव की मढिया के पास गये। उज्जी पोदा ने एक मुर्गी की गरदन तोड़कर उसका खून बड़ादेव को चढ़ाया। फिर एक बूँद खुद पीकर, उसने दूसरी बूँद मुंदरी के मुँह में डाल दी। खून को मुश्किल से गले के नीचे उतारते हुए मुंदरी ने कहा—“उज्जी, तू उनमें से एक से ब्याह कर ले। तुझे मेरी कसम है।”

उज्जी ने मुंदरी को खींचकर अपनी छाती से लगा लिया—“नहीं मुंदरी, यह नहीं होगा। मैंने तुझे प्यार किया है और तुझे ही अपनी रानी बनाऊँगा। मैं तेरे घरवाले को मुँहमाँगा हरजाना दे दूँगा।”

“नहीं उज्जी, यह नहीं हो सकता”—मुंदरी ने आवेग में कहा—“बुरा न मान तो कहूँ, मैंने तुझे केवल अपने मातृत्व की भूख मिटाने के लिए यहाँ बुलाया है। मैं अपने प्यारे पिन्ना के साथ छल नहीं कर सकती। पर मैं पिन्ना को यह भी बता देना चाहती हूँ कि दोष उसमें है, मैं पूरी औरत हूँ। मेरा स्त्रीत्व नष्ट नहीं हुआ है।” उज्जी ने सुना तो दंग रह गया। उसने मुंदरी की ओर देखा, उसकी आँखों में नन्हें बच्चे जैसा भोलापन और अपराध करने के लिए विवश अपराधी की भाँति दयनीयता थी। मुंदरी ने झुककर अपना सिर उसके पैरों पर रख दिया और अपने गर्म तथा खारे आँसुओं से वह उन्हें धोने लगी। तब चाँद पहाड़ी की दूसरी ओर जा चुका था और उसकी कपास जैसी सुफेदी फीकी पड़ने लगी थी।

४. चाँद के पीछे : चाँदनी के नीचे

महुआ की लाल-लाल नयी कोंपलें ! महुआ के रस-भरे लाल फूल !
ऐसी ही यहाँ की लाल धरती ! जब सामने किसी पहाड़ की चढ़ाई होती
है और रंगीन हवा बहती है तो जैसे धरती का सारा खून आसमान में
समाने के लिए उड़ने लगता है । गहरे ढाल पर सरसराती हवा जैसे किसी
गुफा को पाकर समा जाना चाहती है । समतल में वह अंधी होकर
अपने-आप चक्कर काटने लगती है । साल, अर्मा, महुआ और कोहा के
ऊँचे झाड़ । बेरी की घनी और फैली झाड़ियाँ । छिती से छतराई हरी
भरी खेत-सी धरती । सर्प जैसी पगडण्डी इन्हें पार कर नीचे उतरती है ।
सामने एक नाला है । दोनों ओर दो ऊँची खाइयाँ । एक ओर चढ़ने में
साँस फूलती है, दूसरी ओर उतरने में साँस को चैन मिलता है । पहिले
चैन, फिर दम-फूल चढ़ाई । तब काँटों का रास्ता । थोड़ी दूर चलकर
वह सरसों के फूल जैसी छोटी-छोटी फूस की टपरियों में खो जाता है ।
इन्हीं टपरियों के पहिले है, एक छोटा-सा टूटा-फूटा मकान । वर्षों से हवा-
पानी की बौछारें सह रहा है, नाम है—रा जा म ह ल । आने-जानेवाले
सोचते हैं, यहाँ कभी कोई राजा रहा होगा, परन्तु सच तो यह है कि
शायद ही किसी राजा ने कभी यहव गाँ देखा हो । सारे गाँव में केवल
२०-२५ झोपड़ियाँ हैं । सारी झोपड़ियाँ कच्ची माटी और बाँस की
कमचियों की बनी हैं । ऐसे गाँव में ईंट का पक्का मकान, चाहे वह

खण्डहर ही क्यों न हो, किस महल से कम है। इसीलिए इस खण्डहर को सारा गाँव राजामहल कहकर पुकारता है।

“राजामहल” के पीछे एक लम्बा किस्सा है। वह सारे गाँव का सिरदर्द है। कहते हैं कुछ साल पहले दो पंजाबी सिपाही इस गाँव में आये थे। अंग्रेज सरकार से उन्होंने बगावत की थी और यहाँ आकर छिपे थे। उन्हीं पंजाबियों ने इस महल को बनवाया था। दोनों इसी महल में रहते थे। उनमें से एक तो थोड़े दिन के बाद चला गया, दूसरा अकेला रह गया। वह बड़ा नेकदिल आदमी था। सारे गाँव की उसके साथ दोस्ती थी, पर जब से वह झिरिया से दोस्ती रखने लगा था, सारा गाँव चिढ़ गया था। झिरिया सिरहा की बेटी थी। पंजाबी के पास बंदूक थी इसलिए सब उससे डरते थे। कोई मुँह नहीं खोल सकता था, पर सब मुँह बनाते थे। गाँव भर में उसका और झिरिया का प्रेम-किस्सा कहा जाता था। जहाँ देखो इनकी चर्चा होती थी। पंजाबी झिरिया से प्रेम करता था। प्रेम करते-करते वह उससे ब्याह करने के सपने देखने लगा। गाँव इसे कैसे पसन्द करता ? गाँव की बेटी परजात में ब्याह करे ! परजात में ब्याह किया था साल्हो ने। ब्याह क्या हुआ बरियारपेन (एक देवता) बिगड़ गया। पंका हाट से लौट रहा था। गैल में बाघ ने धावा बोल दिया। रूख में चढ़कर उसने जान बचाई। तीन दिन तीन रात वह ऊपर चढ़ा रहा। किसी तरह बचकर वह घर आया तो ताप से उसका अंग-अंग जल उठा। सिरहा ने खूब झाड़-फूँक की, खूब दवा-दारू पिलाई, पर सब बेकार। एक रात कुएँ में डूबकर उसने जान दे दी। सवेरे उसकी लाश तैरती मिली। बेचारी साल्हों फूट-फूट कर रोई। महीना भर बाद उसको लड़की हुई, वह भी अंधी और लँगड़ी। साल्हों को फिर अपनी जात में लौटना पड़ा।

गाँव भर साल्हो का यह किस्सा जानता था। फिर विपदा कौन मोल ले ? कौन अपने हाथ अपने पैर कुल्हाड़ी मारे ? एक दिन सारे गाँव के

१. झाड़-फूँक का काम करनेवाला।

गोंड टँगिया और तीर-कमान लेकर इस बँगले में आ धमके । सबने पंजाबी को खूब समझाया । पंजाबी सीधा था । अपनी बंदूक वह भीतर रखकर खाली हाथ बाहर आ गया, बोला—“इतनी भीड़ आखिर क्यों ?”

“हम तेरी जान लेंगे ।” सब चिल्लाए ।

उसने हाथ जोड़कर कहा—“किसलिए ?”

“तूने हमारे गाँव की लड़की पर नजर डाली है ।”

उसने सिर झुका दिया, बोला—“तुम सब सच कहते हो । मैंने सच-सच नजर उठाई है ।” वह भीतर गया और झिरिया का हाथ पकड़ कर उसे बाहर ले आया—“यह रही तुम्हारी बेटी । इसे सम्हालो और मेरी हत्या कर दो ।”

झिरिया रो रही थी । कह रही थी—“नहीं, मैं इससे प्यार करती हूँ ।” सिरहा ने सबके सामने झिरिया को खूब मारा और उसका ब्याह गाँव के ऐसे लड़के के साथ कर दिया जिसे वह बिल्कुल नहीं चाहती थी । पंजाबी ने किसी से कुछ नहीं कहा । वह राजामहल की परछी में बैठा आँसू बहाता रहा । जिस रात झिरिया का ब्याह हुआ उसी रात वह सामने के पीपल के झाड़ में फन्दा लगाकर लटक गई ।

नरकी पहर (सुबह) पंजाबी ने यह देखा तो बावला हो गया । वह भी मरने को तैयार हो गया । गाँव भर ने समझाया पर वह दीवाना न माना । जहाँ झिरिया को दफनाया गया था, वह वहाँ रोज रात को जाता और घंटों बैठा सिसकियाँ लेता रहता था । कई दिन उसने यही किया । किसी-से वह न बोलता और न किसीकी बात का जवाब देता । मोटा-ताजा आदमी सूखकर काँटा हो गया और एक रात एकाएक गाँव छोड़कर न जाने कहाँ चला गया । जाते समय वह किसीसे कह रहा था कि—झिरिया रोज रात को उससे मिलने बँगले में आती और कहती थी कि वह उसके पास आ जाय ।

पंजाबी चला गया और झिरिया की आत्मा आज भी तड़पती है । वह राजमहल के कोने-कोने में चक्कर लगाकर अपने प्रेमी को खोजा करती

है। मरने के बाद शिरिया चुड़ैल हुई। यह राजामहल अब इसी चुड़ैल का बास समझा जाता है। पंजाबी के बाद रात में आज तक कोई कभी उस महल में नहीं गया। दिन में कभी-कभी कोई घरी-आध-घरी विलम्ब लेता है, बस। यहाँ रहकर कौन अपनी जान दे, किसे अपनी जान से प्यार नहीं है ?

वर्षों बाद आज राजामहल के भाग जागे थे। रियासत का बड़ा अफसर जव गेवड़े में घुसने लगा तो उसने देखा कि सारा गाँव वहाँ जमा है और नाच-कूद में मगन है। नाच में गाँव के छोटे-बड़े, मरद-औरत सभी भाग ले रहे थे, पर उनमें महुआ सबसे अलग दिखती थी। वह जवान बछेरी हरे बाँस की जवान शाखा की तरह झूल रही थी। उसकी धुँआरी देह में कौड़ियों की तरह चमकती दोनों आँखें जैसे हर बटोही को प्रेम का निमन्त्रण देती थीं। अफसर की आँखें महुआ में खो गईं। उसे लगा, जैसे शराब की भट्टी से लाल-लाल बूँदें चू रही हैं। वह उन्हें चाटने के लिए लालायित हो उठा। उसने अपने पैरों की लगाम ढील दी और उस गाँव में रुक गया। अफसर रियासत का मुखिया था। सारे गाँव उसकी मुट्ठी में थे। वह चाहे जिसे जगमग करा दे और चाहे जिसे अपनी मुट्ठी में दबाकर मक्खी की तरह पीस दे। अफसर ने घूमकर सारा गाँव देखा और अन्त में राजामहल में ठहरने का हुक्म दिया। हुक्म सुना तो सारा गाँव काँप गया। गायता (गाँव का मुखिया) अफसर की बिसात जानता था। उसने जाकर अरज की कि वह थानागुडी (घोडुल से लगा रेस्ट हाऊस) में ठहर जाय, राजामहल खतरे से खाली नहीं है, पर अफसर ने उसकी बात न मानी। राजामहल का किस्सा सुनकर वह खूब हँसा, बोला—“बहुत खूब जंगली आदमी, हम आज तुम्हारी चुड़ैल से मिलेगा। उसे देखेगा और उससे बातें करेगा।” गायता लाचार मुँह लटकाये चला आया। उसकी चिन्ता का अन्त नहीं था। उसे इस बात की चिन्ता नहीं थी कि आज अफसर के पास उसे अपने ही गाँव की बेटा को छोड़कर आना पड़ेगा बल्कि वह अफसर की सम्भावित दुर्गति से भयभीत था।

सरकार पर यदि रात को कुछ बीती तो गाँव का गाँव तबाह हो जायगा । उसने गाँव के मुख्य-मुख्य लोगों को बुलाया और चर्चा की । गाँव के जवान प्रसन्न थे, इसलिए कि अफसर को अपनी करनी का फल मिल जायगा, पर बूढ़े दुनिया देखे थे, उनके मन में सचमुच दर्द था ।

और महुआ—वह बेहद खुश थी । महुआ के फूल की तरह वह महक रही थी । उसके चेहरे पर एक नयी चमक थी । इसे देखकर उसका प्रेमी बिन्दा गुस्से में काँप उठता था । उसके ओंठ रह-रहकर फड़फड़ाने लगते थे । वह बार-बार हाथ में टँगिया लेकर खड़ा हो जाता था और राजामहल की ओर आँख फाड़कर इस तरह देखता था मानो वह अफसर सहित महल की एक-एक ईंट को चकनाचूर कर देगा । महुआ से वह प्यार करता था, पूरे मन से उसने प्यार किया था और जो जिससे सच्चा प्यार करता है उस पर अपना एकाधिकार भी मानता है । महुआ उसकी है, फिर उसके सामने एक परदेसी आकर उस पर आँख उठाए, वह कैसे सहता । इसलिए जब जलिया ने महुआ से मजाक किया—“गाँव में अकेली है साइगुती, सबकी नजर सीधी है । हाँ भाई, जब महुआ फूलता है तो चार को कौन देखे ?” तो वह झल्ला पड़ा था । पर महुआ ने उसकी झल्लाहट की फिकर नहीं की थी । वह पहिले की तरह हँस रही थी । जलिया की बात का जवाब देते बोली—“महुआ नहीं चम्पा कली जलिया, वह चम्पा जिसके पास कभी भौंरा नहीं जा सकता ।” सुनकर बिन्दा लूँघर लेकर उसकी ओर दौड़ा था । महुआ ने दाँत बाहर निकाल कर उसे चिढ़ाया और एक गहरा कटाक्ष कर हँसती हुई वह राजामहल की ओर चली गई । उसकी हँसी बिन्दा की छाती में नागफनी के काँटे की तरह चुभ गई । उसे आश्चर्य था महुआ के इस व्यवहार पर, उसे धोखा देकर वह खूब खिले पुंगार की तरह दमक रही थी ।

आसमान में तब पूर्णिमा का पूरा चाँद खिला था और सारा राजा-

महल उसकी चाँदनी में नहा रहा था । महल के दरवाजे बन्द थे और गाँव की सारी झोपड़ियाँ सिसक रही थीं । इसी सिसकी में चाँद ढल गया और करईमुण्डा के काले पत्थरों को फोड़कर सूरज की लाल किरणें सारे गाँव में फैल गईं ।

×

×

×

नरवा के तीर पीपल की चढ़ाई के नीचे जलिया और महुआ की की भेंट हो गई । महुआ को नरवा से आते देख जलिया को आश्चर्य हुआ । उसने व्यंग्य से पूछा—“अरी भागवान्, रात कैसी बीती ?”

“बड़ी मीठी जलिया, बहुत मीठी”—वह जलिया से लिपट गई और उसकी कमर पकड़कर झूलने लगी । फिर तनकर खड़ी हो गई । उसका चमकता चेहरा सूख गया । और आँखों में हलके-से आँसू भर आए । जलिया राजामहल का चमत्कार जानना चाहती थी । महुआ को इस तरह देखकर दुःखी हुई, बोली—“क्या हुआ साइगुती ? झि-रि-या ।”

“हाँ जलिया, झिरिया ने ही तो मेरी इज्जत बचाई है । लोग कहते हैं, हमारे गाँव के हर रास्ते में देवी-देवता रहते हैं । यहाँ के हर पेड़ में बरम रहता है । नदी-नरवा के तीर भूत-प्रेत बसते हैं । गाँव का हर खण्डहर चुड़ैल का घर है, यह सच है, सब कुछ सच है जलिया, यदि हमारे पुरखे हमें यह सब न बता जाते तो शायद हम अब तक धूल में मिल गए होते...” वह कहती जा रही थी । जलिया ने उसे रोक दिया, बोली—“रात भर में पण्डित हो गई, यह पण्डिताई फिर बताना, अरी अभी तो उस चुड़ैल के करतब बता !”

महुआ ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिए—“उसे यों निन्दा भरे शब्दों में गाली न दे । वह चुड़ैल नहीं, हमारी साइगुती है जलिया । ले, मैं तुझे सब कुछ बताती हूँ ।” महुआ वहीं बैठ रही । उसने जलिया का हाथ खींचकर उसे भी बैठा लिया और बोली—“मैं गई तो अफसर ने खड़े होकर मेरा स्वागत किया । इतना बड़ा अफसर, पर मुझे देखकर कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया ! बोला—“बड़ी खूबसूरत हो । जंगल में

इतना सुन्दर फूल कम मिलता है। जिन्दगी में पहिली बार देखा है।” मैं सिर झुकाये चुपचाप बैठी रही। मेरा मन भारी था। एक भारी वेदना और कसक सारे तन-मन को जैसे कचोट जाती थी। बिन्दा ने मुझे प्यार किया था, अपने प्रेमी को आज मैं दगा दे रही थी। पर मेरे अपने हाथ क्या था जलिया ?”

जलिया ने शरात-भरी आँखों से उसकी ओर देखा और कहा—
“हाँ महुआ, तू सच कहती है !”

महुआ के चेहरे पर तब पत्थर जैसी कठोरता थी। बोली—“मैंने तो सोच लिया था जलिया कि अब भुनसारा नहीं होगा और यह रात ही मेरी जिन्दगी को निगल जायगी, पर”

“पर क्या ?”—जलिया बोली।

“हम जंगली हैं न ? जंगल के पत्थर और जंगल के काँटे बचपन से साथ रहे हैं। इन्हींने हमें जीना सिखाया है। मैं फिर जिन्दगी से इतनी जल्दी कैसे हार मान लेती ? अफसर के सामने तब मैंने सीना तान दिया। लाज और शर्म का आँचल पकड़कर मैं इज्जत न बचा पाती। मैंने कल रात प्रेम का वो नाटक रचाया कि बस कुछ न पूछ। सोच रही थी किसी तरह आधी रात इसी नाटक में बिता दूँ। तब तक किसी-न-किसी दरवाजे की संघ से झिरिया प्रकट हो जायगी और मुझे बचा लेगी। रात साँय-साँय करने लगी। गाँव के कुत्तों ने भूँकना तक बन्द कर दिया और चाँद औंधे मुँह लटका धरती को घूरने लगा। राजामहल के खण्डहरों से उसकी उजली किरणें हमें छूने लगीं। मैं बार-बार घूरकर चारों तरफ देखती थी। ईंट का एक-एक टुकड़ा देखा, कहीं कोई आवाज नहीं, कहीं कोई रोशनी नहीं। हवा लड़खड़ाते पत्थरों के सुर सुनती तो लगता झिरिया अब कूदी, तब कूदी। वह छमछम करती राजामहल में आयेगी। आते ही अफसर को पटक देगी और मेरी रक्षा करेगी। पर यह सब कुछ न हुआ। मैं देखते-देखते हैरान हो गई। अफसर भी शायद मेरा नाटक देखते-देखते सन्तुष्ट हो गया था। बोला—“महुआ, कितना सार्थक नाम है तेरा, चल

अब उठ और अपने कोमल हाथों से लॉंदा ढाल । मेरा मन भर आया, पर मैंने ताकत भर अपने आँसू रोके और, और फिर मैंने क्या किया, तू जानती है ? मैंने लॉंदा में चने जैसी माहुर की एक गोली भी घोल दी और जैसे ही अफसर ने उसे मुँह लगाया ••।”

“म हु आ !”—जलिया चीख उठी—“तूने यह क्या किया । नहीं जानती कि वह अफसर रियासत ••।”

“सब जानती हूँ साइगुती, खूब जानती हूँ”—महुआ ने दाँत पीसते हुए कहा—“तू ही बता, आखिर मैं क्या करती ? मेरी आतमा वहाँ तड़प रही थी । मुझे लगता था कि अफसर की गोली उठाकर खुद गोली मार लूँ । पर वह तो मेरी हर हरकत को देख रहा था । उसकी आँखों की पुतलियों में केवल मैं थी । वह मुझे ऐसा घूर-घूरकर देखता था कि जैसे समूचा निगल जाना चाहता है ।”

जलिया बोली—“तूने अच्छा नहीं किया महुआ । पता लगेगा तो जानती है तेरा क्या होगा, गाँव का क्या होगा ?”

“मेरी चिन्ता मत कर जलिया—” महुआ ने उत्तर दिया—“रही गाँव की बात सो उसका कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता । हमारा गाँव क्या, आसपास के सैकड़ों गाँव जानते हैं कि राजामहल में चुड़ैल रहती है । गाँव के हर आदमी ने अफसर से अरज की थी कि वह इस महल में न ठहरे, और—” महुआ ने एक गहरी अँगड़ाई लेकर कहा—“यदि किसी ने सचाई का पता भी लगा लिया और सारा गाँव तबाह भी हो गया तो मुझे दर्द न होगा । गाँव के आदमियों ने मुझे बिगाड़ने में क्या कमी की थी । कहते हैं, गोंड शेर का बच्चा होता है । वह जिन्दा शेर के भी दाँत उखाड़ने की ताकत रखता है, पर चाँद के ऊपर कुछ और है जलिया और चाँद की चाँदनी के नीचे कुछ और । कहने की बात छोड़ । दुनिया में लोग तो न जाने क्या-क्या कहते हैं पर •• तूने देखा, वही दिलेर गोंड अफसर के सामने स्यार बन गए । उन्होंने कुत्ते जैसी अपनी पूछ दबा ली । कोई चीं न कर सका, सिर्फ इसलिए कि वह

रियासत का अफसर है। यानी वह आदमी है और हम सब जानवर हैं, तो ऐसे जानवरों का अन्त होना चाहिए, जलिया।”

दोनों घाटी चढ़कर ऊपर आईं तो देखकर रह गईं। राजामहल के सामने एक बड़ी भीड़ जमा थी और बड़ा शोरगुल हो रहा था। लोग यहाँ-वहाँ दौड़ रहे थे और रह-रहकर झिरिया को कोस रहे थे। बात-की-बात में सैकड़ों मील यह खबर हवा की तरह फैल गई कि—बिंशली के राजामहल की चुड़ैल ने रियासत के सबसे बड़े अफसर की जान ले ली।

५. हिरोँदा

वह नाव की एक कगार में खड़ी थी, दूसरी ओर उसका खिवैया पतवार लिये बैठा था; पर लहरों के हिचकोलों से रह-रहकर नाव डगमगा उठती थी। न जाने कब, कौन लहर, नियति के किस चक्र से आ जाय, उसे अपने में समेट ले और जिस आशा को उसने अपनी मुट्ठी में मुश्किल से बाँधा था, छूटकर बिखर जाय। नीले पानी में उसे अपनी परछाईं दिखाई देती थी। इस परछाईं में भूली-बिसरी जिन्दगी के न जाने कितने चित्र बनते और बिगड़ते, जैसे वर्षों का लेखा-जोखा वहाँ लिखा जा रहा है।

×

×

×

जमाना गुजर गया। तिलईपानी की गलियों में जैसे जिन्दगी बहती थी। जहाँ से वह निकल जाती, एक चिराग जल उठता, उसके जाते ही पूनों की रात सूनी और अँधेली लगती। पके मक्का के रेशों जैसे सफेद वालों में भी हलकी-सी हलचल हो जाती, तब जिनकी उमर अभी-अभी उठ रही है उनका क्या कहना? भेड़ का रेड़ लेकर गलियों से गुजरती थी तो न जाने कितने उसकी हमदर्दी पूछते थे, न जाने कितने अड़कर रास्ते में खड़े हो जाते थे।

आज भी वह लौटी, सूरज का मुँह तब तवा जैसा लाल था। गेंवडे पर उसने रेड़ की रास ढील दी। एक लम्बी हकार लगाई। भेड़ों ने

जैसे ही आजादी पाई कि अपने-अपने गैल-घर की तरफ धूँधने मोड़ दिये। कोरी के पास पचलू से भेंट हो गई, बोला—“आज तो बछेरी बनी है री !”

“हाँ दादा”—हिरौंदा के दाँत उस झुटपुटे में भी चमक रहे थे। लाल तुरई के फूल जैसे उसके ओंठ अपने आप बज उठे।

“सो क्यों ?”—पचलू ने पूछा तो वह जी खोलकर खिलखिलाई और अपने नाक-नकशे को विचित्र ढंग से बनाकर, हाथ में गुलेल खेलते वह मेंढक की तरह आगे उचट गई। पचलू खड़ा देखता रहा। गेंवडे के मोड़ पर सन्तू का कुत्ता था। उसे देखकर भौंकने लगा तो उसने कान पकड़कर दो थप्पड़ उसके सिर पर जड़ दिये—“दुर्र रे—” और वह दुर्र हो गया। कुत्ता तो भाग गया पर पीछे से सन्तू ने उसके हाथ पकड़ लिये—“मेरे जानवर को दलकारती है ?”

“दलकारूँ नहीं तो क्या पूजा करूँ। भला तू ही बता, उसे क्या पड़ी थी कि वह मेरा रास्ता रोके ?” सन्तू मुँह से कुछ नहीं बोला, खड़ा-खड़ा हिरौंदा को निहारता रहा। वह क्या देख रहा था वही जाने, पर दिसा-फिराकत से पटेल हाथ में लुटिया लिये लौट रहा था। उसे देखकर दोनों उत्तर-दक्षिण चले गये।

हिरौंदा उस रात सो नहीं सकी। नदिया के तीर की कगारें रह-रहकर उसकी आँखों में झूलती थीं। वह एक पत्थर में बैठी चूल्हू से पानी पी रही थी कि सामने छप्प की आवाज हुई। घबड़ाकर उसने देखा, भारी साँभर था। वह चिल्लाई तो छिवला की डाल हिलाता जूरन घटिया से नीचे उतर आया। तरकस से एक तीर निकालकर उसने ऐसा निशाना साधा कि पानी पीता साँभर वहीं मछली की तरह तलफने लगा। जूरन ने कमरभर पानी से नदिया पार की। फरसे से जब साँभर ढेर हो गया तो उसने गले के पास मुँह लगाकर खून पीना शुरू कर दिया। हिरौंदा देख रही थी। उसे यह सब अच्छा नहीं लगा, बोली—“जानवर है रे।” जरपू की जीभ खून चाटने में लगी थी, उसने सुनी अनसुनी कर

दी। हिरौंदा के मन ने भी विद्रोह कर दिया था। नदिया पार कर वह पास पहुँच गई। पीछे से उसने जरपू को एक धक्का दिया—“यह क्या कर रहा है रे? घर ले जा तो वियारी में उसका सोंधा-सोंधा मांस छन जाय। तू तो शेर बना है।”

जरपू तनकर खड़ा हो गया। वह जीभ बराबर ओठों पर चलाता रहा। बोला—“आज शेर भी आ जाय तो खून पिये बिना न छोड़ूँगी।”

“घत्त तेरे की—आदमी है।” हिरौंदा ने दोनों हाथ उसके कन्धे पर दे मारे और बनावटी हँसी में दाँत निकाल दिये।

जरपू ने फिर उचाट भरी, नदिया के उस पार पहुँचा। छिवला की ढाल से तूम्बा निकाल लाया और गटगटकर शराब पीने लगा। आधा तूम्बा उसने एक ही साँस में खाली कर दिया। उसने मुँह जब तूम्बा से निकाला तो हिरौंदा ने और शराब पीने से उसे रोका—“ज्यादा हो जायगी रे।” जरपू हँसा। उसने हिरौंदा के दोनों हाथ पकड़ लिये और तूम्बा उसके मुँह में जबरन लगा दिया। हिरौंदा को शराब पीनी पड़ी। जब तूम्बा खाली हो गया तो जरपू ने उसे जोर से उत्तर दिशा की ओर फेंका—“जा रे टिकाने लग।” तूम्बा घटिया के पार कहीं छिप गया।

हिरौंदा और जरपू दोनों मस्त थे। नये लॉंदा की नयी शराब भला अपनी गुलाबी छोड़ सकती है। दोनों ने उतरकर नदिया में खूब गोते लगाये। दोनों झूमते जब पानी से निकले तो बुढ़िया ग्वालिन दही बेचकर उसी रास्ते गाँव लौट रही थी। इन्हें देखकर वह खड़ी हो गई, पर हिरौंदा ने अपनी जीभ बाहर निकालकर उसे चिढ़ाया और जरपू का हाथ खींचकर ले गई। बुढ़िया ग्वालिन अपने आप कुछ बुदबुदाते चली गई।

झुरमुट में दोनों बैठे बातें कर रहे थे। हिरौंदा ने कहा—“तुझ पर तो मैं जान देती हूँ रे, पर दर्ईमारा सन्तू हाथ धोकर पीछे पड़ा है। रोज मेरी देहरी छूता है और बीर के कान भरता है। बीर है सो उस पर जान देता है। जान क्यों न दे, दोनों चिलम-भाई जो ठहरे—दम भाई सो सगा भाई।”

“तू भी मच्छर की बात करती है, एक हाथ में पिसकर पानी हो जाय । तू भर अपना मन न डुलने दे, देखता हूँ तुझे कौन ब्याहता है ।”

हिरौंदा का मन फूल उठा । उसने जरपू की गोद में अपना सिर रख दिया ।

×

×

×

गाँव भर में खबर थी कि तिलई के जंगल में भारी शेर आये हैं । तीन बार हँका हो चुका पर शिकारियों के हाथ एक भी शेर नहीं आया । इस बार जो अफसर आया था उसने जरपू का हाथ गहा । उसे शराब पिलाई, उसकी पीठ थपथपाई, बोला—“तू तो खुद शेर है रे । साँभर का खौलता खून पीता है ।” तारीफ सुनकर जरपू बाँसों उचटा, बोला—“हुजूर, चुटकी वजाते बुला दूँ । वह तो कुत्ते हैं कुत्ते ।” शिकारी ने पाँच का एक नोट उसके हाथ में रख दिया । गाँव भर में ढोल पीट दी गई कि आज हँका होगा, सब अपने-अपने जानवर जतन से रखें ।

रात जब साँय-साँय करने लगी तो घने जंगल में शिकारी अपने दो साथियों के साथ मचान पर बैठा था और जरपू नीचे चारों ओर देख रहा था । उसने मन्तर पढ़कर तीन बार आवाज लगाई और देखते-देखते एक साथ तीन शेर मैदान में कूद पड़े । तीनों हिरन जैसी चौकड़ी भर रहे थे कि शिकारी ने एक साथ तीन गोलियाँ दाग दीं । दो शेर तो साफ बच निकले, एक घायल होकर गिर पड़ा । उसने तीन कुल्लाटी भरीं, जोर से गुराया और लँगड़ाते भाग गया । शिकारी उसके पीछे दौड़ा तो जरपू ने रोक दिया, बोला, “हुजूर, जान खतरे में है, जल्दी मत करो ।” शिकारी जरपू का लोहा तो मान ही गया था । उसके बुलाने से एक नहीं तीन शेर आये थे, न जाने इसके पहिले शेरों का मुँह देखने के लिए ही कितनी कोशिश की गई थी । शाल की एक लकड़ी हाथ में लेकर जरपू उस ओर बढ़ा जहाँ शेर भागा था । नाले के किनारे बेरी के झुरमुट के पास खड़े होकर फिर उसने मन्तर पढ़े और आवाज लगाई तो घायल शेर गुराता लड़कता बाहर आकर मैदान में खड़ा हो गया । वह शिकारी

पर झपटना ही चाहता था कि गोली उसके कलेजे के पार हो गई और वह वहीं निर्जीव हो गया।

शिकारी जरपू के साहस पर मुग्ध था। उसने ऐसा आदमी पहिली बार देखा था। जरपू के लिए यह सब खेल ही था, उसने कहा—“हुजूर, मेरे घर तो रोज रात को एक-न-एक शेर आता है। बाहर धुलीचे में रखे पानी को पीता है, तीन बार दहाड़ता है और फिर चला जाता है।”

शिकारी ने खुशी और आश्चर्य से कहा—“तू उन्हें नहीं मारता ?”

“नहीं, क्यों मारूँ ? वे मेरे भाई हैं बाबू। महादेव ने हम दोनों को बनाया है। दोनों के काम बाँट दिये हैं।”

शिकारी हँसा, और बोला—“आदमी का रिश्ता आदमी से होता है भाई। जानवर भला रिश्तेदारी क्या जाने ? एकाध बार तेरी ही गर्दन पर टूट पड़ेगा...।”

“अरे जाव बाबू”—जरपू ने हाथ उठाकर कहा—“तुम शहर के आदमी हमारे नाते-रिश्ते क्या जानो। हम तो जानवर क्या, पेड़-पत्तों से भी नाता रखते हैं, तभी हमारा पेट भरता है। दुनिया भूखों मरे, अकाल में तलफे, हम लोग कभी भूखे पेट नहीं सोये—कभी कोदों पेज, कभी सिकई पेज, नहीं तो काँदा की जड़ कहाँ गई है। करौंदा के दाने, तेंदू के फल, जरिया की वेर, आम, बेल, गुरबेल, कैथा और चिकोड़ा की भाजी हमसे किसने छीनी है।”

शिकारी ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने आँख उठाकर जरपू की ओर देखा। उसके चेहरे पर आत्मविश्वास की गहरी छाया थी। सन के ढण्ठलों की लाल लौ में उसका खूनी चेहरा मकई के लाल दानों की तरह चमक रहा था। उसकी भरी-पूरी और मांसल काली देह, ऊँचा कद, पिण्डरियों पर साँप जैसी ऐंठन, अँधेरी रात में उसकी निर्भीकता देखकर शिकारी और उसके साथी भी काँप उठते थे। सूखे पत्तों में जब कभी खड़खड़ाहट हो जाती तो शिकारी बन्दूक साधकर चौकता हो जाता। तब जरपू का अट्टहास जंगल के कोने-कोने में गूँज उठता—“धड़ा डरते हो

बाबू । मेरे साथ जब तक हो बन्दूक की याद भूल जाओ ।” शिकारी मुश्किल से थूँक गले के नीचे उतार पाता “—हाँ भाई, मुझे क्या डर—” पर उसकी यह आवाज भी काँपती-सी लगती थी ।

शिकारी के साथी सन के डंठल सुलगाने में लगे रहते थे । एक मुट्ठी बुझ गई तो दूसरी में आग लगा दी । उजेला उनके लिए जरूरी था । सन की लौ जब कभी थोड़ी भी धीमी होती तो वे काँप उठते, घबड़ाकर उसे हवा में झुलाने लगते और जब हवा खाकर आग का मुँह भड़कता तो वे राहत-भरी साँस लेते ।

एक झुरमुट के पास जब यह दल पहुँचा तो जैसे जंगल भर के सारे पत्ते चीखने चिल्लाने लगे । खड़खड़ाहट सुनकर सब खड़े हो गये । शिकारी ने आदत के अनुसार अपनी बन्दूक सम्भाली तो जरपू ने हाथ मारकर उसे रोक दिया—“हुजूर तुम्हारे साथ हमारी भी जान चली जायगी ।” जरपू ने चारों ओर देखा । सब दूर घना अँधेरा था । सारा जंगल साँय-साँय करता खुर्राटे भर रहा था । थोड़ी दूर पर दायीं ओर के पत्ते फिर एकदम खड़खड़ा उठे तो जरपू ने ओली कसी, बोला—“सुअर है बाबू, जंगल का सबसे खूँखार जानवर ।”

“यह भी तुम्हारा भाई होगा”—शिकारी ने कहा ।

“मजाक बन्द करो बाबू, सुअर बहुत चालाक जानवर होता है । छुप-छिपकर न जाने कहाँ से कब हमला कर दे ।”

“तब”—शिकारी ने चिन्तित होते कहा । वह आठ-दस बरस से बराबर शिकार करता आ रहा है, पर जो कुछ उसने आज देखा, सपना था । बुलाने से शेर भी आते हैं, बात समझ में नहीं आ सकती थी । जरपू ने अपने तरकस से एक तीर निकाला और बोला—“तुम सब यहीं खड़े रहो और आग बराबर सुलगाते रहो ।” वह उस ओर बढ़ा जहाँ से पत्तों के खड़खड़ाने की आवाज आ रही थी । यह आवाज—बराबर आगे सरकती-सी लगी । निश्चय ही सुअर धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा था । जरपू एक झाड़ के पीछे छिप गया । थोड़ी देर किसी को पता नहीं रहा कि

जरपू कहाँ है। पत्ते बराबर खड़खड़ाते रहे। लगा कि इस आवाज की दूरी शिकारी से मुश्किल से आधा फर्लांग होगी। उसने अपनी बन्दूक फिर सम्हाली पर तुरन्त ही दर्दभरी एक भयंकर चीख निकली। पत्ते बेतुकी आवाज में लड़खड़ाए। शिकारी के साथियों ने ऊपर आग उठाकर देखा तो सुअर कुलाटें भर रहा था। जरपू वहाँ नहीं दिखा, पर सबको यह समझते देर नहीं लगी कि यह असर उसके तीर का ही है। सुअर दल के पास आया तो पीछे से जरपू उस पर टूट पड़ा। घायल सुअर का सामना करना सरल काम नहीं है। जरपू सारी ताकत लगाकर उसके पंजों को पकड़े था और सुअर इस ताक में था कि पकड़ जरा-सी कमजोर पड़े कि जरपू का खून मुँह लगे। दोनों में बड़ी कशमकश थी। लगता था, दो बराबरी के पहलवान भिड़े हैं। शिकारी अपने दल के साथ इस कुश्ती के पास ही था। उसने कई बार निशाना लगाया और गोली छोड़नी चाही पर जैसे ही वह घोड़े पर हाथ रखता कि निशान के सामने जरपू आ जाता। जरपू जी-जान से भिड़ा था। अन्त में एक गहरी चीख उठी और दोनों पहलवान जमीन पर गिर पड़े। शिकारी ने आगे बढ़कर देखा, सुअर निर्जीव था और जरपू खून से लतपथ हो गया था। सुअर के पंजों से उसका अंग-अंग खुरब गया था।

×

×

×

सुबह होते-होते सनसनी फैल गई। डाक बँगले के सामने सारा गाँव उमड़ आया। एक तरफ सुअर की लाश पड़ी थी, दूसरी ओर शेर चिर निन्द्रा में सो रहा था और यहाँ परछी में जरपू धीरे-धीरे काँप रहा था। शिकारी उसके घावों में मरहम लगा रहा था और उसकी वीरता की कहानी गाँवभर को सुना रहा था।

इसी बीच हिरौंदा वहाँ आ गई। उसने भीड़ चीरकर जब जरपू को छटपटाटे देखा तो उस पर टूट पड़ी। उसकी छाती पर अपना सिर रखकर वह रोंती रही। सन्तू भीड़ में खड़ा बुदबुदा रहा था। कहता था—“देखा, हरामजादी को, इसके बाप ने इनकी सगाई मेरे साथ की है। बेचारा

परकी साल मर गया, वरना अब तक इसे अपनी औरत बना चुका होता।” लोगों ने कई किसम की बातें कीं। किसी ने सन्तू का साथ दिया तो किसी ने हिरौंदा की तारीफ भी की। एक ने तो यहाँ तक कह दिया कि—“शेर और सियार का भला क्या मेल।” सन्तू को उसकी बातें अच्छी न लगीं तो उसे धकियाकर वह चला गया।

जरपू को चैन आया। उसने हिरौंदा के कान में कुछ कहा। हिरौंदा रोना भूल गई। उसने उठकर एक बूढ़े से कुछ कहा। बूढ़ा वहाँ से चला गया और थोड़ी देर में कोई चीज लाकर उसने हिरौंदा को दी। जरपू ने उसे मुँह में रखा। ऊपर से पानी के दो-चार घूँट पिये, शराब की आधी बोतल साफ की और शान्त हो गया। सारी भीड़ जहाँ से आई थी, धुयें की तरह समा गई।

सूरज जब सिर पर आया तो जम्हाई लेकर जरपू उठ बैठा। शिकारी ने उसके दुःखदर्द को पूछा। उसने बायें पैर को झटकारा, उठकर खड़ा हो गया और हँसते हुए बोला—“अब छुट्टी दो बाबू, बेवर की सफाई करना है।”

शिकारी फिर अचरज में था, बोला—“तुम्हें आराम करना चाहिए भाई...”

“आराम—वह इस जिन्दगी में कहाँ। आराम तुम करो। रात भर तकलीफ उठाई है, न जाने कितना खून सूख गया होगा।”

शिकारी ने पाँच का एक और नोट जरपू को थमाया। जरपू ने माथा टेककर विदा ली। हिरौंदा तब भी उसके साथ थी, बोला—“चल, एक घुतिया की कीमत मिल गई।” हिरौंदा बोली—“तेरे तो बड़ी चोट आई है रे। ये पैसे तू ही रख।”

“चोट तो सचमुच लगी है हीरू, पर उसकी गहराई तू क्या जाने! बाहर के घावों को चोट कहती है! यह तो सुअर के चुग्वन के निशान हैं। चोट तो भीतर लगी है, उसके दर्द से मेरा रोम-रोम छटपटा रहा है। दवा भी तो तेरे ही पास है”—जरपू ने जैसे ही अपने रोमानी ओठ

बन्द किये कि हिरौंदा के गाल सेमल के फूल हो गए । उसने सिर नीचे झुका लिया, बोली—“वह तो ठीक है—पर इन पाँच कल्दारों को तू ही क्यों नहीं भँजाता ?”

जरपू ने अपनी भुजाओं को झटका दिया, बोला—“इन पर भरोसा रख, कई पाँच चमकेंगे ।”

जरपू और हिरौंदा की प्रेम-कहानी गाँव की चर्चा बनी । इस चर्चा में सबसे ज्यादा भाग सन्तू ने लिया । उसका साथ गाँव के बूढ़ों ने दिया और जवानों ने भी । बूढ़ों ने इसलिए कि हिरौंदा का बाप सन्तू के साथ उसकी सगाई कर चुका था और समाज के नियमों को तोड़ने की ताकत उनमें नहीं थी । उनका खयाल था कि लड़की की मरजी की कोई कीमत ही नहीं होती । इस उमर में विवेक की जगह बहकावा और ऊपरी दिखावा उसके मानस में ज्यादा असर करते हैं । जवानों का साथ देना स्वाभाविक था । हिरौंदा जहाँ से निकलती थी, बिजली चमक जाती थी । उसकी चकाचौंध में न जाने कितने युवक अपने को लुटाने को तैयार थे पर हिरौंदा ने कभी किसी की ओर तिरछी आँख भी नहीं देखा । एक बार मुक्कद्दम के लड़के ने जोर-जबरदस्ती की तो उसे तीन दिन तक खाट सेना पड़ी थी । हिरौंदा ने भेड़ों के हकालने के डण्डे से उसकी बेजा मरम्मत की थी । यह बात जब जरपू को पता लगी तो वह टँगिया लेकर मैदान में उतरा था, पर हिरौंदा ने बात नहीं बढ़ने दी थी, बोली—“मैं ही निपट चुकी हूँ, तू काहे को सींग मारता है ।”

गाँव में इसलिए हंगामा मच गया । हिरौंदा की सहेलियों ने समझाया कि बड़े-बूढ़ों का कहना मान ले । आज तक गाँव की कोई लड़की इतनी बेशरम नहीं हुई । गाय की तरह उसे जिस खूँटी से बाँध दिया, वह बाँध गई । हिरौंदा पर इन बातों का कोई असर नहीं हुआ । वह अपनी जिद पर अड़ी रही । उसका कहना था कि जिस आदमी को वह नहीं चाहती, उसके घर वह कदापि नहीं जायगी । जरपू ने भी कमर कस ली थी ।

कहता था—गाँववाले प्यार के साथ इतनी ज्यादाती नहीं कर सकते ।
 उमने आखिर ओली कस ली । गाँव में दो दल हो गये । ढोल और
 नगाड़ों ने जुझाऊ बाजों का काम दिया । लात, घूँसों और लट्ट से बात
 शुरू हुई और अंत में टँगिया और फरसा में उतर आई । गाँव भर में
 हाहाकार मच गया । जरा-सी बात ने सारे गाँव में तहलका मचा दिया ।
 सारा गाँव चिन्तित था । झगड़े में न जाने किसका खून हो जाय ।
 आखिर इस कलह का अन्त बुरा हुआ । हर झगड़े का अन्त ही बुरा होता
 है । गेहूँ के साथ धुन की तरह बेचारी ग्वालिन जवरन पिस गई । वह
 कुँए से पानी भरकर लौट रही थी कि इस मजमें की भँवर में फँस गई,
 न जाने किसका घात लगा कि सारी जमीन खून में नहा गई । थाने में
 खबर गई और इस नाटक का अन्त जूरन के बलिदान ने किया । उसे
 जेल में रखा गया, उस पर खून करने का मामला चलाया गया और
 अन्त में उसे बीस बरस की कैद दे दी गई ।

यहाँ हिरौंदा को जवरन सन्तू के गले बाँध दिया गया । वह सचमुच
 गाय की तरह खूँटी से बाँध दी गई । अबला है, प्रतिकार नहीं कर सकती
 इसलिए उसकी देह पर कब्जा हो सकता है, मन पर नहीं । रोते-सिसकते
 हिरौंदा ने कुछ दिन तो यहाँ काटे, पर एक दिन चौरादादर के मधुवा सेठ
 से उसकी भेंट हो गई । वह बाजार आया था । प्यास लगी तो पानी पीने
 सन्तू के घर चला आया । सन्तू तब घर में नहीं था । हिरौंदा ने उसे पानी
 पिलाया, पानी पिलाते उसकी आँख से आँसू की एक बूँद गिरी । यह बूँद
 उसके कलेजे की फफोला थी, न जाने किस धक्के से आँसू बनकर बाहर
 निकल आई । मधुवा के मन में जैसे काँटा चुभा और रात को जब
 सन्तू सो रहा था, हिरौंदा ने वह गाँव छोड़ दिया ।

चौरादादर में मधुवा के साथ हिरौंदा ने नयी जिन्दगी बसाई, पर
 रह-रहकर उसे जरपू की याद सता जाती थी । उसकी जोड़ का कोई
 आदमी उसे नजर नहीं आया । किसी ने साँभर के खोलते खून को
 पीने की हिम्मत नहीं की । किसी ने शेर को बुलाकर उसके साथ खेलने

का साहस नहीं किया। जरपू नहीं था तो जैसे गाँव में कोई नहीं था। जरपू था जिसके पीछे न जाने कितने शहरी लोग और अफसर उस गाँव में आते थे। फिर भी हिरौंदा ने नया दुनिया बसाने में कसर नहीं रखी। पहिले ही साल वह एक लड़के की माँ बनी, ठीक ११ महीने बाद उसको लड़की हुई और फिर साल भर में तीसरा लड़का। इस तरह तीन साल गुजर गए और तीन साल में ही वह मधुवा से तंग आ गई। मधुवा गरीब था, उसके यहाँ खाने के लाले पड़े रहते थे, इसका हिरौंदा को दुःख नहीं था पर शराब के नशे में उसे जब वह व्यर्थ मारता तो उसका रोम-रोम चीख उठता। हिरौंदा के चरित्र पर वह उल्टे-सीधे आरोप भी लगाता। कभी कहता कि कल रात पड़ोसी की आँख तुझ पर लगी थी, कभी कहता कि बेबर साफ करना छोड़कर घंटे भर कहाँ नदारद रही। मधुवा उसपर कड़ी निगाह रखता था। वह एक आदमी को छोड़ चुकी थी इसलिए उसके चरित्र पर उसे सन्देह था। वह क्या जाने कि सन्तू को उसने क्यों छोड़ा।

मधुवा भी आया और चला गया। नन्हें ने हिरौंदा का हाथ गहा पर चार साल बाद एक दिन आम के झाड़ से गिरकर वह भी भी चल बसा। नन्हें अच्छा गुनियाँ था। नदी किनारे एक मढ़िया है, यहीं हर इतवार को उस पर देव सवार होता था। तब गाँव के सारे रोगी वहाँ जमा हो जाते थे। जिसके सिर पर वह हाथ फेरता, आँख बदलते वह उठकर उचटने लगता था। गाँव की ठकुराइन का बच्चा पेट में ही चल बसा था, समस्या कठिन थी पर नन्हें का जैसे ही हाथ लगा कि सब कुछ सुलझ गया। उसने ठकुराइन का पेट दो बार मला। लड़का पानी बनकर बाहर आ गया था। नन्हें की जयकार से ठाकुर की बखरी गूँज उठी थी। नन्हें अपने पीछे दो लड़के छोड़ गया था। दोनों चगन-मगन सारे आँगन में खेलते-खाते फिरते थे, पर हिरौंदा बिना साथी के कभी नहीं रही, उसने सम्पत पर हत्दी डाल दी और उसके घर चली गई। सम्पत इसके पहले दो मिहरिया छोड़ चुका था, आखिरी मिहरिया अपने दोनों लड़कों को छोड़कर चली गई थी। उन्हें देखभाल करने के लिए किसी की जरूरत तो

थी ही और इसीलिए हिरौंदा को उसने हँसते हुए स्वीकार कर लिया । हिरौंदा भी चार बेटों की माँ बनकर गर्व के साथ रहने लगी ।

उसकी जिन्दगी सपाट मैदान की तरह चलती रही । पिछली सारी बातें भूलने का उसने यत्न किया । कभी फिर तिलई गाँव का उसने मुँह नहीं देखा । न जाने कितनी बार उस गाँव से फागुसंगरा और करमा का नेवता आया पर उसने सभी ठुकरा दिए । वह कहती—जब उस गाँव ने मुझे माटी बनाकर फेंक दिया तो मैं उसका मुँह भला क्यों देखूँ । हिरौंदा का बड़ा लड़का अब ब्याहने लायक हो गया था और उसी गाँव में लमसेना भी बन गया था । जिस लड़की के लिए वह लमसेना बना, उसे वह खूब चाहता था । लड़की ने भी कोई दुराव नहीं रखा । दूसरा लड़का बेबर की सफाई में अपनी माँ की मदद करता था । बाकी दो अभी छोटे थे । एक को पटेल के कहने से वह स्कूल भेजने लगी थी ।

एक रात अंधाधुंध मेह गिरा । पानी की धार ने उस झोपड़ी की छत में सैकड़ों छेद कर दिए । सम्पत पानी की मार नहीं सह सका और उसने खटिया पकड़ ली । हिरौंदा ने उसकी बड़ी सेवा की । गाँव-आन-गाँव के किसी गुनियाँ को नहीं छोड़ा, किसी देवी-देवता की पूजा-अर्चना में कसर नहीं रखी, पहुँच का ऐसा कोई वैद्य नहीं बचा जिसकी पुड़िया उसे न चटाई गई हो, पर जब जिन्दगी ही साथ न दे तब दारू क्या करे ? हिरौंदा आँखें लगाए दूर आकाश को देख रही थी । सम्पत के बचने की आशा उसने छोड़ दी थी । क्षितिज के छोर पर तब उसे तिलईपानी, उसकी नदी, नदी की घाटी, घाटी पर जरपू और जरपू के सामने लाठी लिये खड़ा सारा गाँव दिखाई दिया । बीस बरस पुराना किस्सा हो गया था यह । उसे जरपू की याद अनजाने ही कचोटने लगी । बीस बरस में ही तो वह जिहल से लौटनेवाला था, पर...पर जिहल से छूटकर वह कहाँ जाता है, कौन जाने ? बीस बरस में वह भी कितना बदल गया होगा ! वह हिरौंदा को अब पहिचानेगा भी, उस हिरौंदा को जो तब हिरनी की तरह उचाट भरती थी और पहाड़ी नाले की

तरह हँसती रहती थी। क्या जाने हिरौंदा की इसी उचाट और हँसी ने जरपू को खींचा था। अब तो वह सब कुछ नहीं है। जब लड़का ही सयाना होकर प्रेम की धूप-छाँव में आँखमिचौनी खेलने लगा है तो— उसने एक लम्बी साँस ली। तभी झोपड़ी के भीतर से कराहने और खखारने की दर्दभरी आवाज आई। वह उठ कर भीतर गई, एक हिचकी, दो हिचकी और सम्पत सदा के लिए सो गया। उस छोटी-सी झोपड़ी का कोना-कोना चीख उठा। हिरौंदा के सामने अब एकदम अँधेरा था, ऐसा अँधेरा, जहाँ प्रकाश की कभी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।

समय उड़ता है और उसके साथ आदमी की जिन्दगी भी उड़ती है। हिरौंदा की जिन्दगी बहुत उड़ी है लेकिन जरपू को छोड़कर जहाँ भी वह रही, तन से रही है, मन उसका कोई नहीं पा सका, शायद किसी ने पाने की कोशिश भी नहीं की। पर बार-बार तन के समर्पण की अदला-बदली से वह तंग आ गई थी, इसीलिए इस बार सम्पत को उसने अपने मन पर पत्थर रखकर चुना था। चाहे जो हो, वह उसे नहीं छोड़ेगी। कम-से-कम अपनी साँस रहते वह सम्पत के साथ दगा नहीं होने देगी, पर आज सम्पत ही उसे दगा दे गया था। अभी तक बराबर वह छली गई थी, सभी आदमियों ने उसे दगा दिया था, उसने खुद किसी के साथ छल नहीं किया।

सम्पत के शरीर को ढोल-बाजों के साथ गाँववाले ले गये और हँसी-खुशी दफनाकर चले आये। रात को हिरौंदा के घर नाच का मजमा जमा। शराब का टीन खोला गया। एक-एक ने बारी-बारी आकर शराब ढाली और मैदान में कूद पड़े। हिरौंदा ने देखा उनमें सबसे पीछे एक थका-सा अघेड़ आदमी था। उसकी दाढ़ी बड़ी थी, बाल बिखरे थे और धोती की जगह वह पायजामा पहिने हुए था। इसी से उसने हिरौंदा की नजर खींच ली थी। हिरौंदा ने उसे देखा, एक बार, दो बार, तीन बार— उसकी आँख फटी की फटी रह गई। आँखों के आँसू अपने आप सूख गये और उसके सूखे ओठों पर जासौन जैसी लाली दौड़ गई। तब उसे बाहर नृत्य का मजमा भी भार लगने लगा था।

६. सिरदार

सागौन, महुआ, गोटमरे और छतनार इमली के झाड़ों से छाया गाड़ादान नीचे उतरकर एक नाले पर समाप्त हो गया। नाले को पार करते न करते हवा के झोंकों के साथ कुछ अटपटे-से शब्द मेरे कानों में पड़े तो पैर अपने आप अड़ गये। गाँव का कोटवार मेरे साथ था, बोला —“यही आवाज है हुजूर, जहाँ हमें जाना है।”

घाटी चढ़ने की देर थी कि—“रे रे रेला, रे रेला रे, रेलो रे...” की संयुक्त आवाज साफ सुनाई देने लगी। यही था गढ़बंगाल का घोड़ल-राई जैसी छोटी-छोटी झोपड़ियों से भरे गाँव के एकदम बाहर, खजूर, छिवला और कटीली की झाड़ियों से घिरा फूस का एक कच्चा-सा झोपड़ा। हम उसके द्वार पर जब पहुँचे तो सारे लड़के-लड़कियाँ आग को घेरे, हाथ में हाथ डाले, गोल दायरे में नाच रहे थे। नृत्य के साथ गीत के बोल बराबर गूँज रहे थे—

पूना गीकी जोड़ी, जोड़ी गीकी
सिंगार न गीकी ते दोये
बदेना गीकी ते दोये
झलकोना गीकी ते दोये
बरा बरा सिलिंगदार
गीकी तेहलाय.....।^१

गीत में घोडुल की जिन्दगी जैसे बोल रही थी, चेलिक और मोटियारी गीकी (चटाई) से बँधे हैं, वही रात काटती है, इसलिए उसकी उन्हें चिन्ता थी। द्वार पर जब हम पहुँचे तो सिरदार ने (घोडुल का मुखिया), जो नाच के बाहर था, दरवाजे पर आकर हमसे जुहार की। कोटवार ने मेरा परिचय कराया। सिरदार के चेहरे पर खुशी की लाली, अँधेरी रात में अलाव के हलके-से उँजले में भी देखी जा सकती थी। उसने खटिया नीचे डाल दी और हाथ जोड़कर मुझसे बैठने को कहा। फिर एक आवाज उसने लगाई। आवाज सुनकर सारे पैरों ने यन्न की तरह काम किया। थिरकना और हकारना एकदम बन्द हो गया। सारे सदस्यों ने मुझ आकर घेर लिया। मैं अपने साथ मुरमुरा, बीड़ी और घुइंगा (तम्बाकू) ले गया था। कोटवार ने सबको ये चीजें बाँट दीं। मोटियारियों ने बीड़ियाँ तो ले लीं पर पी नहीं। मैंने एक से पूछा—“पीती क्यों नहीं?” उसने शरमाकर कहा—“पिऊँगी।” कोटवार ने बताया कि वह बीड़ी अपने चेलिक (घोडुल का पुरुष सदस्य) को देगी।

गले में नेक, कान में किवला, पैर में पड़ी और बालों में पड़िया खोंसे एक लड़की सामने आई। घुटने तक वह छोटा-सा दुपट्टा पहिने थी। छाती आधी खुली थी पर उसकी उसे चिन्ता नहीं थी। उसकी आँखों में चमक थी, लगता था वे शराब से धुली हुई हैं। मैंने उसके बालों से पड़िया निकाली (बालों में खोंसने की कंघी)। वह खिसखिसाकर हँस दी। अँधेरी रात में भी उसके दाँत चमक उठे। मैंने पूछा—“किसने दी है यह?”

वह बोली—“साइगुती ने।” (साथी)

“वह कौन?”

“सिलिंगदार।”

सिंगार नाम की लड़की की चटाई अभी तक क्यों नहीं उठाई गई।

झलकोना की चटाई भी अभी बिछी है (मुनसारा हो रहा है, लोग क्या कहेंगे) आओ सिलिंगदार, सारी चटाइयाँ उठाकर रख दो।

“कहाँ है तेरा सिलिंगदार ?”

सिलिंगदार बाजू में ही खड़ा था। उसीने हमसे सबसे पहिले जुहार की थी। वही इस घोटुल का सिरदार था। ठिंगना पर गठे बदन का सिलिंगदार इस बार कुछ शरमाया। मैंने उसकी पीठ ठोंकी। वह नीचे सिर झुकाकर मुसकरा दिया। मैंने जब उसके गले की रंग-विरंगी मालाओं को देखा तो उसने तिरछीं आँखों से अपने पास खड़े साथी की तरफ निहारा।

मैंने पूछा—“यह किसने दी है ?”

“झलकोना ने।”

“कौन झलकोना ?”

उसने उसी लड़की के गले में हाथ रख दिया। ये दोनों घोटुल के जोड़े थे—दिनभर जाँगर तोड़कर जंगलों में काम करते हैं और रात को एक-दूसरे से अपना दुःख-सुख कह लेते हैं, फिर एक साथ सो जाते हैं। वे एक-दूसरे के सच्चे साइगुती होते हैं। सिलिंगदार के लिए झलकोना काडाली (शहद की मक्खी) है तो झलकोना के लिए वह गोटमरा (मेंहर का झाड़)।

कोटवार ने कहा—“साहब तुम्हारा नाच देखेगा।”

सिलिंगदार सुनकर खुश हो गया। उसने “इंगे” कहा, जिसका मतलब है—हाँ अवश्य। मैंने पूछा—“क्यों सिलिंगदार, तुम्हारे यहाँ थानागुड़ी (अतिथियों के ठहराने की झोपड़ी) है ?”

“हाँ हुजूर, पर—।”

“पर—क्या ?”

“पर—पर”, वह हिचक रहा था। मैंने उसके कन्धे पर हाथ रखा—“हिचको मत; सिलिंगदार, बोलो क्या कहना चाहते हो ?”

उसने दोनों हाथ जोड़े, बोला—“साहब, पहिले यहाँ गोरे अफसर आते थे, पिछले कुछ सालों से नहीं दिखते, क्या सबके सब छुट्टी पर चले गये हैं ?”

सुनकर मैं रह गया, बोला—“नहीं सिलिंगदार, वे छुट्टी पर नहीं हैं, यहाँ से भगा दिये गये हैं।”

“कहाँ?” वह आश्चर्य में था।

“इस देश के बाहर। उनका देश अलग है। अब यहाँ तुम्हारा राज है, अँग्रेजों का नहीं।”

वह बड़ी दीनता से मुसकराया—“हमारा राज? हम आपके नौकर हैं मालिक, कैसी बात करते हैं।” मैंने उसे बहुत समझाया पर वह मेरी बातों को मेरी उदारता और सरलता का प्रतीक ही मानता रहा। उसे कल्पना भी नहीं हो सकी, कि इस देश का वह राजा है।

बोला—“सरकार, मजाक छोड़ो। जब छुट्टी से गोरे लौट आयें तो उन्हें यहाँ फिर मत भेजना।”

मैंने पूछा—“क्यों?”

उसकी चमकती आँखें झुक गईं। वे अब नम थीं। उनसे आँसू की बूँदें टुलककर विरोनी में आकर उलझ गई थीं।

घोटुल के कुछ सदस्य हमें घेरे खड़े थे। कुछ आग के पास बैठे बीड़ी पी रहे थे और कुछ जोड़े सामने दालान पर एक साथ औंधे लेटे गर्दन उठाये हमारी ओर देख रहे थे। कोटवार ने वेलोसा (घोटुल की एक सदस्या) को बुलाकर थानागुड़ी साफ करने का इशारा किया, तो मैंने उसे रोक दिया—“ठहरो, अभी जल्दी क्या है?”

सिलिंगदार के आँसू अनजाने ही मुझ पर चोट कर गये थे। मैं उनका रहस्य जानना चाहता था। मैंने कहा—“सिलिंगदार, घबड़ाओ नहीं, अब वे गोरे अफसर कभी तुम्हारे यहाँ नहीं आयेंगे। पर तुम्हें उनसे इतनी चिढ़ क्यों है?” सिलिंगदार अब सिसकने लगा था। काफी देर वह सिसकता रहा। मैंने झलकोना से पूछा—“यह क्यों रो रहा है?”

वह बोली—“आप थानागुड़ी में रात ठहरेंगे न, इसलिए।”

मैंने कहा—“वह तो इसीके लिए बनी है।”

“हाँ—पर—” कहते वह रुक गईं। उसने अपनी अँगुली दातों के

बीच रखकर काट ली थी और उससे जो दर्द हुआ था, उसे सी-सी कर सहला रही थी। सिलिंगदार ने गर्दन ऊपर उठाई और आँसू अपने पीकर बोला—“मालिक, जब तक चाहें इस गाँव में ठहरें पर थानागुड़ी अब हमने बन्द कर दी है।”

“सो क्यों?”—मैंने उससे कहा—“मैं विशाली की थानागुड़ी में दो रात ठहरा था। वहाँ के घोडुल के चेलिक और मोटियारी मुझसे नहीं कतराए। उन्होंने मुझे खूब गीत सुनाएँ, नाच दिखाए और मेरी सेवा की।”

“की होगी मालिक, पर हम नहीं करेंगे। बुरा न मानें तो बताऊँ—” और सिलिंगदार ने अपनी राम कहानी अपने-आप सुनानी शुरू कर दी।

X

X

X

कई बरस पहिले, एक ऐसी ही रात को एक गोरा इस घोडुल में आया था। तब सारी रात साँव-साँव कर रही थी आर आसमान की छाती पर अनगिन तारे इधर-उधर दौड़ रहे थे। मैं तब बहुत छोटा था। सुलकसाए इस घोडुल का सिरदार था और जलियारी और सरसारो पर उसकी नजरें सीधी थीं। घोडुल के सिरदार की नजर जिस मोटियारी पर सीधी हो, उसके भाग बड़े होते हैं।

गोरा रात को थानागुड़ी में ठहरा। आधी रात तक वह नाच-गाने देखता रहा। उसने हर मोटियारी के गले के हार देखे, छातियों को छुआ और उनकी भरपूर प्रशंसा की। जलियारो को जब उसने देखा, मुँह फाड़ कर रह गया। अंग्रेजी में अपने आप उसने न जाने क्या कहा और थानागुड़ी में जाकर सो गया।

काफी रात गए घोडुल सूना हो गया था। वहाँ की चहल-पहल नींद के खुर्रातों में समा गई थी। तब तमंचा दिखाकर वह जलियारो को सुलकसाए की बगल से उठाकर घोडुल के बाहर ले गया। सुलकसाए उसे देखता रहा। वह मुँह से कुछ न कह पाया। तमंचा का उसे डर था। जब गोरा घोडुल के बाहर हो गया तब उसने धीरे-धीरे घोडुल के सारे

सदस्यों को जगाया। उसकी दूसरी बाजू में पड़ी सरसारी भी जाग गई थी। अब क्या था, सारे घोड़ों में सनसनी फैल गयी। मुखवान तब बेलदार था। वह गठे बदन का भरा-पूरा जवान, झमझो जिसके हाथ से “गिया-भन” हो चुकी थी और दो दिन बाद ही दोनों का ब्याह होनेवाला था। उसने सुना तो लूँघर लेकर बाहर भागा। सुलकसाए ने उसे रोका। घोड़ों का कानून था, उसे सिरदार की आज्ञा माननी पड़ी, पर वह फन-फना गया था। गुस्से से उसका सारा शरीर काँप रहा था। वह बग़ल-बग़ल घोड़ों के दरवाजे के पास खड़ा था। गोरा थोड़ी देर में जलियारों के कंधे में हाथ डाले नरवा के तीर से हँसते हुए चला आ रहा था। बेलदार ने लूँघर को हवा दिखाकर कंधे पर सीधा रख दिया था। गोरा अब पास आ गया और वह शायद बेलदार का मतलब भी समझ गया था इसलिए उसने तमंचा दिखाया और ऊपर एक “फेर” किया। उसकी आवाज सुनकर सब दहक गये। वह हँसा, खूब हँसा। जलियारों का रंग की सुनहरी किनारवाली धोती पहिने आई थी। घोड़ों की वाली लड़कियों ने उसे इस नये लिबास में देखा तो देखती रहीं।

गोरा बोला—“हम रोज तुम्हारी थानागुडी में आएगा और हर रोज एक-एक पैकी को ऐसी ही सुन्दर साडी देगा।”

सुलकसाए ने हाथ जोड़कर कहा था—“नहीं मालिक, यह यहिसकर हम कहाँ रहेंगे? हमें यह नहीं चाहिए।” गोरा हँसा और चला गया।

दूसरे दिन गाँव भर में यह बात फैल गई। घोड़ों की संचारस के इस बात पर विचार किया—बाहर का आदमी हमारे यहाँ आए और हमारी इज्जत लूटकर चला जाय यह कैसे हो सकता था। हम किसी के कुछ लेने नहीं जाते फिर दूसरे लोग क्यों हमारे पीछे पड़े हैं—सिरदार की आँखों में आँसू थे। वह कहता गया—जंगल हमारा जीवन है बाबू। हम किसी से कुछ माँगने नहीं जाते। महुआ, आम, चार और तेंदू के शाड़ हमारे लिए काफी हैं। थोड़ी-बहुत मिली कनकिएर जाली, लौंदा और चण्डा (लाल चीटों का अचार), दौयका (बड़े मेंढक) पन्ने (छोटे

मेंढक) और घमघा साँप हमारे स्वाद को बदल देते हैं। कपड़े हमें नहीं चाहिए। जंगल के पेड़ हमारे कपड़े थे पर न जाने कब किसने आकर हमें यह लंगोटी दे दी और उसी दिन से गैल से नीचे गिरा दिया। अब जितने गिर गए हैं, उससे नीचे तो न जाएँ। हमें कपड़े नहीं चाहिए, पैसे नहीं चाहिए—हमें अपनी इज्जत चाहिए बाबू, जो एक जानवर भी चाहता है—बाघ के रास्ते से हट जाओ, उसका सामना करने की कोशिश न करो, उसकी इज्जत उसे दो, वह कभी तुम पर धावा नहीं बोलेंगा—पर, पर वह गोरा नहीं माना। उसने अपने मन की की। उसने हमारी सोई नसों को उभार दिया। पंचायत ने उस दिन दिनभर इस पर चर्चा की। उस दिन गाँव का एक भी आदमी काम पर नहीं गया था।

फिर रात आई। फिर तारे जागे और फिर एक घरघराती मोटर नाले के तीर आकर रुक गई। वह गोरा आज आया तो उसीने सबसे जुहार की। उसने सबसे धुलमिलकर बातें कीं। सबको मनमानी महुए की शराब पिलाई और रात गए जब सब अचेत हो गए तो आज सरसारो पर उसने जाल फेंका। उस रात सारा घोटुल बनावट्री नींद में था। वह उसका हाथ पकड़कर बाहर ले गया। सरसारो जब चिल्लाने के लिए मुँह खोलती तो वह तमंचा दिखाकर उसे बन्द कर देता। वह उसे खींचकर नाले के किनारे ले गया और थोड़ी देर के बाद उसे नयी धोती पहिना कर वहाँ से वापिस ले आया। जैसे ही वह घोटुल के दरवाजे पर पहुँचा कि दीवान ने उसका स्वागत किया। गोरे ने खुश होकर चाँदी के कुछ रुपये ऊपर फेंके और जैसे ही वे नीचे आकर गिरे, उनकी आवाज गूँजी कि पीछे से सुलकसाए ने पीठ पर टँगिया का गहरा हाथ दे मारा। उसने शायद तमंचा निकालने के लिए जेब में हाथ डाला था, पर सुलकसाए ने दूसरा हाथ उसकी कलाई पर देकर, हाथ को शरीर से अलग कर दिया। देखते-देखते वह गोरा मछली की तरह तलफने लगा।

सारा घोटुल और सारा गाँव काँप उठा था। पुलिस ने सबको घेर

लिया था। हमारा नेता सुलकसाए जिहल भेज दिया गया। थाने में उसे नंगा कर खूब कोड़े लगाए गये और अन्त में वह सूली पर लटका दिया गया।

इसमें हमारा क्या दोष था बाबू? क्या हमारी कोई इज्जत नहीं? क्या हम आदमी नहीं हैं? कहते हैं, दुनिया में पापी केवल पेट है, वह भूख से भी बड़ा है, जो भूख को भी पचा डालता है—पर हमने न कभी भूख को पहिचाना और न पेट को बड़ा माना। हम वस अपने को जानते हैं। जंगल के हर झाड़ पेड़ को जानते हैं। यहाँ के वर जानवर को पहिचानते हैं और इन सबके साथ मिलकर भाई-चारे के साथ जिन्दगी बिता देते हैं। कोई किसी को कभी दखल नहीं देता, फिर—मैंने देखा, सिलिंगदार का तन-बदन काँप रहा था। उसने मेरी दी बीड़ियाँ फेंक दी थीं। उसकी देखा-देखी घोटुल के सारे सदस्यों ने भी यही किया था। सिलिंगदार उठकर खड़ा हो गया था। सिर की पगड़ी उतारकर उसने अपने आँसू पोछे थे और सिसकता बोला था—“वैसा सिरदार फिर इस घोटुल में आज तक नहीं हुआ सरकार। पर मैं भी उसके नाम पर धब्बा नहीं लगने दूँगा।” उसने गर्दन झुका ली थी जैसे सुलकसाए की याद में उसका रोआँ-रोआँ फूट-फूटकर रो रहा था।

७. विभाजन

नीला आकाश और उसमें खिला पूनों का चाँद—सोता सागर भी जिसे देखकर उन्माद में आ जाता है और उसमें भयंकर तूफान उठने लगते हैं। कुछ ऐसी ही थी साँवली मोटियारी की भरी-पूरी मांसल देह। उसमें ये अनगिनत गुदने के निशान, जैसे बटोही वसन्त को देखकर खेत में लगी सरसों अपने आप फूल उठती है। गाँव के न जाने कितने युवक मोटियारी को प्यासी आँखों से घूरा करते थे। जब वह हमजोली लड़कियों के बीच होती तो भी सबमें अलग दिखती, जैसे अँधेरी रात में अनगिनत तारों के बीच शुक्र चमकता है। लगता था, गोदनेवाले ने अपना सारा कला-कौशल मोटियारी की देह में भर दिया है। वह बचपन से गुदने गुदाती आ रही है। कब से यह क्रम चला, वह नहीं जानती, पर एक बार की बात उसे याद है। तब वह सात-आठ बरस की रही होगी। एक बैगा बुढ़िया उसकी पीठ पर मछली बना रही थी। सूजे की नोक जब मांस में चुभती तो वह चीख उठती थी। इसके पहिले गुदना गुदाते समय उसे इतना दर्द कभी नहीं हुआ था। मछली पूरी नहीं बन पाई थी कि उसने पीठ ऊपर उठा ली थी। उसकी माँ ने तब उसे समझाया था। उसने कहा था कि—“यह सुख का दर्द है बेटी। जिस तरह अँधेरी रात के बाद उँजेली रात आती है, उसी तरह ये निशान ही तेरे जीवन को बदल देंगे। ये तेरे लिए बाँका प्रेमी खोज कर लायेंगे।” माँ ने उसे यह भी बताया था कि गुदने जिन्दगी में

बाँका साथी देकर धरती में स्वर्ग लाते हैं और मरने के बाद यमराज की यातना से बचाते हैं। माँ की यह बातें सुनकर मोटियारी ने अपनी साँध साधी थी और हिम्मत कर पीठपर मछली बनवाई थी। जब मछली बन गई तो पुरा-पड़ास के न जाने कितने लड़के-लड़कियों ने उसकी पीठ ठोंकी थी। तब से मोटियारी बराबर बड़ी लगन के साथ गुदने गुदाती रही और आज तक गुदाती चली आ रही है। यद्यपि अब देह में तिल रखने की भी जगह बाकी नहीं है। अब उसे गाँव के हर युवा लड़के का प्यार मिलता है। अब तक कई लड़के उसके सामने अपने प्यार की झोली फैला चुके हैं, पर वे सब झोलियाँ अब भी रीती हैं।

मोटियारी दिन भर छाती मारकर काम करती है—कभी बेवर की सफाई, कभी जंगल में महुआ, चार और तेंदू की विनाई, तो कभी बनी-मजूरी से बूढ़ी फसल की कटाई। सोने जैसी फसल काटने में उसे मजा आता है, शायद इसलिए कि खेतों में झुकी वालों को देखकर उसका मन विद्रोह कर उठता है। उसने खुद सिर झुकाना कभी नहीं सीखा, सिर झुकाने का कभी समय ही नहीं आया। वह सोचती है, सिर झुकाना लाचारी है और कमजोरी का चिह्न है और ये दोनों बुढ़ापे की निशानी हैं, इसलिए जो फसल बुढ़ा गई है, उसका सिर तुरंत कुचल दिया जाय ताकि वहाँ फिर नयी फसल उगे, जो हर्ष और उमंग से भरी हो, जिसकी हरी देह बार-बार लचक कर नाचे और गाये और उसके साथ किसी तरह का विद्रोह न करे। तभी तो, जब मोटियारी पकी धान और पके गेहूँ के पौधों को काटती है तो सब देखकर दंग रह जाते हैं। उसमें इतनी ताकत कहाँ से आ जाती है। जब गेहूँ और धान के हरे जवान पौधे लहराते हैं और हवा उन्हें चूमती है तो जैसे सारा खेत अँगड़ाई लेने लगता है। साँप जैसी ऐंठन उसके हर कोने से उठने लगती है और यह देखकर मोटियारी भी एक मीठी जम्हाई लेती है, उसे लगता है कि वह दौड़कर खेत की सारी फसल को समेट ले और लिपटकर उसका भरपूर चुम्बन कर ले। कभी वह मस्ती में आकर ददरिया और बिरहा भी छेड़ देती है। उसके गीतों को

हवा की लहरें दूर-दूर ले जाकर बिखेर देती हैं और जब वे किसी मनचले युवक के कान में पड़ती हैं तो वह अपने को भूल जाता है, पागल होकर उसकी तरफ दौड़ा आता है। तब मोटियारी खड़ी-खड़ी हँसती रहती है। आकाश में बिजली की तरह उसके दांत चमकते हैं और उन्हें देखकर बड़े-बड़े प्रेमियों की हिम्मत पस्त पड़ जाती है।

एक दिन मोटियारी हिरदे के बाँध की मेंड़ पर खड़ी थी। खेत में चने के हरे झाड़ खड़े थे। एक-एक झाड़ सिर से पैर तक घंटियों से लदा था। हरे झाड़ों में गोल और नुकीली घंटियाँ—मोटियारी उन्हें ताक रही थी। उसकी आँखें झाड़ों पर सिमटी थीं। शायद वह सोच रही थी कि इन सुन्दर और हरी घंटियों में भी काँटे जैसी नोंक क्यों हैं? काफी देर तक वह अपलक खेत को देखती रही और फिर एकाएक न जाने क्या उमंग उठी कि उसने तान छेड़ दी। वह गाती रही और डोलती रही और जब उसने अपनी नजर खेत से उठाकर सामने डाली तो वहाँ एक युवक खड़ा दिखा—काँधे में तीर और कमान रखे। उसे देखकर मोटियारी एक पल को तो मुसकरा दी, पर फिर अपने-आप उसकी त्यौरियाँ चढ़ गईं, बोली—“क्या घूरता है रे? कहाँ का है?”

“तुझे, घरती का हूँ”—उसने मुसकरा दिया। उसकी मुसकराहट ने जैसे मोटियारी को काट खाया, बोली—“निरा गँवार है, शकल से तो बैगा लगता है।”

“वही हूँ भी”—वह बोला—“मेरी छाती काँप रही है। तुझे देखा तो सहारा पाने के लिए चला आया।”

मोटियारी का चेहरा कुछ झुका, शायद वह शरमा गई थी, पर तुरन्त ही उसने अपने सिर को एक झटका दिया और आँखें चढ़ाकर बोली—“बड़ा शिकारी दिखता है। जान न पहिचान चाहे जिसे छेड़ने चला।”

वह उसके पास आ गया, काँपने का उपक्रम करने लगा, बोला—“सच कहता हूँ गोरी, डर लग रहा है।”

“डर, बैगा होकर । काहे का ?”

“र—क—सा ।” उसने अपने सारे शरीर में भय के चिह्न समेटे ।

“दिन में रक्षा ।” मोटियारी ने आश्चर्य से पूछा ।

“हाँ”—वह बोला—“पेले बाजू की मेंड़ में, क्या आग उगलता था, प्रेम का अपना सारा पागलपन जैसे वह धरती पर उगल देना चाहता है । मैं तो काँप उठा री ।”

“ये तीर और कमान क्या देखने के हैं ?”—मोटियारी ने कहा ।

“यही समझ ले । उसे देखकर तो मेरी छाती काँप गई । इन्हें क्या सम्हालता, और—”

पास आकर उसने मोटियारी के हाथ पकड़ लिये, यहाँ से चल भाग चलें, किसी झाड़ की आड़ में, आता होगा दर्दमारा ।”

मोटियारी सिहरी । उसने चारों तरफ देखा । काँपते शब्दों बोली—
“यहाँ तो नहीं दिखता रे ।”

“वह वह, वह देख”—उसने बायीं ओर इशारा किया और फिर मोटियारी का हाथ खींचकर बोला—“भाग, इसी तरफ आ रहा है ।”
दोनों भागने लगे । बीच-बीच में वह युवक बराबर आवाज लगाता रहा—“वह आया, वह ।” काफी दूर जाने के बाद, एक दूसरे खेत की मेंड़ पर, जरिया के घने झाड़ों की आड़ में दोनों ठहर गये । मोटियारी काँप रही थी, बोली—“मुझे तो डर लगता है रे, देख रक्षा आ तो नहीं रहा ।” युवक ने एक कदम बाहर आकर यहाँ-वहाँ देखा, बोला—“अभी दिखता तो नहीं, क्या जाने कहाँ है ? किसी आड़ में न हो ।”

“तो चल, हम गेंवड़े की तरफ भाग चलें”—मोटियारी ने कहा ।

“वक्त”—वह बोला—“मेरे रहते इतना डरती है । थोड़ा यहीं विलम्ब लें, अपने आप भाग जायगा निगोड़ा ।”

“डरता तो तू है रे”—मोटियारी ने साहस बटोरकर कहा—“अब शेखी मारने लगा । जाने कहाँ से अपना डर मिटाने के लिए मेरी तरफ भागता आ रहा है ।”

“हूँ”—उसने कहा और मुसकरा दिया ।

वह जमीन पर बैठ गया । मोटियारी का हाथ पकड़कर उसने खींचा । उसकी बाजू में वह भी बैठ गई । छिवला का एक पत्ता तोड़कर वह युवक हवा करने लगा, बोला—“तू जो न मिलती तो जान निकल जाती । मेरा तो करेजा मुँह तक आ रहा था ।” “कैसा बैगा है तू, बैगा तो जंगल का राजा होता है—जरूर तेरी नसल में फरक है ।” मोटियारी ने अपनी धोती का छोर दाँतों में दबा लिया । उसे डर था कहीं वह बिगड़ न जाय, पर युवक नहीं बिगड़ा, बोला—“गोंड़िन का साथ हो गया है, नसल में फरक आ ही गया ।” उसने अपनी टेंट से छिवला के पत्तों की चिलम निकाली, उसमें तम्बाकू भरी और चकमक से आग सुलगाई । उसका कश खींचते हुए बोला—“अब चैन आया, तेरा नाम क्या है री ?”

“मोटियारी”—वह बोली ।

“असल नाम बता । यह तो तेरे घोडुल की निशानी है ।”

“नहीं रे, यही मेरा असल नाम भी है ।”

“नाम से भी मोटियारी और काम से भी मोटियारी ।”—उसने आश्चर्य से कहा । मोटियारी ने हँस दिया ।—“तू कहाँ का चेलिक है रे । उसकी हँसी में शरारत थी । युवक उसे भाँप गया, बोला—“काश ! हमारी जात में चेलिक होते । तेरा घोडुल ही अपना बनाता । सचमुच घोडुल तो सपना है री, हमारे लिए”—उसने एक लम्बी साँस ली । मोटियारी चुप रही । वह कहता गया—“लोग मुझे लामू कहकर पुकारते हैं—पीपरदेही में रहता हूँ । नाम तो तूने सुना होगा ?”

“सुना क्या, कई बार देख आई हूँ । तू जानता है टिटरू को ?—ठगुआ को ?—ननकू को ?—फगनी को ?”

“हाँ हाँ, क्यों नहीं, इन सबको जानता हूँ”—लामू बोला—“टिटरू तो मेरा जिगरी है । ननकू जरा छोटा बैठता है, इसलिए कककू कहता है, ठगुआ तो पड़ोसी है और फगनी उसकी न पूल, लड़की है बाँकी,

पर निगोड़ी उचटती ज्यादा है।” मोटियारी ने अपने दोनों होंठ दबाकर हँसी रोकी, बोली—“मतलब ?” “यही”—उसने कहा—“पैसे के पीछे जान देती है। गाँव में जितने अफसर अब तक आए हैं, सबकी सेवा की है उसने। हमारी जात में होती तो काटकर रख देता।” “मुना है फगुआ में उसका ब्याह होनेवाला है”—मोटियारी ने पूछा।

“सपने की बात करती है, मोटियारी”—लामू बोला—“उस फरफन्दन से भला कौन ब्याह करेगा। हाँ, तीन-चार बच्चोंवाला रँडुआ भले ही राँड़ को पकड़ ले।”

“दिखती तो ऐसी नहीं लामू। बोलने में मीठी है और सूरत भी तो तुरइया है।”

“यही तो खराबी है मोटी”—लामू बोला—“काँटा फूल में ही चुभता है और भौंरा भी तो चमेली को देखता है।” मोटियारी सम्हलकर बैठ गई। पीछे कुछ सूखे पत्ते पड़े थे। उन्हें समेटकर उसने उन्हें पीछे लगा लिया और टिककर बैठ गई। बोली—“अच्छा, देख भला, रक्शा अब कहाँ है ? जाना है।” लामू ने जरिया की छाँव के बाहर आकर चारों तरफ देखा, बोला—“वह खड़ा है, वह।” और फिर भाग कर मोटियारी के पास सिमिटकर बैठ गया। मोटियारी उसी तरह बैठी रही, बोली—“अजीब बात है, अभी तक रात में सताता था, अब दिन में भी सताने लगा।”

“हाँ मोटियारी”, लामू ने भय के चिह्न अपने चेहरे पर लाते हुए कहा।

मोटियारी उठकर खड़ी हो गई। उसने लामू के हाथ से कमान छीन ली, बोली—“कैसा पहाड़ी है। बैगा तो खँखार शेर के भी दाँत उखाड़ देता है। चल, रक्शे को मैं देखती हूँ।”

“नहीं मोटियारी”—लामू बोला—“अब तो और मुसीबत होगी, तू जो साथ में है। जानती है, रक्शा निराश प्रेमी होता है। वह प्रेम से पागल घूमता रहता है और जवान कुमारियों को यदि कहीं देख लेता है तो मुँह की सारी आग उन पर उगलता है। इसीसे मुझे अपने से ज्यादा

तेरा डर लगता है।”

“डरपोंक कहीं का। पहिली बार ऐसा डरपोंक बैगा देख रही हूँ।
आखिर है तो वह जानवर ही।”

“जानवर नहीं, भूत है”—लामू ने कहा।

“ऐं ! भूत है ?—पर कब तक हम ठहरेंगे ? मैं बायें हाथ के रास्ते से जाती हूँ, पीछे के गेंवड़े से गाँव चली जाऊँगी।” उसने कमान लामू को लौटा दी और जाने लगी। लामू ने उठकर उसका हाथ पकड़ लिया, बोला—“देख, वह आ रहा है।”

अबकी बार मोटियारी ने बड़ी हिम्मत दिखाई, बोली—“आने दे, सामने आयगा तो निबट लूँगी। गेंवड़े तक गाँव का कोई मिल ही जायगा।”

“नहीं मोटियारी, घड़ी भर और बिलम ले”—अबकी बार लामू के स्वर में आग्रह था।

“नहीं”—मोटियारी ने फिर कदम बढ़ाए तो लामू ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये,—बोला—“एक बात कहूँ मोटी।”

“कह”—वह बोली। “तेरा नाम मेरे गाँव तक पहुँच गया है। सुना है नाचती क्या है, हवा में उड़ती है। एक पैतरा तो दिखा दे।” मोटियारी ने झटका देकर अपना हाथ छुड़ा लिया, बोली—“इतने उँजले में हाथ पकड़ता है, डर नहीं लगता ? कोई देख लेगा तो ?” “अरी, डर लगता तो दिन को रक्षा मेरे पीछे क्यों पड़ता।” “जरूर तू किसी ऐसी लड़की से प्यार करता है, जिसे वह करता रहा होगा”—मोटियारी ने व्यंग्य कसा।

लामू चौंका। उसे लगा कहीं मोटियारी सचमुच गलत न समझ बैठे। बोला—“प्यार तो कई ने जताया है री, पर जब से तेरी सूत देखी है, सबको भूल गया हूँ।”

“मेरी सूत ! वह तो तूने आज देखी है रे। कितना झूठ बोलता है !”

“मोटियारी हँसी।” तू क्या जाने री, परकी साल तू फागुसंगरा में

हमारे गाँव आई थी, बस तभी से साँप लोट रहा है।”

“चल जा।”—वह बोली—“परजात में शादी करने चला है, जानता है क्या होता है परजात में शादी करने से?” लामू ने सिर हिला-कर नहीं कर दी।

वह बोली—“परजात में शादी की थी केतू ने, वैगन थी वह। एक दिन वह बाजार से लौट रहा था कि रास्ते में शेर ने उस पर धावा बोल दिया। झाड़ में चढ़कर वह मुश्किल से जान बचा पाया। तीन दिन बाद टौरिया के पास शेर ने उसे फिर छेड़ा, पर किसी तरह वह बच निकला। तब उसी रात वह शेर उसकी सार से वह बैल ले गया जिसे वह महीने भर पहले ही खरीदकर लाया था। उसके बाद जानता है क्या हुआ?”

“क्या हुआ मोटियारी?”—लामू ने पास आकर पूछा।

“यही कि उनका लड़का जब हुआ तो अंधा और बहिरा निकला। गुनियाँ ने खूब झाड़-फूँक की, असर कुछ न हुआ। दूसरे दिन उसकी औरत पर न जाने कौन भूत सवार हुआ कि उसने कुएँ में डूबकर अपनी जान दे दी। यह मिला परजात में शादी करने का मजा।” मोटियारी ने बात पूरी कर लामू की ओर देखा। वह खड़ा-खड़ा हँस रहा था, बोला—“नहीं जानती? वैगा हूँ। शेर मेरा भाई है, मुझे तंग नहीं कर सकता।”

“देख ली तेरी वीरता”—मोटियारी बोली—“रक्षा से डरकर दौड़ा आया मेरा सहारा लेने, कितना वीर है!” लामू हँसा, खूब हँसा। इतना कि उसके पेट में बल पड़ने लगे, बोला—“कैसा बनाया। कितनी मूर्ख है! दिन में कहीं रक्षा आता है?” वह हँसता गया। मोटियारी को गुस्सा आ गया। उसने अपनी आँखें लाल-पीली कीं, बोली—“बड़ा आया प्यार का ठेकेदार। कोई देख लेता और उससे मैं रक्षा की बात करती तो हँसी मेरी होती। तुझे क्या है, तू मेरे बारे में भी वही कहता जो अभी फगनी के बारे में कह रहा था।”

“नहीं मोटियारी, कहाँ तू और कहाँ फगनी”—वह बोला। मोटियारी ने उसे आगे बोलने से रोक दिया, बोली—“बस, रहने दे।” और

गेंवडे की तरफ वह दौड़ गई। लामू पीछे लगा, पर सामने से कोई आता दिखा तो खड़ा हो गया। मोटियारी ने लौटकर जीभ दिखाई और अँगूठा बताया और आगे बढ़ गई। फिर पीछे लौटकर उसने नहीं देखा। लामू खड़ा-खड़ा उसे निहारता रहा, तब तक जब तक वह मेंढ छोड़कर गेंवडे की पगडण्डी में नहीं उतर गई।

बियारी के बाद मोटियारी ने अपना सिंगार किया। लाल-हरा कुँदरा चोटियों में बाँधा और गले में लाल-सफेद घुँघचियों की माला पहिनी। अपना बिछावन लेकर रोज की तरह वह घोटुल की ओर चली गई। दस-ग्यारह साल हो गये, वह इसी तरह रोज घोटुल जाती है। जब वह पाँच साल की थी तब से घोटुल जा रही है ! पहले दिन उसका बाप उसे साथ लाया था। मुंशी के सुपुर्द मोटियारी को कर वह चला गया था। मुंशी ने तब उसे घोटुल के सारे नियम समझाये थे। धीरे-धीरे वह सब कुछ समझ गई थी। घोटुल की तरफ उसका आकर्षण अपने-आप बढ़ गया था और वह साँझ होने का रोज रास्ता देखती रहती थी। उसके सामने घोटुल में अब तक न जाने कितने समारोह हो चुके थे, न जाने कितने जोड़े ब्याहे जा चुके थे। न जाने कितने युवकों से नाच और गाने में वह होड़ लगा चुकी थी और कितने ही युवकों की प्रेम-भरी नजरें उस पर सीधी थीं, पर वह जिसे चाहती थी वह था—सीतल। तीन-चार साल सीतल के साथ उसने हँसी-खुशी में बिताये थे। सीतल बाँका नवजवान था। जात का गोंड़ था पर बैगा से कम वीरता उसमें नहीं थी। था भी खूबसूरत। उसी गाँव में वह रहता था। लहक्री उसे खूब आते थे और करमा के पैंतरे में तो बस उसकी जोड़ नहीं थी। शैला होता तो बाँसों उछलता था, ददरिया में अपनी देह केंचुए की तरह सिकोड़ता था। वह अपने नाच के लिए दूर-दूर प्रसिद्ध था। उसके साथ मोटियारी को भी जाने को मिलता और इस तरह मोटियारी भी ख्याति पा गई थी। अब वह नहीं रहा। मोटियारी को घोटुल जाना पड़ता है

इसीलिए जाती है। ऐसा बाँका उसे कोई नहीं मिला जो उसकी आँखों की पुतलियों में समा जाय। सीतल ने मोटियारी के पीछे ही अपनी जान दे दी थी। पीपरदेही के मालगुजार के बेटे ने एक रात मोटियारी को जवरन अपने कमरे में बन्द रखा। सीतल ने दूसरे दिन सवेरे-सवेरे टँगिया से मालगुजार के बेटे के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और खुद जाकर अपने को पुलिस के हवाले कर दिया था। उस पर दो बरस मुकदमा चला और अन्त में फाँसी की सजा हो गई। उसके बाद मोटियारी ने किसीसे अपना सम्बन्ध नहीं जोड़ा। घोडुल के नियमों के अनुसार उसे किसी-न-किसी युवक के सहारे रहना पड़ता, पर उसने इस चुनाव में कोई दिल-चस्पी नहीं दिखाई और न किसी युवक को अपना मन दिया।

आज जब वह घोडुल में आई तो रोज की तरह वहाँ चहल-पहल थी। एक कोने में अपना बिछावन रखकर वह भी धूनी के सहारे बैठ गई। वहाँ घोडुल के और सदस्य भी बैठे थे। बेलोसा और दुलोसा^१ ने सबको अगले दिन का काम बाँटा। चालकी^२ ने सबको तम्बाकू दी। जमादार^३ ने कंधियाँ बाँटी। मुंशी^४ ने सबकी हाजिरी ली और मुखवान^५ ने सबकी खैर-खुशी पूछी। मुंशी ने फिर तुरही बजाई। साँवरिया ने सुझाव रखा कि आज नाच के बदले किस्सा-कहानी हो तो कैसा रहेगा ?

“किस्सा”—गुरमाटिया बोली—“बहुत अच्छा रहेगा। सुना है बैगा राजा अच्छा किस्सा जानते हैं। गाँव में एक बैगा आया है, पंचों की राय हो तो उसे बुला लिया जाय।” मोटियारी ने सुना तो रह गई। यह कौन बैगा है, कहीं वही तो पीछे नहीं लगा। मुंशी ने सबकी राय

१. बेलोसा और दुलोसा—घोडुल की रानियाँ होती हैं जो सदस्यों को काम बाँटती हैं।

२. चालकी—घोडुल का सदस्य, जिसका काम सदस्यों को तम्बाकू बाँटना है।

३. जमादार सदस्यों को कंधी बाँटता है।

४. मुंशी—घोडुल इंचार्ज।

५. निरीक्षक सदस्य।

बोला ।

वैगा ने इन सब बातों पर कान नहीं दिया । वह मोटियारी को देखता रहा । मोटियारी छुई-मुई हो रही थी । उसकी बाजू में रतीराम बैठा था । रतीराम घोटुल का पुराना सदस्य है । उसमें न जाने क्या खराबी है कि इतने समय के बाद भी वह किसी लड़की का प्यार नहीं पा सका । उसके सामने दर्जनों जोड़े घोटुल से निकलकर चले गये, पर वह जहाँ का तहाँ है । नियम के अनुसार कुछ दिनों से मोटियारी—घोटुल में उसके साथ रहती थी । इस बार उसने बड़ी आशाएँ लगा ली थीं । सोचता था, मोटियारी जिसे चाहती थी, वह तो दुनिया छोड़कर चला गया, अब उसका रास्ता आसान हो गया है । इस बार उसे निराश नहीं होना पड़ेगा । वह चुपचाप कहानी सुन रहा था और कभी मोटियारी को देखता तो कभी वैगा को । कभी-कभी उसकी दूसरी बाजू में बैठी गुर-मटिया यह सब देखकर खिलखिला पड़ती तो वह झेंप जाता और अपनी गर्दन नीचे झुका लेता । वैगा कह रहा था—“तो दोनों जरिया की छाँव में बैठ गये ।”

“ठहरो !”—मोटियारी ने एकाएक उसे रोक दिया । वह उठकर खड़ी हो गई । बोली—“ऐसी गप्पें हमें नहीं सुननी ।” सबकी नजरें मोटियारी पर अटक गईं । वैगा ने हँस दिया, बोला—“यह तुम्हारी राय है मोटियारी, पंचों की नहीं ।”

“हाँ, वैगा ठीक कहता है”—चारों तरफ से आवाजें आईं । वैगा ने हाथ का इशारा करते हुए कहा—“तुम बैठ सकती हो । किस्सा तो मैं यहीं खतम कर रहा हूँ । अब मैं पंचों से यह पूछना चाहता था कि यदि यह लड़की किसी घोटुल की सदस्य हो, तो क्या उसका ब्याह उस वैगा से हो सकता है ? उस दिन दोनों ब्याह करने का वचन दे चुके हैं ।” मोटियारी सिमिट गई और घोटुल के सदस्य एक-दूसरे की ओर हक्का-बक्का देखने लगे । एक चेलिक ने खड़े होकर कहा—“नहीं हो सकता । उस पर पहिले हमारा अधिकार है ।” दूसरा बोला—“फिर

ली। सबने हामी भर दी तो बैगा को बुलाया गया, वह लामू ही था। मोटियारी ने देखा तो उसका खून सूख गया। सोचने लगी, वह कहीं फिर हरकत न करे या दिन की बात ही सबसे न कह दे। मुंशी ने बैगा से कोई वीरता-भरी कहानी सुनाने को कहा तो बैगा ने हँस दिया। बोला—“पागल हुए हो? रात को भी क्या किसी से लड़ना है? मैं तो ऐसी मजेदार कहानी सुनाऊँगा कि जिसे सुनकर तुम सबको मजा आये।” बेलोसा ने उसकी बात का समर्थन किया। बैगा ने कहानी शुरू कर दी, बोला—‘एक गोंड़ लड़की जैसी सुन्दरता पाना मुश्किल होता है। बैगा वीर होता है, पर सुन्दरता के लिए तरसता है, इसलिए एक दिन एक बैगा एक गोंड़ लड़की से प्यार कर बैठा। वह अपना प्यार कैसे जताए, यह उसके सामने उलझन थी पर एक दिन वह भी सुलझ गई।’

“सूरज ठीक सिर पर था और जैसे आँधा होकर सारे खेत को अपनी जलती आँखों से निहार रहा था। एक बैगा पूरव से आ रहा था। वह हाँफ रहा था। उसने एक बाँध की मेंड़ पर उस गोड़िन को देखा। बस, वह वहीं ठहर गया। और चिल्लाने लगा—‘रक्षा, रक्षा।’ किस्सा कहते-कहते उसने मोटियारी की तरफ देखा। मोटियारी ने शरम से अपनी पलकें झुका लीं पर फिर भय के चिह्न बनाकर उसने सिर ऊपर उठाया और बैगा की ओर चुप रहने का इशारा किया। लामू ने मुसकरा दिया और अपने गले में जोर देकर बोला—“हाँ, तो उस लड़की ने उसकी रक्षा की रक्षा से। रक्षा जैसे लड़की को देखकर भाग गया। बात उल्टी है पर सच है। वैसे रक्षा क्वारी लड़कियों को देखकर और आग उगलता है पर उस दिन उसने ऐसा नहीं किया। शायद वह लड़की कोई देवी रही है।”

“देवी!” मुंशी ने आश्चर्य से कहा—“वह कहाँ है? हमें उसकी पूजा करनी चाहिए।” बेलोसा खूब खिलखिलाकर हँसी, बोली—“सच-मुच सब पागल हो गए। कहीं रक्षा दिन में आता है?”

“अरे भाई, यह तो कहानी है। सब उलझ कैसे गये?”—साँवरिया

बोला ।

वैगा ने इन सब बातों पर कान नहीं दिया । वह मोटियारी को देखता रहा । मोटियारी छुई-मुई हो रही थी । उसकी बाजू में रतीराम बैठा था । रतीराम घोटुल का पुराना सदस्य है । उसमें न जाने क्या खराबी है कि इतने समय के बाद भी वह किसी लड़की का प्यार नहीं पा सका । उसके सामने दर्जनों जोड़े घोटुल से निकलकर चले गये, पर वह जहाँ का तहाँ है । नियम के अनुसार कुछ दिनों से मोटियारी—घोटुल में उसके साथ रहती थी । इस बार उसने बड़ी आशाएँ लगा ली थीं । सोचता था, मोटियारी जिसे चाहती थी, वह तो दुनिया छोड़कर चला गया, अब उसका रास्ता आसान हो गया है । इस बार उसे निराश नहीं होना पड़ेगा । वह चुपचाप कहानी सुन रहा था और कभी मोटियारी को देखता तो कभी वैगा को । कभी-कभी उसकी दूसरी बाजू में बैठी गुर-मटिया यह सब देखकर खिलखिला पड़ती तो वह झेंप जाता और अपनी गर्दन नीचे झुका लेता । वैगा कह रहा था—“तो दोनों जरिया की छाँव में बैठ गये ।”

“ठहरो !”—मोटियारी ने एकाएक उसे रोक दिया । वह उठकर खड़ी हो गई । बोली—“ऐसी गप्पें हमें नहीं सुननी ।” सबकी नजरें मोटियारी पर अटक गईं । वैगा ने हँस दिया, बोला—“यह तुम्हारी राय है मोटियारी, पंचों की नहीं ।”

“हाँ, वैगा ठीक कहता है”—चारों तरफ से आवाजें आईं । वैगा ने हाथ का इशारा करते हुए कहा—“तुम बैठ सकती हो । किस्सा तो मैं यहीं खतम कर रहा हूँ । अब मैं पंचों से यह पूछना चाहता था कि यदि यह लड़की किसी घोटुल की सदस्य हो, तो क्या उसका ब्याह उस वैगा से हो सकता है ? उस दिन दोनों ब्याह करने का वचन दे चुके हैं ।” मोटियारी सिमिट गई और घोटुल के सदस्य एक-दूसरे की ओर हक्का-बक्का देखने लगे । एक चेलिक ने खड़े होकर कहा—“नहीं हो सकता । उस पर पहिले हमारा अधिकार है ।” दूसरा बोला—“फिर

वह प्रेमी जात का बैगा है ।—बैगा हमारा पुरोहित होता है ।”

“इसीलिए तो उसे तुम्हारी जात की लड़की लेने का अधिकार है” लामू ने कहा । चालकी खड़ा हो गया । शान्त भाव से बोला—“लेकिन पंचो, तुम सब भूलते हो कैतू को । उसने एक बैगन को मिहरिया बनाया था, वह बरबाद हो गया । हमें चाहिए कि यह किस्सा हम फिर न दुहरायें ।”

“चालकी सच कहता है”—मुखवान बोला । दुलोसा जैसे खीज उठी, बोली—“लड़कियों के साथ खिलवाड़ क्यों करते हो ? अरे, कैतू का किस्सा हमारा वहम है । जो भाग का वदा रहता है, वही होता है । यह भारी भूल है कि हम एक किस्से को दूसरे से जोड़ते हैं ।” मोटियारी उठकर खड़ी हो गई, बोली—“अब क्या झगड़ा होगा ? अरे, पहिले उस लड़की से तो पूछा होता ।”

“तो समझो वही तुम लड़की हो”—लामू ने एकदम कह दिया । मोटियारी का सिर चकराने लगा । वह बैठ गई और चक्कर खाकर लेट गई । आसपास के दो चार सदस्य दौड़े आये—“क्या हो गया ? क्या हो गया ?” गुरमटिया जोर से हँसी, बोली—“सीतल के बाद बेचारी की छाती भी कमजोर हो गई है ।” सबने हँसने में साथ दिया । एक ने कहा—“अरे, यह तो किस्सा था, कोई बैगा सचमुच थोड़े मोटियारी के पीछे दौड़नेवाला है ।” सारे सदस्य मोटियारी की हिफाजत में लग गये । मुशी ने बैगा को धन्यवाद देकर विदा किया । तब बाहर चाँद अपनी मस्ती में था और बाँस के झाड़ की नोंक पर अटका था ।

मोटियारी रातभर चिन्ता में उलझती रही । रतीराम ने थोड़ी देर ढाढ़स बँधाया, बोला—“अरी, वह तो कहानी कह रहा था ।”

“वह तो जानती हूँ, पर सोचतो हूँ, यह कहानी यदि कभी सच हुई तो ।” रतीराम ने उसके सिर पर हाथ फेरा, बोला—“कहानी कहने के लिए होती है मोटी, वह सच कभी नहीं होती ।”

मोटियारी चुप तो रही पर उसका मन न माना । रतीराम जोर-जोर से खर्राटे भरने लगा, पर मोटियारी घोटुल की छत को ही ताकती रही । वह लामू के बारे में सोच रही थी । उसकी आँखों के सामने उस समय का सारा दृश्य घूम रहा था, जब लामू उससे बाँध पर मिला था । उसने पड़े-पड़े ही घोटुल के सारे चेलिकों पर नजर डाली । एक के बाद एक, सबका चेहरा उसके सामने घूमने लगा । हर आदमी के बारे में वह सोचने लगी । यह क्रम चलता रहा, पर वह किसी निर्णय पर नहीं पहुँची । उसे यही लगा कि वह मानों दैलगाड़ी के चक्के की लीक पर खड़ी है और चारों ओर चक्कर काट रही है ।

लामू उसे प्रिय नहीं, यह बात नहीं । वैसे ही बैगाओं की वीरता से वह परिचित थी, फिर लामू तो साँप के भी दाँत उखाड़ने की हिम्मत रखता था । उसने सैकड़ों खूँखार जंगली जानवरों का अब तक शिकार कर डाला है । उसका बाप भी गाँव का जाना-माना गुनियाँ है ।—पर इस समय मोटियारी के सामने दो गाँठें थीं—एक तो यह कि लामू दूसरी जाति का है । उससे ब्याह करने से वह डरती थी इसलिए कि कैतू का किस्सा उसने ही तो लामू को बतलाया था । दूसरी यह कि वह घोटुल का सदस्य नहीं है । ऐसी हालत में यदि वह चाहे भी तो उससे ब्याह नहीं कर सकती ।

मोटियारी उलझी थी और इस उलझन के बीच एक बात हुई, वह यह कि उसने बैगा को अपना दिल दे दिया । उसका यह विश्वास मजबूत हो गया कि घोटुल के सारे सदस्य निकम्मे हैं और उसकी जोड़ी के नहीं हैं । सीतल के बाद यदि कोई ठीक जोड़ीदार मिला है तो वह यही बाँका नवजवान है ।—सोचते-सोचते घोटुल के मुँगों ने चिह्नाना शुरू कर दिया । मुंशी ने आवाज लगाई और सबके सब अपना-अपना बिछावन लेकर बाहर निकलते गए । मोटियारी जब निकली तो सारा घोटुल खाली हो चुका था ।

सूरज बाज की तरह धरती को ताक रहा था। मोटियारी सामने के पहाड़ को देख रही थी। सुबह पूरब से इसी पहाड़ की छाती फाड़कर सूरज निकलता है। शाम को फिर उसी पहाड़ की गोद में सो जाता है। उसे नींद नहीं आती। दिन भर किसी को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते उसकी आँखें थक जाती हैं। तब वह वेष बदल लेता है। रात को चाँद बन जाता है। सोचता है—वह रूप उसे पसन्द नहीं तो यह भा जाय। उसी पगडण्डी से वह चलता है। रात भर रोता है और फिर दूसरे दिन सवेरे-सवेरे चुपके-से अपने असली रूप में आकर वह उन आँसुओं को खुद पी जाता है ताकि दुनिया यह न समझे कि दूसरों को वीरता का पाठ पढ़ानेवाला खुद कायर है, खुद रोता है। पर यह गलती सूरज की नहीं है। गलती धरती की है—उस धरती की, जिस पर आकाश टिका है, जिसकी छाती पर सूरज घूमता है। इस धरती का सारा कलेवर ही बनावटी है। उसके भीतर आग जलती है पर हम सोचते हैं, धरती कितनी शीतल है! कितनी शान्त है! उसकी गोद में प्यार के सागर लहराते हैं। धरती की छाती चीरकर कोई अन्दर नहीं पहुँचा। यदि अन्दर तक पहुँच पाता तो असली मरम पा लेता। तब वह न इन सागरों को देखकर भ्रम खाता और न पहाड़ों की छाया में अपने को उलझा देता। इस धरती पर टिकनेवाले लोग ही कुछ ऐसे हैं। जिसकी वे दुहाई देते हैं, वह है समाज और इसी समाज का आँचल थामकर वे न जाने कितने पाप कर जाते हैं। और असल बात तो यह कि जो पाप करते हैं, वही पुण्य का पाठ पढ़ाते हैं। मोटियारी का मस्तिष्क भारी है। वह उसी बाँध में खड़ी है। जिसकी मेंड पर लामू से उसकी मेंट हुई थी। तब चने के झाड़ जवान थे, अब वे बुढ़ा गए हैं। हवा चलती है तो वे लड़खड़ा उठते हैं। एक-दूसरे से टकराकर खड़खड़ाने जैसी आवाज करते हैं, मानों अपनी जिन्दगी के लिए रो रहे हैं। उनमें अब भी जीने की लालसा है पर मोटियारी नहीं चाहती कि ऐसे निकम्मे पौधे जिन्दा रहें। बायें हाथ से वह उनकी गर्दन पकड़ती है और दाहिने हाथ से

हँसिये का वज्र प्रहारकर उन्हें वह जमीन पर सुला देती है—भीतर से गरम, पर बाहर से ठंडी जमीन पर । उसके हाथ पौधों को काट रहे हैं पर मन उड़ रहा है, दूर, बहुत दूर, वह भी नहीं जानती कहाँ ?

यह दादरगाँव के पटेल का घर है । भारी बखरी है । कमी किसी चीज की नहीं है । पटेल ने चार ब्याह किये हैं । चारों मिहरिया अभी जिन्दा हैं । उनमें एक उसकी जाति की है । दूसरी शहर की पढ़ी-लिखी कोई लड़की है । वह सारी मित्कियत का हिसाब-किताब रखती है । तीसरी है पंकिन । कहते हैं, उसे पटेल का गर्भ रह गया था । वह उसी के घर मजूरी करती थी । जब यह खबर गाँव को लगी तो सबने पटेल की हँसी उड़ाई । पटेल ने उसे अपने घर रख लिया । चौथी औरत गोंड जाति की है । वह गोंड भले ही हो, पर है बड़ी खूबसूरत । सबमें अलग दिखती है । इतनी खूबसूरत न उसकी ब्याहता है और न शहर की चुल-बुली लड़की । पटेल उसकी खूबसूरती पर ही अटक गया था और तीन सौ रुपए उसके लमसेना को देकर अपने घर ले आया था । पटेल ने अच्छा किया । उसका मन एक में नहीं भरा, वह चार औरतें ले आया । चारों सुखी हैं । किसी को कोई शिकायत नहीं, पर मोटियारी जो सोचती है, वह यह है कि आखिर कैतू को ही शेर ने क्यों परेशान किया ? उसकी मिहरिया को डूब कर क्यों मरना पड़ा इसलिए कि कैतू गोंड था और उसकी मिहरिया वैगिन—नहीं, बात सच नहीं हो सकती । कैतू को परेशान करनेवाला शेर नहीं हो सकता, वह था समाज । उसकी मिहरिया की भी जिसने हत्या की, वह था वही—समाज । और वही समाज है जो पटेल से चीं तक नहीं करता । करे कैसे ? पटेल गाँव का मुखिया है । पंचायत का सरपंच है । सबका अन्नदादा है । सारी धरती की जड़ उसके हाथ है । सारा गाँव उसकी बखरी पर माथा टेकता है—माथा टेकें, मना कौन करता है, पर जो माथा टेकते हैं उनके माथे पर पत्थर के भी निशान बनते हैं, इसे वह क्यों नहीं पहिचानता, समाज क्यों नहीं पहिचानता ।

मोटियारी जानती है कि यदि वह लामू से ब्याह करने के लिए

सूरज बाज की तरह धरती को ताक रहा था। मोटियारी सामने के पहाड़ को देख रही थी। सुबह पूरब से इसी पहाड़ की छाती फाड़कर सूरज निकलता है। शाम को फिर उसी पहाड़ की गोद में सो जाता है। उसे नींद नहीं आती। दिन भर किसी को हँदते-हँदते उसकी आँखें थक जाती हैं। तब वह वेष बदल लेता है। रात को चाँद बन जाता है। सोचता है—वह रूप उसे पसन्द नहीं तो यह भा जाय। उसी पगडण्डी से वह चलता है। रात भर रोता है और फिर दूसरे दिन सवेरे-सवेरे चुपके-से अपने असली रूप में आकर वह उन आँसुओं को खुद पी जाता है ताकि दुनिया यह न समझे कि दूसरों की वीरता का पाठ पढ़ानेवाला खुद कायर है, खुद रोता है। पर यह गलती सूरज की नहीं है। गलती धरती की है—उस धरती की, जिस पर आकाश टिका है, जिसकी छाती पर सूरज घूमता है। इस धरती का सारा कलेवर ही बनावटी है। उसके भीतर आग जलती है पर हम सोचते हैं, धरती कितनी शीतल है ! कितनी शान्त है ! उसकी गोद में प्यार के सागर लहराते हैं। धरती की छाती चीरकर कोई अन्दर नहीं पहुँचा। यदि अन्दर तक पहुँच पाता तो असली मरम पा लेता। तब वह न इन सागरों को देखकर भ्रम खाता और न पहाड़ों की छाया में अपने को उलझा देता। इस धरती पर टिकनेवाले लोग ही कुछ ऐसे हैं। जिसकी वे दुहाई देते हैं, वह है समाज और इसी समाज का आँचल थामकर वे न जाने कितने पाप कर जाते हैं। और असल बात तो यह कि जो पाप करते हैं, वही पुण्य का पाठ पढ़ाते हैं। मोटियारी का मरिक्का भारी है। वह उसी बाँध में खड़ी है। जिसकी मेंढ पर लामू से उसकी मेंढ हुई थी। तब चने के झाड़ू जवान थे, अब वे बुढ़ा गए हैं। हवा चलती है तो वे लड़खड़ा उठते हैं। एक-दूसरे से टकराकर खड़खड़ाने जैसी आवाज करते हैं, मानों अपनी जिन्दगी के लिए रो रहे हैं। उनमें अब भी जीने की लालसा है पर मोटियारी नहीं चाहती कि ऐसे निकम्मे पौधे जिन्दा रहें। बायें हाथ से वह उनकी गर्दन पकड़ती है और दाहिने हाथ से

हँसिये का वज्र प्रहारकर उन्हें वह जमीन पर मुला देती है—भीतर से गरम, पर बाहर से ठंडी जमीन पर। उसके हाथ पौधों को काट रहे हैं पर मन उड़ रहा है, दूर, बहुत दूर, वह भी नहीं जानती कहाँ ?

यह दादरगाँव के पटेल का घर है। भारी बखरी है। कमी किसी चीज की नहीं है। पटेल ने चार ब्याह किये हैं। चारों मिहरिया अभी जिन्दा हैं। उनमें एक उसकी जाति की है। दूसरी शहर की पढ़ी-लिखी कोई लड़की है। वह सारी मिलियत का हिस्सा-क्रिया रखती है। तीसरी है पंकिन। कहते हैं, उसे पटेल का गर्भ रह गया था। वह उसी के घर मजूरी करती थी। जब यह खबर गाँव को लगी तो सबने पटेल की हँसी उड़ाई। पटेल ने उसे अपने घर रख लिया। चौथी औरत गोंड जाति की है। वह गोंड भले ही हो, पर है बड़ी खूबसूरत। सबने जलम दिखती है। इतनी खूबसूरत न उसकी ब्याहता है और न शहर की सुल-बुली लड़की। पटेल उसकी खूबसूरती पर ही अटक गया था और तीन सौ रूपए उसके लमसेना को देकर अपने घर ले आया था। पटेल ने अच्छा किया। उसका मन एक में नहीं भरा, वह चार औरतें ले आया। चारों सुखी हैं। किसी को कोई शिकायत नहीं, पर मोटियारी जो सोचती है, वह यह है कि आखिर कैतू को ही शेर ने क्यों परेशान किया ? उसकी मिहरिया को डूब कर क्यों मरना पड़ा इसलिए कि कैतू बोझ था और उसकी मिहरिया बैगिन—नहीं, बात सच नहीं हो सकती। कैतू को परेशान करनेवाला शेर नहीं हो सकता, वह था समाज। उसकी मिहरिया की भी जिसने हत्या की, वह था वही—समाज। और वही समाज है जो पटेल से चीं तक नहीं करता। करे कैसे ? पटेल गाँव का सुखिया है। पंचायत का सरपंच है। सबका अब्रदादा है। सारी धरती की जड़ उसके हाथ है। सारा गाँव उसकी बखरी पर माथा टेकता है—माथा टेके, सबी कोम करता है, पर जो माथा टेकते हैं उनके माथे पर पत्थर के भी विशान बनते हैं, इसे वह क्यों नहीं पहिचानता, समाज क्यों नहीं पहिचानता।

मोटियारी जानती है कि यदि वह लामू से ब्याह करने के लिए

अपना मुँह खोलेगी तो उसमें आग भर दी जायेगी। सारा घोटुल सर उठा लेगा, वहाँ हंगामा मच जायगा और जब मामला पंचायत में जायगा तो उसका सरपंच पटेल होगा। फैसला क्या होगा, यह भी मोटियारी जानती थी। उसने कई फैसले देखे हैं। वह किसी और के साथ बाँध दी जायगी और लामू को धक्का देकर निकाल दिया जायगा। तब कौन जाने लामू धक्का सह सकता है ? ननकू के साथ भी यही हुआ था। भरी सभा में उसे बाहर किया गया था। सारे लोगोंने उस पर धुँका था। तब दूसरे दिन सुबह नरवा के किनारे उसकी लाश मिली थी। गाँवभर ने तब हमदर्दी जताई थी—सोचते-सोचते मोटियारी ने हँसिया नीचे रख दी और उठकर खड़ी हो गई। उसने नीले आसमान को देखा, जिसके नीचे दूर तक खेत बिखरे थे। वह सोचने लगी, आसमान एक है, खेत अलग-अलग हैं। धरती में जो विभाजन है, आसमान में नहीं। क्यों न वह आसमान में उड़ जाय। वहाँ से खड़ी होकर वह इस सारी धरती को देखेगी और उसमें कितने टुकड़े हैं, गिनेगी। फिर आकर सबसे बतायेगी—मूर्खों, इन टुकड़ों को एक कर दो, जो फसल तुम्हारी मुट्ठी में समा जाती है, छूटकर बाहर गिरने लगेगी—पर कल्पना भी कितनी रंगीन होती है !

उसने देखा, लामू खेत काटना छोड़कर उसकी ओर दौड़ा आ रहा है। मोटियारी की पलकें फिर बोझिल हो गईं। वह बैठ गई और बूढ़े झाड़ों को फिर धरती पर सुलाने लगी। लामू भी बाजू आकर बैठ गया, बोला—“नाराज हो गई।” मोटी की आँखों में तब हल्के-से आँसू थे। उसने उन्हें पोंछे, बोली—“नहीं।” लामू ने पूछा—“तब मुझसे क्या कहती है ?”

“यही कि कल घोटुल में मेरा ब्याह होगा”—मोटियारी ने मुसकरा दिया।

“ब्याह”—लामू फूल उठा—“मेरी अच्छी रानी, मैं जानता था—” उसने मोटियारी के दोनों हाथ पकड़कर अपने कलेजे में लगा लिये।

“हाँ, ब्याह लामू, वह भी रतीराम के साथ”—मोटियारी ने कहा

तो लामू का मुँह फट गया । मोटियारी के मुँह पर तब बुँघचियों के लाल दानों जैसी चमक थी । उसने आगे बढ़कर लामू की नाक दबा दी, बोली—“घबड़ाता है, पागल कहीं का । ब्याह रतीराम से करूँगी, शरीर पर रतीराम राज करेगा । पर शरीर और मन पर जो असल राज करेगा, वह होगा—लामू ।”

“यह ढोंग किसलिए ?”—लामू ने पूछा ।

मोटियारी खड़ी हो गई । जमीन से मिट्टी का एक ढेला उठाकर उसने कहा—“भाग, नहीं तो देती हूँ तेरे सिर पर । अरे, भाग रे लामू, तुझे देख लेगा यह समाज ! वह शेर ! वह पटेल ! और यह धरती !” तब माटी का ढेला उसके हाथ से अपने आप छूट गया था और उसकी आँखें अपने शरीर के उन गुदनों पर अटक गई थीं जिन्हें उसने चीखते-चिल्लाते बनावाए थे ।

८. बे छात की बात

आकाश में झम-झम कर बिजली नाच रही थी और डाक बँगले के सामने लगे मेंहदी तथा बबूल के झाड़ रह-रह कर काँप उठते थे। हवा सर्द थी और साँझ अभी घर लौटती गायों के सींग के बीच से निकल ही रही थी, पर डाक बँगले के कमरे में अँधेरा आवारों की तरह चक्कर काटने लगा था। मुझे अपने आप थोड़ी ठंड महसूस हुई, उठकर मैंने अपना ऊनी शाल ओढ़ लिया और सिपाही को इशारा किया तो उसने लालटेन जला दी। काले आसमान के बीच में किसी चमकदार तारे की तरह वह लालटेन जलने लगी।

मेरे चारों ओर आठ-दस आदमी खड़े थे। सभी की आँखें मुझे घूर रही थीं। मेरे हर काम को, मेरे ओठ के हर उतार-चढ़ाव को शायद वे बड़ी दिलचस्पी के साथ देख रहे थे। देखना सहज था। मैं पुलिस का दरोगा जो ठहरा। गाँववालों के लिए वर्दीधारी सिपाही ही बहुत है, फिर दरोगा की ताकत का क्या कहना ?

सामने खड़े लोगों पर मैंने नजर डाली। सभी की आँखें बड़ी भोली थीं, उतनी ही जितनी खरगोश के बच्चे की होती हैं। मैं बार-बार हर आदमी को देखता था, पर यह पता लगाना कठिन था कि उनमें चोर कौन है ?

“भाई तुम्हारा मामला तो संगीन दिखता है। अभी भी कुछ

अन्दाज नहीं लगा पाया”—मैंने कहा तो पास बैठे पटेल ने हाथ जोड़े और बनावटी हँसी हँसते हुए बोला—“आप भी क्या कहते हैं हुजूर, पुलिस दरोगा की मुट्ठी से तो जरिया का काँटा भी नहीं फिसल सकता। फिर यह तो पूरे बीस थान धोतियों की चोरी का मामला है। इस जमाने में धोतियाँ मिलती कहाँ हैं? एक-एक धोती के लिए सोलह रुपया मिलता है और पाटन के सेठ ने तो चालीस रुपये में थान बेचे हैं।”

“बेचे होंगे”—मैंने कहा—“ग्राहकों की जेब तो तुम लोग रोज ही काटते हो, और सौ सुनार की तो एक लुहार की भी होती है पटेल! मैं जानता हूँ, बीस थान में तुम गरीब होनेवाले नहीं हो।”

“क्या कहते हैं दरोगा साहब”—पान की गिलौरी चबाते हुए वह बोला—“मेरा सारा मुनाफा ही चला जायगा हुजूर...!”

“तो मैं क्या करूँ भाई”—मैंने कहा—“चोर कौन है, यह मेरी समझ में अभी तक नहीं आ सका और तुम भी तो भरोसे के साथ किसी का नाम नहीं बताते, ऐसी हालत में मैं क्या कर सकता हूँ।”

“मैं किसका नाम बताऊँ दरोगा साहब, सभी हमारे गाँव के आदमी हैं, किससे दुश्मनी लूँ—” बनावटी हँसी हँसते हुए पटेल ने कहा—“यह हमारे गाँव का पण्डा है, यह कोटवार है, गाँवभर की रखवाली इसके पास है, यह है हमारा पड़ोसी ओझा, गाँवभर की गुनाई-भुताई का ठेका इसी ने ले रखा है और—” पटेल एक-एक कर खड़े सारे लोगोंका परिचय दे रहा था। सात आदमियों का परिचय जब वह दे चुका तो आठवें की ओर उसने इशारा किया—और यह है फागू, गाँव का ग्वाला। हमारी मैंस लगाने यही रोज आता है और सार का कमरा दूकान से ही लगा है।”

मैंने लैम्प ऊपर उठाकर देखा, एक हड्डा-कड्डा नौजवान कमर में बोटोई (घुटनों तक पहिना जानेवाला एक प्रकार का अँगोछा) पहिने खड़ा था। उसका शेष वदन नंगा था और लगता था आसमान का, सारा अँधेरा उसमें आकर सिमट गया है। मैं उठकर खड़ा हो गया।

उसके पास जाकर लैम्प के उजेले में मैंने उसे गौर से देखा, वह काँप रहा था। कमरे के बाहर तूफान था और लगता था मानों तूफान उसी की हँसी बनकर उमड़ा था। छोटे-से लाल अँगोछे को सिर पर लपेटे और कान में अधजली बीड़ी लगाये दीवाल के सहारे वह खड़ा था। वह क्यों काँप रहा है, यह बात सहज समझ में नहीं आ सकती थी। हवा सर्द थी, यह बात सत्य है पर दिन सर्दी के नहीं थे और न हवा में ही इतनी ताकत थी कि वह कड़कड़ाती ठण्ड जैसी कँपकँपी पैदा करे। निश्चय ही वह मुझसे डर रहा था। मैंने पूछा—“फागू तेरा नाम है?”

अपनी दोनों हथेलियों को मिलाकर उसने हाथ जोड़े और सम्मलकर खड़ा हो गया, बोला—“हाँ, सरकार।”

“कहाँ रहता है?”—मैंने पूछा।

“इसी गाँव में। पटेल तो मुझे अच्छी तरह जानते हैं”—उसने बड़े भोलेपन से कहा।

“इसीलिए तो तुझे बुलाया गया है फागू। न जानते होते तो भला क्यों बुलाते?—और हाँ, तू तो जात का गोंड है न, रे।”

“हाँ, मालिक गोंड हूँ।”

“गोंड अपनी बात का बड़ा पक्का होता है, फागू। कई गोंडों से मेरी दोस्ती रही है। उनमें सचाई इतनी है कि यदि वे चोरी करेंगे तो भी कबूल कर लेंगे और खून करेंगे तो भी बता देंगे।”

सुनकर उसकी आँखें जैसे एकदम चमक उठीं। शायद वह विश्वास की चमक थी, उसके आत्मविश्वास की; जैसी गेहूँ की झूमती हुई हरी-हरी वालियों में होता है। उसकी कँपकँपी अब लुप्त हो गई थी। मैंने कहा—“तो फागू, तुम सच बोलोगे? जो मैं पूछूँगा उसका उत्तर ठीक-ठीक दोगे?”

उसने कहा—“हाँ हुजूर, विलकुल सच बोलूँगा, झूठ बोलूँ तो पट्टई मर जाऊँ। मुलदेवा की कसम खाता हूँ, मैंने चोरी नहीं की।”

“मैं कब कहता हूँ तूने चोरी की है फागू”—मैंने नरम शब्दों में

कहा—“पटेल के यहाँ भैंस लगाने तो तू रोज जाता है न ?”

“हाँ मालिक ।”

“और सार की बाजू में ही कपड़े की दूकान है, यह तू जानता है ?”

“हाँ मालिक ।”

“और जिस रात पटेल के यहाँ चोरी हुई उस रात भी तू भैंस लगाने गया था, यह बात सच है ?”

“हाँ हुजूर, भैंस लगाने तो रोज ही जाता हूँ ।”

“तो जब तू भैंस लगाकर लौट रहा था तब कितने बजे थे ?”

“बजे कितने थे, नहीं जानता सरकार, पर उस दिन रोज से देर हो गई थी । पटेल के घर बियारी हो चुकी थी और छोटे टोला की ढोलक खनकने लगी थी । उस दिन मेरी एक कलोर को पहाड़ से, मेरे देखते-देखते एक बाघ उठा ले गया । दो घण्टे, मैं उसके पीछे भागता रहा पर वह हरामखोर, नहीं मिला । कलोर नाले के पास तो मिल गई, पर तब उसकी जान निकल चुकी थी ।” उसने अपने अँगोछे से आँसू पोछे । गाय की मौत से उसे दुःख हुआ था ।

“उस दिन इसीलिए खिरका देर से गाँव लौटा था और मैं भी देर से भैंस दुहने पटेल के यहाँ आया, पर मैंने चोरी नहीं की हुजूर ।”

“तो किसने की है ?”—मैंने गरजकर पूछा ।

वह बोला—“उस रात जब मैं लौट रहा था तो रास्ते में मुझे ठाकुर प्रताप सिंह मिले थे, उनसे पूछ लीजिये । वे बता देंगे कि मैंने चोरी नहीं की ।”

ठाकुर प्रताप सिंह कौन हैं, यह जानने की जिज्ञासा बढ़ी पर इसके पहले कि मैं उनके सम्बन्ध में कुछ जानूँ, फागू से पूरी पूछ-ताछ कर लेना मैंने ठीक समझा ।

इतने दिनों से मैं देखता आ रहा हूँ कि हर अपराधी अपना अपराध छिपाने के लिए इतना ही भोला बन जाता है और ऐसी ही भोली बातें करता है । अपने मामले की छानबीन करने के लिए हमें कई प्रयोग करने

पड़ते हैं। कभी हम दोस्त बन जाते हैं तो कभी हमें सख्ती भी दिखानी पड़ती है। मैंने फागू की पीठ थपथपाई और कहा—“फागू, चोरी करना पाप नहीं है। जब आदमी के पास खाने को नहीं होता तो वह बड़े से बड़ा पाप कर बैठता है, चोरी तो मामूली बात है।”

“होगी सरकार”—वह बोला—“पर हमारे लिए तो वह बहुत बड़ा पाप है। सरकार हमें एक हाथ की लँगोटी भर देती रहे, धोतियों का हम क्या करेंगे। और चोरी करेंगे तो रहेंगे कहाँ हुजूर। आदमी, आदमी की आँखों में भले ही धूल झोंक ले पर उसके भी ऊपर एक अदालत है, दरोगा साहब। बड़े देव की अदालत, वह सब कुछ देखता है। हमारे सारे पापों का लेखा-जोखा वह रखता है, उससे कौन बच सकता है? इस जनम में चोरी कर भी लेंगे तो अगले जनम में उसका फल भोगना ही पड़ेगा...।”

“वह कौन जानता है फागू। मरने के बाद कौन कहाँ जाता है और क्या भोगता है, यह कोई नहीं जानता...पर, खैर, मैं तो यह कह रहा था कि तुम सिर्फ अपना जुर्म कबूल कर लो, हम न तुमसे माल लेंगे और न तुम्हें कोई सजा देंगे।”

इन बातों का फागू पर कोई असर नहीं हुआ। वह बोला—“क्यों जबरन फँसाते हैं सरकार। हम आपकी जूठन माँग कर खा लेंगे पर चोरी नहीं करेंगे।” वह मेरे पैरों पर गिर पड़ा—“यह कलंक क्यों मुझपर लगाते हो हुजूर।”

मैंने पटेल की ओर देखा। वह नीचे सिर किये खड़ा था। मैंने पूछा—“अब क्या करूँ भाई? इसने और कभी चोरी की है।”

“अभी तक तो ऐसा मौका नहीं आया”—वह बोला—“पर भरोसा क्या, किसकी नीयत कब बदलती है, कौन जाने।”

मैंने फागू को उठाया। उसकी आँखें नम थीं। मेरे नरम शब्द जैसे पत्थर से टकरा कर लौट आये थे। मैंने उसे भरपूर समझाया था, बड़ी-बड़ी दिलासाएँ दी थीं पर चोरी कबूल करने पर वह तैयार नहीं था। मैंने

जब कहा कि—यदि तू यहाँ कबूल नहीं करता तो तुझे शहर चलना पड़ेगा—तो वह काँप उठा था। बोला—“सरकार जिहल में भले ही बन्द कर दें पर शहर न ले चलें। मेरे पास मोटर का भाड़ा तक नहीं है।” उसके सीधेपन को देखकर मैं चकित था। मुझे लगा कि यह निश्चय ही चोर नहीं हो सकता पर तभी कोटवार ने बताया कि—एक बार यह अपने घर की चोरी कर भागा था, हो सकता है फिर उसीने यहाँ भी चोरी की हो। जब मैंने इस बात की असलियत जाननी चाही तो फागू ने उसे तत्काल स्वीकार कर लिया, बोला—“हाँ हुजूर, चोरी की थी, पर अपने घर की। अपने बाप की कमाई की। और वह भी अपनी मँगोतर के लिए”—वह शरमा गया, नीचे सिर झुकाकर बोला—“तोरड़ के लिए जान खा रही थी सरकार और बाप कान में तेल डाले था फिर चोरी न करता तो—।”

“ठीक है फागू”—मैंने कहा—“अपनी औरत के लिए आदमी क्या नहीं करता। तुम साड़ी खोजने पटेल के कमरे में गये होगे पर हाथ—।”

फागू ने अपने कान हथेलियों से ढँक लिये, बोला—“राम राम ! क्या कहते हैं सरकार ! पराया सोना भी अपने लिये माटी है।”

दो घण्टे बीत गये थे और फागू अपनी बात पर पत्थर की तरह अड़ा था। वह तिल भर भी डिगने को तैयार नहीं हुआ। यहाँ मेरे मन में यह बात बार-बार चक्कर काट रही थी कि फागू पर कुछ भरोसा तो करना ही चाहिए, पर कभी-कभी मन विचल जाता। मैं सोचने लगता—आदमी जब कोई खराब काम करता है तो पहिले उससे बचने का रास्ता भी सोच लेता है। न सोचे, तो बाद में कई बातें उसे सूझ भी जाती हैं। फागू सीधा है, पर मैंने देखा है कि हर मुलजिम इतना ही सीधा दिखाई देता है। उसके सींग थोड़े होते हैं। जब यह विचार दिमाग में मजबूत हुआ तो मैंने सिपाही को आवाज दी। सिपाही ने आकर सेल्यूट मारी। मैंने फागू की ओर इशारा किया तो वह जल्लाद की तरह उस पर दूट पड़ा। लातों-जूतों से उसकी मरम्मत हुई। उसके नंगे बदन पर जूतों की नाल

और बेटों की लकीरों के निशान साफ दिखाई पड़ने लगे पर फागू ने अपना इलजाम कबूल नहीं किया। वह चुपचाप मार खाता रहा। उसने मुँह से चीं तक न की। उसकी आखें जैसे पथरा गई थीं। मधु-मक्खी के सूखे छतने की तरह वे खुली थीं। मैं देखकर दंग रह गया। इतनी मार के बाद भी उसकी मुद्रा नहीं बदली। सोचने लगा, जिन्दगी में नदी, पहाड़, चाँद, और सूरज की मार खाकर ही यह इतना कठोर बना होगा। कभी सूखा चना उसे नसीब हुआ तो कभी वह भी न मिला होगा। चकौड़ा की भाजी और खमेर के फल भी गर्मी में सूख जाते हैं, तब चार और तेंदू उसकी जिन्दगी बनते हैं। सरकार अब उन पर भी बंधन लगा रही है तो—मैं काँप उठा। ताकत भर चिल्ला पड़ा—“सिपाही। वह दोनों पैरों को समेट कर खड़ा हो गया। फागू जमीन पर बैठा रहा। उसका सिर नीचे झुका था। मैंने उससे कहा—“फागू तुम जा सकते हो।”

उठकर उसने दोनों हाथ जोड़े, बोला—“हुजूर, भरोसा रखें और तकलीफ की माफी दें।” मैं कुछ नहीं बोला। डाक बँगले के कमरे से उठकर बाहर आ गया। तब आकाश साफ हो गया था, बिजली उसमें सो गई थी और गाँव के कुत्ते उसे जगाने के लिए मुँह फाड़-फाड़कर भौंक रहे थे। गाँव से बहुत दूर रह-रहकर पाड़े की आवाज आ रही थी। उसमें दर्द था और सुनकर कलेजा कभी-कभी काँप उठता था। मैं फिर अन्दर आ गया और बिस्तर में लेट गया।

आधीरात के बाद मेरी नींद खुल गई तो पलकों ने फिर झंपने का नाम नहीं लिया। मेरे सामने फागू की शकल घूम रही थी और उसमें एक अजीब सीधापन दिखाई दे रहा था। मैंने उसके साथ न्याय नहीं किया, यह विचार बार-बार मेरे मन में उठ रहा था। मैं सोच रहा था कि एक गरीब का मन बरसाती नदी की तरह होता है। वह उस नदी जैसा होता है जो आठ महीने तो एकदम सूखी पड़ी रहती है और चार महीने में ही जमीन-आसमान एक करने को उतारू हो जाती है। फागू ने यदि

चोरी की होती तो उसके पैर जमीन पर नहीं लगते। वह तो अब तक हिरन हो गया होता। जिसने जिन्दगी में एक हाथ की लँगोटी के सिवा कभी कुछ न पहिना हो, वह इतना कपड़ा पाकर पागल हुए बिना नहीं रहता। फागू के बारे में मैं जितना सोचता वह आग में पड़े सोने की तरह ही चमकता-सा दिखाई देता।

इसी बीच मुझे ठाकुर की याद हो आई। फागू ने कहा था—जब मैं दूध लगाकर लौट रहा था, रास्ते में मुझे ठाकुर मिले थे। उनसे पूछ लो सरकार।

यह ठाकुर कौन है? रात को वहाँ जाने की उसे क्या जरूरत थी। पर—नहीं, वह आदमी बड़ा होगा। गाँव भर में उसका स्तवा होगा। मैं उसका क्या कर सकता हूँ—पर नहीं, मैंने एक निरपराधी को इतना तंग किया है, कानून के साथ खिलवाड़ नहीं होने दूँगा—मैं सोच ही रहा था कि मुर्गे ने बाँग दी और मैं विस्तर छोड़कर बाहर आ गया।

सूरज की किरणों ने सामने की पहाड़ी से जब नीचे झाँककर देखा तो सारी धरती फूल उठी। सामने की हरी-भरी पहाड़ियाँ सोने से नहा गईं और राई तथा रमतिला के छोटे खेतों के पौधे पुरवइया के झोंकों के साथ हिंडोला झूलने लगे। मैं आत्मविस्तृत उगते सूरज की ओर देखता रहा।

पटेल ने आकर हाथ जोड़े और चाय का नेवता दिया। मैंने सुन लिया पर उसे कोई जवाब न दे सका। कुर्सी पर बैठते हुए मैंने कहा—“पटेल, तुम्हारी चोरी का पता लगना मुश्किल है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि तुम स्वयं यह नहीं बता सकते कि कौन तुम्हारा दुश्मन है और किस पर तुम्हें शक है—मेरा खयाल है फागू इस मामले में निर्दोष है। तुम्हारा क्या खयाल है?” “यही मैं सोचता हूँ दरोगा साहब। इतने दिन उसे काम करते हो गया, पर उसने कभी चोरी नहीं की।”

“खैर, पटेल, क्या तुम यह बता सकते हो कि ठाकुर कौन है, जिसका नाम कल फागू ले रहा था?”—मैंने पूछा।

“मेरे पड़ोसी हैं साहब”—उसने कहा—“ठाकुर प्रताप सिंह यहाँ के बड़े आदमी हैं। कभी मालगुजार भी रह चुके हैं।”

चोरीवाली रात को वे क्या तुम्हारे यहाँ आए थे ?”

“जी नहीं, कई दिनों से हमारे यहाँ उनका आना-जाना बन्द है ?”

“क्यों ?”—मैंने पूछा।

पटेल ने कहा—“कन्ट्रोल क्या लगा है, दुश्मन पैदा हो गए हैं। कानून कहता है कि एक आदमी को एक थान धोती दो, वे दस थान चाहते थे। मैंने उन्हें देने से इनकार कर दिया तो बोले—‘तेरे हाथ से कन्ट्रोल का कोटा छिनवाए बिना नहीं रहूँगा। न छिनवा लिया तो नाम नहीं।’ मूछों पर हाथ फेरकर उन्होंने कहा था—‘और न छीना तो आग लगवा दूँगा या सारे थान चोरी करवा दूँगा।’ पर यह सब गुस्से की बातें हैं दरोगा साहब। प्रताप सिंह को मैं जानता हूँ, बड़ा दिलदार आदमी है।”

“ठीक है”—मैंने कहा और उठकर खड़ा हो गया—“अच्छा, पटेल साहब, एक घण्टे बाद फिर मिलेंगे।”

घण्टे भर बाद मैं फाइल निकालकर बैठ गया। मेरे सामने ठाकुर प्रताप सिंह बैठे थे और बाजू में पटेल। लम्बी मूँछें, भरे गाल, रेशमी कुर्ता और महीन धोती, यही थे ठाकुर प्रताप सिंह, डाक बँगले की सीढ़ियों को चढ़ते-चढ़ते न जाने क्या-क्या बुदबुदा रहे थे और आते ही उन्होंने न दुआ-सलाम की थी, न क्षेम-कुशल पूछा था।

कुर्सी पर बैठते ही बोले—“आजादी क्या मिली है, आप लोगों ने नाकों दम कर रखा है। किसी की इज्जत को पुलिस वाले कुछ समझते ही नहीं। क्या मैं चोर हूँ, क्या मैंने पटेल की चोरी की है—क्यों पटेल, तुम भी क्या सरग में देखने लगे ?”

मैंने कहा—“जी नहीं ठाकुर साहब, आप हमें गलत समझ रहे हैं। चोरी आप के गाँव में हुई है। यदि हमने चोर का पता न लगाया तो आज पटेल के थान गये हैं, कल आपके यहाँ से भी कुछ जा सकता है।”

“कुछ नहीं जाता जी”—बड़ी बेतकलुफी से उन्होंने कहा—“हमारे यहाँ तो कई रात खुले आसमान के नीचे बिनी-छनी फसल पड़ी रहती है पर कभी एक दाना भी उससे चोरी नहीं जाता।”

“आश्चर्य है भाई”—मैंने कहा—“फिर भी पटेल के कमरे से कपड़े के थान के थान उड़ गए।”

“आग नहीं लगी, यही क्या कम है”—एकाएक ठाकुर प्रताप सिंह बोले, फिर तुरन्त ही जैसे वे सम्हल गए। हँसते हुए उन्होंने कहा—“कण्ट्रोल का जमाना है दरोगा साहब, न जाने कितने दोस्त-दुश्मन रहते हैं। कभी कोई आग भी तो लगा सकता है। आग अपने-आप भी लग सकती है...।”

“आप ठीक कहते हैं ठाकुर साहब”—कहते हुए मैं उठकर खड़ा हो गया—“अब मैं आपके यहाँ चलना चाहूँगा।” मैंने कहा।

“मेरे यहाँ ?”—ठाकुर का चेहरा सफेद पड़ गया था। बोले—“शाम को आपको चाय के लिए बुलाऊँगा दरोगा साहब।”

“चाय के लिए नहीं”—मैंने कहा—“मैं अपने काम के लिए जा रहा हूँ।”

“तो क्या आप मुझे चोर समझते हैं”—ठाकुर प्रताप सिंह उठकर खड़े हो गये। उनका चेहरा गुस्से से लाल हो गया, बोले—“यह हमारी इज्जत का सवाल है दरोगा साहब, मैं एस० पी० साहब से कहकर आपको नौकरी से निकलवा दूँगा—।” उन्होंने जब नौकरी से निकलवाने की बात कही तो मेरे तन-बदन में आग लग गई। भीतर जाकर मैंने द्रिस कसी। अपना काला डण्डा लेकर मैं बाहर आ गया। आगे बढ़ने लगा तो पटेल ने रोका, बोला—“कदम जरा सोचकर उठाएँ, दरोगा साहब !”

“मैंने सोच लिया है पटेल, मेरे काम में दखल देने का आप लोगों को अधिकार नहीं है। आपसे ज्यादा चिन्ता मुझे अपनी नौकरी की होनी चाहिए।”

“पर, पहिले फागू की तलाशी क्यों न ले ली जाय”—पटेल ने

कहा ।

मैंने जोर से जवाब दिया—“नहीं, तुम्हारे यहाँ चोरी हुई है तो इसका मतलब यह नहीं कि किसी गरीब को तुम मार डालो ।”

कोटवार ने तभी पटेल की बात को सहारा दिया, बोला—“हुजूर, नुकसान क्या है । मुझे तो लगता है, चोरी उसी ने की है । वहाँ से लौटकर वह कल खूब हँस रहा था ।” मैं सोचने लगा—क्या करूँ । क्या सचमुच फागू ही चोर है । यदि वह चोर हुआ तो मुझे नौकरी करने का अधिकार नहीं होगा । एक आदमी सीधा बनकर जब मुझे छल सकता है तो इतनी बड़ी जिम्मेदारी सम्हालने का क्या अर्थ है ।

मैंने फागू के घर की ओर अपने पैर मोड़ दिये । जब फागू को यह पता लगा, तो वह अपनी झोपड़ी से बाहर आ गया । उसके पीछे उसकी औरत थी—उस टूटी-सी झोपड़ी की रानी, अधनंगी और काली छाया । उसके पीछे चार बच्चे थे, विलकुल नंगे । तलाशी लेने में देर नहीं लगी । वहाँ था ही क्या ? पर जब लौटे हुए हम लोग दायें खूँट पर पहुँचे तो फागू हमारे सामने आकर खड़ा हो गया और मेरे पैरों पर गिरकर गिड़-गिड़ाने लगा—“यही एक पाप किया है सरकार, खाना भले ही छूट जाय, यह नहीं छूटती । माफी हुजूर ।” मैंने सिपाही को इशारा किया । उसने टाट का फट्टा हटाया तो मैं देखकर दंग रह गया । वहाँ मिट्टी के दो घड़े थे । एक में शराब भरी थी और दूसरा खाली था । मैंने फागू को उठाया—“इसीके लिए डरता था रे ?”

“हाँ मालिक, यह लाँदा की शराब है । ईमान से कह रहा हूँ । मुझे जिहल तो नहीं भेजोगे सरकार ?”

“नहीं फागू, नहीं—” मैंने कहा, और उसी पैर झोपड़ी के बाहर आ गया । मेरी आँखें अपने आप गीली हो गई थीं । उस झोपड़ी में खाने को दाना नहीं था, पर मटके में शराब भरी थी । सोचने लगा—यह भी क्या जिन्दगी है ! इस जहर को पीकर वह अपना दुःख भुलाता है ! दिन-दिन भर भूखा रहता है, रात को कुलेदे में लेकर लाँदा ढालता है

और सुबह फिर वैलों की तरह छाती भारने लगता है। इस चील के घोंसले में जो मिल जाय, उसीसे उसे सन्तोष है। और यही सन्तोष उसे जिन्दा रखे है। उसी के बल उसका परिवार टिका है।

मैंने अपने कदम ठाकुर प्रताप सिंह के घर की ओर बढ़ा दिये। एक गरीब के साथ अन्याय की हद होती है। मैंने वह सीमा भी पार कर दी थी। इसीसे मैंने निश्चय कर लिया था कि चाहे जो हो, ठाकुर के घर की तलाशी लिये बिना मैं नहीं जाऊँगा। जब मैं उनके घर के करीब पहुँचा, तो ठाकुर ने फिर रोका, बोला—“दरोगा साहब, यह मेरी इज्जत का सवाल है, आप तो चले जायेंगे, मुझे इसी गाँव में रहना है। लोग मेरे बारे में क्या सोचेंगे, जब उन्हें पता लगेगा कि ठाकुर प्रताप सिंह के घर की, पुलिस ने तलाशी ली थी।”

“मैं लाचार हूँ ठाकुर साहब—” और मैं बराबर आगे बढ़ता गया। कुएँ के पास जब मैं पहुँचा तो, ठाकुर साहब ने मेरा दाहिना हाथ पकड़ लिया। अपनी जेब से निकालकर सौ रुपये का एक नोट मेरी हथेली पर दिया, बोले—“अब इज्जत आपके ही हाथ है हुजूर, जो कहा सुना, उसकी माफी चाहता हूँ। पटेल तो हमारा दोस्त है पर एक दिन बात हो गई थी। वे बात की बात भी कैसी होती है, उसे रखने के लिए मैंने यह कर डाला। वैसे कपड़े तो मैं उसे लौटा ही देता।”

मेरा मन अपने-आप फूल उठा। सारे शरीर में खून के बहाव का वेग बढ़ गया। एक नयी ताकत मैंने अपने अन्दर पाई। ठाकुर की बात का मैंने कोई जवाब नहीं दिया। सिपाही को बुलाकर आज्ञा दी कि वह एक चालान बनाए। सौ रुपये के नोट पर मैंने पटेल के हस्ताक्षर लिये और फागू की झोपड़ी की ओर मुड़ गया। उससे पहले जाकर क्षमा माँगूँगा, वह आदमी नहीं, देवता है। तब सूरज सिर पर था और पड़ोसी ने अपने कोल्हू के बैल की आँखों से पट्टी छोड़ दी थी।

६. जड़ बंधन

विन्ध्याचल की उत्तरी तलहटी के बायें पार्श्व में सर्प की तरह बल खाते टेढ़े-मेढ़े नाले के किनारे जैसे पशुओं का मेला लगा था। काली, पीली, नीली, धौरी, बूढ़ी और कलोर न जाने कितने किस्म की गायें वहाँ घूम रही थीं। कोई हरी-भरी दूब में सारी भीड़-भाड़ से दूर किसी तापस की भाँति चुपचाप मुँह चला रही थी, कोई महुआ या सागौन के झाड़ के नीचे बैठी जुगाली कर रही थी, तो दूसरी ओर दो सींगें टकरा रही थीं; जैसे दो सौतें आपस में लड़ रही हों। पास खड़ा साँड़ उनका तमाशा देख रहा था। जो हार जाती, साँड़ उसी का पक्ष लेता। इसलिए लड़ाई का अन्त नहीं। वह दो बिल्लियों के झगड़े में बन्दर का पार्ट अदा कर रहा था। पदमसिंह एक टेढ़ी-मेढ़ी चट्टान पर बैठा यह सब चुपचाप देख रहा था। देखते-देखते वह उठा, उठकर साँड़ की पीठ पर उसने एक लट्ट दे मारा। साँड़ ने सींग को जमीन से भिड़ाकर एक लम्बी उचाट मारी और पूँछ उठाकर भाग खड़ा हुआ। पदमसिंह ने दोनों गायों को थप-थपाया और पास लाकर खड़ा कर दिया जैसे उनकी सुलह करा रहा हो। तभी पीछे से किसी ने गोबर की एक लब्दी उसके सिर पर दे मारी। उसने लौटकर देखा, फुलवा खड़ी हँस रही थी। दाँत पीसकर वह फुलवा की ओर बढ़ा, पर पास पहुँचने के पहिले ही जैसे किसी ने लगाम खींच दी। वह एक पैर आगे और दूसरा पीछे किये आँख फाड़कर फुलिया को घूरता रहा—उसका गेहुआ रंग, भूरे रंग की हलकी बदली में छिपे चाँद

की तरह उसके मुख पर लटकी अलकें, गोल-गोल चिकनी गुदगुदी बाहें, सेमल जैसे ओठों पर धतूरे जैसे फूलों की मुस्कान, उमरे उरोज और अर्द्धनग्न कपड़ों में लिपटा उसका वह सुन्दर शरीर, जिसके सामने वैभव विनत था। खड़ा-खड़ा वह सब देखता रहा और शायद देखता रहता यदि फुलवा आँखें न तरेरती। बिगड़ते हुए वह बोली—“क्या घूर रहा है रे; कोई बीमारी तो नहीं हो गई?”

पदम बोला—“सच कहती है, बीमारी हो गई है। अभी दो बिल्लियों के झगड़े में पड़े बन्दर से निवटा हूँ कि वह तीसरी बिल्ली मुझसे ही आकर भिड़ गई; हाँ, फुलवा जमाना ही खराब है।”

“क्या मतलब?”—फुलवा ने आँखें बदलीं।

“मतलब साफ है फुलवा, एक तो मेरे सिर पर गोबर की बन्दी दे मारी, अब आँखें दिखाती है।”

“क्यों न दिखाऊँ? सिर नहीं फूटा, क्या यही कम है! मेरी गइयों से प्रेम जो कर रहा था। भला मुझे क्या पड़ी थी उन दोनों को पास लाकर थपथपाने की?”

पदम की बाछें जैसे खिल उठीं, आँखों में एक अजीब चमक उतर आई। उसने फुलवा के हाथ से टोकनी छीनकर नाले में फेंक दी और बोला—“ले, बस; अब तुझसे प्यार करूँगा। तूने क्या गायों को भी सौत समझा है?”

फुलवा ने अपने चमकते दाँतों के बीच दोनों ओठों को दबाकर हँसी रोकने की कोशिश की। पदम ने यह ताड़ लिया। उसने झपटकर उसकी कलाई पकड़ ली और खींचता हुआ बोला—“चल तुझे थपथपा दूँ।” फुलवा एक बारगी खिलखिलाकर हँसी; फिर उस हँसी को पी गई, बोली—“तूने यह क्या कर दिया पदम, बाबा जीता न छोड़ेंगे!”

“क्यों?”—पदम ने एक पत्थर उठाकर पानी पर तैरती गोबर-भरी टोकनी पर दे मारा। ‘छप’ की आवाज हुई और टोकनी पानी की तली

में जा बैठी। फुलवा को गुस्सा आ गया। आँखें नीली-पीली करते बोली—“मेरी टोकनी ला, आया बड़ा मनसबदार कहीं का। बाबा से कहकर तेरी आँखें नुचवा लूँगी।”

“यह तो तू ही कर सकती है”—पदम ने फुलवा का हाथ पकड़कर जब खींचा तो उसका सारा गुस्सा हवा में उड़ गया। दोनों एक पत्थर के पास पहुँचे। पदम पत्थर के सहारे टिककर खड़ा हो गया और फुलवा ने अपना सिर पदम के वक्ष पर रख दिया। ऊपर आकाश में दो पक्षियों का जोड़ा टें-टें करते उड़ा जा रहा था। दोनों ने उसकी ओर देखा—दोनों की चाल एक थी, एक-से डैने और एक-सी चोंच।

“काश! हम भी ऐसे ही उड़ सकते”—पदम फुलवा की अलकें सहला रहा था।

“क्यों नहीं, क्या हम इस धरती पर नहीं उड़ सकते?” फुलवा ने उत्सुकता से पूछा।

“उड़ सकते हैं फुलवा, पर दुश्मन जो पीछे लगे हैं।”

“दुश्मन कहाँ नहीं हैं पदम, आकाश में ही तो चील और बाज जैसे पक्षी होते हैं, पर देखा नहीं बगुला जाति के उन सफेद पक्षियों को, क्या तेरे जैसे डरते थे वे?”

“नहीं”—पदम ने धीरे से कहा—“पर दोनों सफेद थे।”

फुलवा तुनककर खड़ी हो गई—“निगोड़े, मेरी हँसी उड़ाता है! थोड़ी काली हूँ तो जा ले आ कोई पदमिनी।”

पदम को जैसे वर्ष ने काट खाया। उसको कल्पना भी न थी कि फुलवा उसकी बात का नया अर्थ लगा लेगी। “ऐसी बात नहीं है फुलवा”—पदम ने मक्खन लगाया।

“चल जाने दे, मैं सब जानती हूँ, किसी और से आँख लग गई है तो मेरी हँसी क्यों उड़ाता है?” उसने मुँह फेरा और नाले की ओर बढ़ी—“जा, तू उस पदमिनी से ब्याह रचा, मैं जाती हूँ वहीं, जहाँ मेरे गोबर की टोकनी चली गई!”

पदम ने दौड़कर फुलवा को पकड़ लिया—“तेरे हाथ जोड़ता हूँ फुलवा, उस दिन जरा-सी बात में चट्टान से क्रुद पड़ी थी, मेरी तो शामत आ गई थी।”

“अच्छा जी, सिर फूटा मेरा और शामत उनकी आई थी ! बकरे की जान जाय और खानेवाले को अलोना लगे !” पदम ने उसके पैर पकड़ लिये—“चल तेरी ही सही, जरा में तुनक जाती है और ऐसे ताने मारती है कि बर काटने-जैसा दर्द होता है।”

फुलवा मोम की तरह पिघल गई। पदम ने जैसे उसे चुनौती दी थी, वह पदम के पैरों पर गिर पड़ी—“बुरा मान गया ? मुझे माफ कर दे पदम, मुझे तो तेरे ही पैरों का आसरा है।” पदम ने उठकर उसे छाती से लगा लिया। दोनों के प्रेमाश्रुओं ने उनका अन्तर धो दिया। फुलवा ने पूछा—“कल घोटुल में नाच है पदम, आयगा न ?”

“काहे का नाच फुलवा ?” पदम ने आश्चर्य से पूछा।

“वही शादी का करमा, ढोली के आँगन में”—उसका मुख डूबते क्षितिज जैसा आरक्त हो उठा।

“मैं नहीं समझा तेरा मतलब ?” पदम के प्रश्न पर फुलवा ने नाक सिकोड़ी—“बुद्धू कहीं का, करमा होगा ढोली के आँगन में। जोड़े ब्याहे जायेंगे। नाच के बीच से हम भी भाग निकलेंगे और तीन दिन इसी नाले के तीर यहीं काटेंगे !”

“इस जंगल में तीन दिन ! क्या करेंगे ?”—पदम जैसे कुछ समझा ही नहीं।

फुलवा ने आँखों की पुतलियों का सहारा लिया, बोली—“निपट बुद्धू है, भूल गया वे दिन ? क्या कहा था तूने, जिन्दगी भर तेरा हाथ नहीं छोड़ूँगा, अब मुकरने लगा !”

पदमसिंह के मस्तक से जैसे किसी गुल्ले का पत्थर जा टकराया—“ये बात है”—उसने फुलवा के मांसल गालों को जोर से दबाया। वह

चीख उठी। उस चीख में महुए जैसी मादकता थी। दोनों एक-दूसरे में सिमट गए।

पन्द्रह वर्ष पहले का जमाना आज सपना लग रहा था।

हरी-भरी झाड़ियों के बीच दो नन्हें बच्चे घूम रहे थे। एक का मन रंगीन तितली से उलझ रहा था जो केतकी के पीले फूलों पर उड़ रही थी। उसने तितली की ओर हाथ बढ़ाया। वह रंगीन परी फुर्र से दूर जा उड़ी। निराश होकर उसने मुँह लटका लिया, तो दूसरे ने आकर ढाढ़स बँधाया—‘चल मैं तितली पकड़े देता हूँ।’ वह दूसरे झुरमुट की ओर बढ़ गया। छोटे-से घाँघरे को हाथ में समेटे वह भी पीछे लग गई। वहाँ कई तितलियाँ थीं। कई रंगों की। बालक हाथ बढ़ाता, पर वह दूर जा उड़ती। तभी एक झुरमुट में सरसराहट हुई। दोनों सहम गये। एक-दूसरे से लिपट गये। दोनों भय से काँप रहे थे। एक पक्षी पंख फड़फड़कर उस झुरमुट से उड़ गया। बालिका ने जोर से हँस दिया—“कायर कहीं के, डरता है!”

“एँ, क्या कहा, डरता है?”—उसने दो चाँटे बालिका के गालों में दे मारे। उसका मुख विवर्ण होकर नीचे झुक गया। सिसक-सिसककर वह रोने लगी। उसकी सिसकियाँ हवा की लहरों में तैरती रहीं। बालक दूर खड़ा पैर के अँगूठे से जमीन कुरेद रहा था। उसकी भी आँखें नम थीं, जैसे वह पश्चात्ताप कर रहा हो। एकाएक दौड़कर उसने बालिका को पकड़ लिया। उसी के घाँघरे से उसने उसके आँसू पोंछे—“मेरी अच्छी रानी, मत रो, मैं पाँव पड़ता हूँ तेरे; चल, फिर तितली पकड़ें।” पल भर में ही सारे आँसू जैसे स्याहीसोख ने सोख लिये। सूरजमुखी के फूल की तरह दोनों खिल उठे। हरसिंगार जैसी चमक उनके चेहरे पर आ गई।

एक बेरी के झुरमुट में कई तितलियाँ बैठी थीं। वे दोनों उस ओर दौड़े। तितली स्वप्न की तरह आती और पतंग की डोर की भाँति हाथ के पास से छूट जाती। छलनामयी सतरंगी माया और जीव जैसी होड़ वहाँ लगी थी। आखिर माया का जाल दूर हुआ, वह जीव के कब्जे में थी।

तितली पाकर बालिका बेहद खुश हुई। मोर की तरह वह नाच उठी। फिर उसने पूछा—“कल तूने चिड़िया पकड़ी थी न, वह कहाँ है?”

“घर में, क्यों?”—बालक ने सहज भाव से पूछा।

“हम इन दोनों का ब्याह रचायेंगे। तुम्हारी चिड़िया दुल्हन बनेगी और यह तितली दूल्हा।” बालक ने स्वीकृति नहीं दी। बोला—“नहीं हो सकता। चिड़िया और तितली में भला क्या मेल! बात मेल-जेल-वालों में की जाती है। कहाँ इतनी बड़ी चिड़िया और कहाँ चगत्ती तितली और वह भी दूल्हा बने! हरगिज नहीं हो सकता।”

“क्यों नहीं हो सकता?” लड़की ने प्रतिवाद किया।

दोनों में इसी तरह से उत्तर-प्रत्युत्तर बड़ी देर तक होते रहे। इतनी अधिक बहस यदि सचमुच दूल्हा-दुल्हनवाले करने लगें तो शायद विवाह कभी असफल न हों। वर-वधू के गुण-दोष सभी पर सटीक चर्चा हुई और अन्त में दोनों में समझौता हो गया कि—तितली दुल्हन बनेगी और चिड़िया दूल्हा। दोनों नाले के किनारे पहुँचे। छुटने तक पानी में जाकर हाथ की अंजलि से उन्होंने पानी पिया। पदम ने टीले पर चढ़कर एक पत्थर फेंका। हरी चादर की खाई में छेद हो गया। वह बोला—“दादी कहती थी जब तू बड़ा होगा तेरे लिए तितली जैसी दुल्हन लाऊँगी।”

लड़की ने कहा मेरी दादी तो कहती थी कि बतक जैसा गोरा और मोटा दूल्हा मेरे लिए लायेगी।”

“तुझे दूल्हे की क्या जरूरत?”

“और तुझे दुल्हन की क्या जरूरत?”

“हाँ, जरूरत तो नहीं है। तू ठीक कहती है—” लड़के ने कहा—“हमारी दादी जरूर पागल है। दिनभर दूल्हा-दुल्हन की बातें करती रहती है।”

“चल, छोड़ इन बातों को”—लड़की ने रोक दिया—“संझा हो रही है घर चलें, नहीं तो कल की तरह फिर आज साँप रास्ते में मिले और मुझे काटने दौड़े।”

“बस, डर गई ! मढ़ियावाला बाबा कहाँ गया है। तुझे गोद में उठाकर ले जाऊँगा और बाबा से कहूँगा बाबा, मेरी रानी रूठ गई है। इसे मना दो। बस फिर क्या है, बाबा जादू का डंडा घुमायेंगे, दो-चार फूँक मारेंगे और तू खड़ी हो जायेगी।”

“और कहीं मुझे शेर उठा ले जाय तो ?” लड़की ने प्रश्न किया।

लड़के ने एक छड़ी रास्ते से उठाई और एक पैर पीछे रखकर बहादुरी से बोला—“इस डंडे से मार-मारकर साले का मलीदा बना दूँगा। हरदौल का नाम लेकर दो चोट कलूँगा” “आये तो सामने।”

लड़की खिलखिला कर हँस पड़ी—“तू तो सचमुच शिकार करने लगा।”

हाथ में हाथ डाले दोनों बच्चों ने खेतों की पगडंडी पार की और गाँव के गेंवड़े में प्रवेश किया। जहाँ संध्या की गोधूली में वे खो गये।

यही थे पदमसिंह और फुलवा—भैरव का बेटा और ननकू की बेटा।

गाँव के बाहर पहाड़ी के नीचे एक टूटा-फूटा मन्दिर है और उसीसे लगी गन्दे पानी से भरी एक पुरानी बावली। उसके पानी में जैसी अतीत की परछाईं दीख पड़ती है। कभी उसने भी वैभव के दिन देखे थे, पर ध्वज जमाना बदल गया था। फिर भी उसकी बेजोड़ कारीगरी की चर्चा आसपास के गाँव में भी होती थी। अब तो उस भग्न मंदिर के बाहर एक छोटी-सी धूनी जलती रहती है, मानव जीवन की ही तरह अस्थिर। कभी उसकी लौ तेज हो जाती है तो कभी वह धुएँ में बदल जाती है। तब पुजारी अपने चिमटे की चोट से उसे खड़खड़ाकर जैसे मौत के मुँह में जाने से बचा लेता है। धूनी की लौ जैसी हालत उस पुजारी की भी है। न जाने कब उसकी साँस धोखा दे जाय। मुख पर अनगिनत झुर्रियाँ किसी गाँव के गेंवड़े के पास बिछी पगडंडियों की भाँति चमक रही हैं, और सिर का साफा जैसे इन पगडंडियों को एक में मिलानेवाला केन्द्र है। पुजारी की बाजू में एक युवक बैठा है, नाम है पदमसिंह। बूढ़ा

जैसे कोई लम्बी कहानी कह रहा है। बीच-बीच में वह कभी हँसता है तो कभी उसकी आँखें गीली हो जाती हैं। कभी क्रोध और घृणा के भाव उसके चेहरे पर नजर आते हैं तो कभी जब आग की लपट तेज हो जाती है तो उसके मुँह पर हृदय का विष फैलता-सा नजर आता है। बीच में युवक कभी टोक देता है और प्रतिवाद करने लगता है। उसकी बातों से लगता है जैसे धूनी की आग से भी तेज और भयंकर आँच उसके हृदय में फैली है। वह कह रहा है—“बाबा यह जाति-पाँति क्या चीज है ? मुझे धक्का देकर नाच से क्यों निकाला गया ? मैं इसका बदला लूँगा, आखिर तुम्हारा बेटा हूँ न, भैरव का—उस भैरव का, जिसे सारा गाँव पूजता है।”

बूढ़े ने उसे थपथपाया—“धीरज धरो बेटा, बिना जाने-बूझे उत्तेजित नहीं होते। जाति-पाँति तो हमारी सीमा है। सीता ने सीमा तोड़ कर ही अपना अपहरण कराया था। पदम, क्या तू यही हालत अपने समाज की देखना चाहता है, अपनी देखना चाहता है ?” पदम के मन में तो विष फैला था, उसे पुजारी की यह व्याख्या बड़ी घिसी-पिटी और पुरानी लगी। वह बोला—“यह रूढ़ि आखिर कब तक चलेगी, बाबा ? फुलवा के बिना मैं जी नहीं सकता। वह भी मेरे बिना नहीं रह सकती। तुम मुझे फुलवा की जाति बताओ, मैं उसी की जाति का हो जाऊँगा !”

“यह नहीं हो सकता पदम”—बूढ़े ने विरोध किया—“इसे हम नहीं बदल सकते !”

पदम के मुख पर घृणा के अजीब चिह्न बने और भिट गये। वह तेज होकर बोला—“नहीं बाबा, यह नहीं हो सकता। जाति-पाँति हमारा तुम्हारा स्वाँग-प्रपंच है। भगवान् का नहीं। उसकी निगाह में सब एक हैं। तुमने ही तो यह बताया था कि भगवान् समदर्शी है। वह भेदभाव नहीं जानता, फिर यह कैसा पचड़ा है और फिर यहाँ तो सारा गाँव तुम्हारी पूजा करता है। बाबा, तुम्हारे पैर पड़ता हूँ। तुम पूजे जाओ और तुम्हारा बेटा ठुकराया जाय यह...।”

“बस, डर गई ! मढ़ियावाला बाबा कहाँ गया है। तुझे गोद में उठाकर ले जाऊँगा और बाबा से कहूँगा बाबा, मेरी रानी रूठ गई है। इसे मना दो। बस फिर क्या है, बाबा जादू का डंडा घुमायेंगे, दो-चार फूँक मारेंगे और तू खड़ी हो जायेगी।”

“और कहीं मुझे शेर उठा ले जाय तो ?” लड़की ने प्रश्न किया।

लड़के ने एक छड़ी रास्ते से उठाई और एक पैर पीछे रखकर बहादुरी से बोला—“इस डंडे से मार-मारकर साले का मलीदा बना दूँगा। हरदौल का नाम लेकर दो चोट करूँगा” “आये तो सामने।”

लड़की खिलखिला कर हँस पड़ी—“तू तो सचमुच शिकार करने लगा।”

हाथ में हाथ डाले दोनों बच्चों ने खेतों की पगडंडी पार की और गाँव के गेंवड़े में प्रवेश किया। जहाँ संध्या की गोधूली में वे खो गये।

यही थे पदमसिंह और फुलवा—भैरव का बेटा और ननकू की बेटा।

गाँव के बाहर पहाड़ी के नीचे एक टूटा-फूटा मन्दिर है और उसीसे लगी गन्दे पानी से भरी एक पुरानी बावली। उसके पानी में जैसी अतीत की परछाईं दीख पड़ती है। कभी उसने भी वैभव के दिन देखे थे, पर अब जमाना बदल गया था। फिर भी उसकी बेजोड़ कारीगरी की चर्चा आसपास के गाँव में भी होती थी। अब तो उस भग्न मंदिर के बाहर एक छोटी-सी धूनी जलती रहती है, मानव जीवन की ही तरह अस्थिर। कभी उसकी लौ तेज हो जाती है तो कभी वह धुएँ में बदल जाती है। तब पुजारी अपने चिमटे की चोट से उसे खड़खड़ाकर जैसे मौत के मुँह में जाने से बचा लेता है। धूनी की लौ जैसी हालत उस पुजारी की भी है। न जाने कब उसकी साँस धोखा दे जाय। मुख पर अनगिनत झुर्रियाँ किसी गाँव के गेंवड़े के पास बिछी पगडंडियों की भाँति चमक रही हैं, और सिर का साफा जैसे इन पगडंडियों को एक में मिलानेवाला केन्द्र है। पुजारी की बाजू में एक युवक बैठा है, नाम है पदमसिंह। बूढ़ा

जैसे कोई लम्बी कहानी कह रहा है। बीच-बीच में वह कभी हँसता है तो कभी उसकी आँखें गीली हो जाती हैं। कभी क्रोध और घृणा के भाव उसके चेहरे पर नजर आते हैं तो कभी जब आग की लपट तेज हो जाती है तो उसके मुँह पर हृदय का विष फैलता-सा नजर आता है। बीच में युवक कभी टोक देता है और प्रतिवाद करने लगता है। उसकी बातों से लगता है जैसे धूनी की आग से भी तेज और भयंकर आँच उसके हृदय में फैली है। वह कह रहा है—“बाबा यह जाति-पाँति क्या चीज है ? मुझे धक्का देकर नाच से क्यों निकाला गया ? मैं इसका बदला लूँगा, आखिर तुम्हारा बेटा हूँ न, भैरव का—उस भैरव का, जिसे सारा गाँव पूजता है।”

बूढ़े ने उसे थपथपाया—“धीरज धरो बेटा, बिना जाने-बूझे उत्तेजित नहीं होते। जाति-पाँति तो हमारी सीमा है। सीता ने सीमा तोड़ कर ही अपना अपहरण कराया था। पदम, क्या तू यही हालत अपने समाज की देखना चाहता है, अपनी देखना चाहता है ?” पदम के मन में तो विष फैला था, उसे पुजारी की यह व्याख्या बड़ी घिसी-पिठी और पुरानी लगी। वह बोला—“यह रुढ़ि आखिर कब तक चलेगी, बाबा ? फुलवा के बिना मैं जी नहीं सकता। वह भी मेरे बिना नहीं रह सकती। तुम मुझे फुलवा की जाति बताओ, मैं उसी की जाति का हो जाऊँगा !”

“यह नहीं हो सकता पदम”—बूढ़े ने विरोध किया—“इसे हम नहीं बदल सकते !”

पदम के मुख पर घृणा के अजीब चिह्न बने और मिट गये। वह तेज होकर बोला—“नहीं बाबा, यह नहीं हो सकता। जाति-पाँति हमारा तुम्हारा स्वाँग-प्रपंच है। भगवान् का नहीं। उसकी निगाह में सब एक हैं। तुमने ही तो यह बताया था कि भगवान् समदर्शी है। वह भेदभाव नहीं जानता, फिर यह कैसा पचड़ा है और फिर यहाँ तो सारा गाँव तुम्हारी पूजा करता है। बाबा, तुम्हारे पैर पड़ता हूँ। तुम पूजे जाओ और तुम्हारा बेटा ठुकराया जाय यह...।”

बूढ़े के आजन्म संचित स्नेह के बाँध को जैसे किसीने एक झटके के साथ तोड़ दिया। उसका गला भर आया। भरे गले से उसने कहा—
“फुलवा गोंड की बेटा है पदम, उसका ब्याह गनपत से होगा, तुझसे नहीं। तू उसे भूल जा !” “गनपत से !” पदम का मुँह फटा रह गया।

“हाँ बेटा, गनपत से।”

“आखिर क्यों ? फुलवा तो मुझे चाहती है। तुम ननकू को मना सकते हो, बाबा !”

भैरव का दर्द बढ़ता जा रहा था। उसकी आँखों के सामने पदम और फुलवा के चेहरे दो अर्धखिले फूलों की भाँति दिखाई दे रहे थे। उसे लग रहा था जैसे आँधी का एक भारी बवण्डर इन दो फूलों को मिट्टी में मिला देगा। उससे न रहा गया। उसने पदम को अपनी गोद में भर लिया—“बेटा पदम, तुम्हें कैसे समझाऊँ कि गाँव की जनता मेरे पैर क्यों पड़ती है और तुझे घृणाभरी नजरों से क्यों देखती है ? एक जमाने की बात हो गई यह, तब शान्ति को जैसे सूरज की तीखी किरणों ने निगलने की हिम्मत की थी। गोला-बारूद की धड़कनों ने इस घाटी के अन्तर को हिला दिया था। महाकाल के इस अखण्ड ताण्डव के बीच आदमी राई की तरह रौंदा जा रहा था। दो जातियों के बीच संघर्ष का यह परिणाम था। हम असभ्य और जंगली समझे जाते थे और हमें सभ्य बनाने के लिए शहर के गोरों ने हम पर यह हमला किया था। क्योंकि हमें उनकी चमक-दमक और टीमटाम से नफरत थी और आज भी है। वह सभ्यता क्या, जो जोंक की तरह आदमी का खून चूसे और वह आदमी क्या, जो आदमी के खून का प्यासा हो।” बूढ़ा आवेश में था, उसका सारा तन-बदन काँप रहा था—“ऐसे इन्सान की तो आँख निकाल लेनी चाहिए,” उसने झपटकर पदमसिंह का गला पकड़ लिया। वह चिल्ला पड़ा—“बाबा, बाबा !”

बूढ़े की चेतना में जैसे पत्थर की चोट लगी, उसने अपने को धिक्कारा। पदमसिंह को खींचकर उसने छाती से लगा लिया—“बुढ़ाफे

ने बेजार बना दिया, अतीत की ये स्मृतियाँ जब आँखों के सामने उभरती हैं तो खून उतर आता है... ये हाथ भी सीमा के बाहर चले जाते हैं। अभी तेरा खून किये दे रहा था।” पदमसिंह अभी भी बाबा की छाती से चिपटा था। उसका शरीर काँप रहा था। वह बूढ़े के इस परिवर्तन का कारण नहीं समझ सका।

आँखों से निकले आँसुओं को पोंछकर बूढ़े ने अपनी कहानी आगे बढ़ाई—“तो हम पर हमला हुआ, हमने उसका सामना किया। सरकार ने हमें विद्रोही करार कर दिया। लगातार आठ दिन की मुठभेड़ के बाद वे भाग गये और इस घाटी में मरघट जैसी शान्ति छा गई। हम अपने साथियों सहित बड़े-बड़े मशाल लिये दुश्मनों की खोज कर रहे थे। जब हम एक घनी पहाड़ी के बीच पहुँचे तो हमने किसी के कराहने की आवाज सुनी। हम आगे बढ़े। एक घने झुरमुट के नीचे हमने एक हिलती-सी छाया देखी। पास जाने पर पता लगा, वह एक स्त्री थी। बड़ी दृष्ट-पुष्ट और सुन्दर। वह चित लेटी थी। उसके सीने में एक बाण बिंधा था, शरीर विवश था। तुरन्त का प्रसव किया एक बच्चा खून और धूल में सना वहाँ पड़ा था और वह तेजी से कराह रही थी। देखते-देखते उसका कराहना बन्द हो गया और वह एकदम शान्त हो गई। उसकी देह तब ठण्डी पड़ चुकी थी। प्रतिहिंसा की आग मेरे मन में तेजी से भड़क रही थी। मैंने इस बच्चे के टुकड़े-टुकड़े कर देना चाहा पर, जाने किस अज्ञात शक्ति ने मुझे खींच लिया। उठाते ही वह रोने लगा। मृग-शावक के बच्चे की भाँति उसकी छोटी-छोटी आँखें बड़ी दीनता से भरी थीं। मेरा मन भर गया। मैंने उसे चुपाने की कोशिश की पर वह नहीं चुपा। रातभर मैं अपने साथियों सहित जंगल में भटकता रहा। जब पूरब से सूर्य की किरणों ने चुपके से आकर आम के वृक्ष में लटके मधु के छत्ते को निहारा तो मेरा मन अपने आप खिल उठा। उसकी दो बूँदों ने इस बच्चे का रोना बन्द किया।”

इतना कहकर पुजारी ने सन्तोष की साँस ली, जैसे इस सेवा से इसे

शान्ति मिली हो। पदम ने व्यग्र होकर पूछा—“फिर क्या हुआ बाबा ?”

“फिर क्या होता है बेटा”—बड़े स्नेह के साथ पुजारी पदम पर हाथ फेर रहा था—“आज मैं खुश हूँ उस बालक की जान बचाकर। सोचता हूँ, कहीं ये दुष्ट हाथ अपनी मानवता खो देते तो आज यह प्यार कहाँ पाता ?”

“यह बदनसीब बालक कौन है, बाबा ?” पदम ने सहज ही पूछा तो पुजारी ने पदम को फिर अपने अंक में समेट लिया और फूट-फूटकर रोने लगा। आज उसका स्नेह दरिया के प्रवाह-सा बह रहा था। पदम ने पुजारी के पैर पकड़ लिये—“यह नहीं हो सकता बाबा, मैं तुम्हारा बेटा हूँ। यह सारी कहानी झूठ है !”

“तुम ठीक कहते हो पदम, यह सारी कहानी झूठ है। धरती पर रहनेवाला हर आदमी एक है। उनमें भेद कहाँ।” “तो फुलवा से मेरी शादी कर दो बाबा”—पदम की बाँलें खिल उठीं !

पुजारी का मुँह नीचे झुक गया। उसने अपने आँसू पोंछे—“मैंने तुम्हें पाला है पदम, गाँववाले और समाज के ठेकेदार ऐसा हृदय नहीं पा सकते। फुलवा का ब्याह तुझसे करने की सामर्थ्य मुझमें नहीं है।”

पदम तनकर बैठ गया—“क्या तुम्हारे समझाने पर भी गाँववाले नहीं मानेंगे ?”

“नहीं, इससे पुरानी आग फिर सुलगेगी। तू नहीं जानता, उन दुश्मनों ने हमारे साथ क्या नहीं किया। उनका नाम सुनकर सारा गाँव कमान तक लेता है। मैं नहीं कहता, तुझमें वे गुण हैं, पर यहाँ तो एक जाति दूसरी जाति को खाने दौड़ती है, फिर तू एकदम...।”

पदम उठकर खड़ा हो गया—“यह नहीं होगा, बाबा ! मेमना और भेड़िया का किस्सा तुम्हें भुलाना होगा। आदमी आदमी के बीच का यह भेद मिटाना पड़ेगा। तुम भर साथ दे दो बाबा, फिर गाँववाले फुलवा को मुझसे नहीं छीन सकते। यह उनके लिए कड़ा गुजरेगा।” हवा का एक सर्द झोंका आया। धूनी की लौ तिलमिल उठी और उसी

में समा गई। पुजारी ने तब अपने हथियार का उपयोग नहीं किया, और सचमुच गाँव की पंचायत भी फुलवा को पदम से न छीन सकी। उनकी इस प्रेम कहानी ने पिछले कई दिनों से गाँव में बड़ा बखेड़ा खड़ा कर दिया था। ननकू का रास्ता चलना हराम था। जाने कितने लोग कितने तरह के ताने कसते, अपनी बेटी को वह बस में नहीं रख सकता। पर ननकू क्या करता। वह फुलवा से तंग आ गया था। उसने लाख समझाया, पर वह न मानी। पदम के बिना जिन्दा रहना उसके लिए कठिन था। इसीसे ननकू के कोड़े की मार उसने सही। दो-दो दिन भूखी पड़ी रही, पर टस से मस नहीं हुई। उसने साफ कह दिया था कि गनपत के हाथ मेरी लाश के सिवाय कुछ नहीं लगेगा। ननकू अब क्या करता, एक ओर समाज के बन्धन उसके पैरों में बेड़ी डाले थे तो दूसरी ओर अपनी इकलौती बेटी का स्नेह। उबलते दूध की तरह छलक रहा था। कितने लाड़-दुलार से उसने फुलवा को पाला है। गरीबी, और वह भी ऐसी, जिसमें बाज बख्त ऐसे दिन भी आये हैं जब एक मट्टी चना पाना भी नागवार गुजरा है, तब भी फुलवा का पेट ननकू ने भरा। कभी किसी के सामने उसने हाथ नहीं पसारा था। पर एक बार फुलवा के लिए उसने भीख भी माँगी थी। ऐसी लाड़ली बेटी को जान-बूझकर वह मौत के मुह में कैसे धकेल सकता था। उसने पंचायत बुलाई और सारा मामला उसके सामने पेश किया। पंचायत भराने का ननकू का क्या प्रयोजन था, किसी की समझ नहीं आया। क्योंकि पंचायत के सदस्य भी उसी रूढ़िग्रस्त फिरके के लोग थे। सदियों से चले आ रहे नियम और बन्धनों को तोड़ने का उनमें सामर्थ्य नहीं था। फुलवा और पदम भी खुश थे। जाने क्यों, शायद इसलिए कि पंचायत चाहे जो फैसला करे, वे एक होकर रहेंगे—जिन्दा रहकर नहीं, तो मरकर ही सही। या इसलिए कि पंचायत के सरपंच का सहरा बूढ़े पुजारी के सिर पर बाँधा गया था। उसे जिन्दगी उसने ही दी थी। नहीं तो वह कब का मिट्टी में मिल चुका होता।

सारा मामला पंचायत में पेश हुआ। पंचों ने खूब चर्चा की, किन्तु

न्याय हृदयहीन होता है। उसके पास दया कहाँ ! वह अन्धे की तरह पुरानी लीक पर चलना जानता है। वह आसुओं का मोल क्या जाने ! मन की गहराइयों में उतरना उसने न कभी सीखा और न सीख सकता है। बूढ़े पुजारी को सरपंच का फर्ज अदा करना पड़ा। खड़े होकर उसने फैसला सुनाया कि—“फुलवा और पदम की हरकतें नाजायज हैं। जिसके माँ-बाप और जाति-पाँति का पता न हो उसके साथ फुलवा का ब्याह करना गाँव की बेइज्जती है। इसे किसी हालत में सहन नहीं किया जा सकता। यदि पंच फैसले के विरुद्ध फुलवा और पदम जाते हैं तो उन्हें गाँव छोड़ना पड़ेगा।”

फैसले के अंतिम वाक्यों में जैसे बूढ़े पुजारी का ममत्व बोल रहा था, इतनी गुंजाइश काफी थी। पदम ने फुलवा की ओर प्रश्नभरी नजरों से देखा। उत्तर में फुलवा ने हल्की मुस्कान बिखेर दी। दोनों के अन्तर खिल उठे। पदम ने दौड़कर भरी पंचायत के बीच फुलवा का हाथ पकड़ लिया। दोनों पंचों के पैर पड़े और गाँव छोड़ने के लिए तैयार हो गए। आज चिड़िया और तितली दो विभिन्न जाति के पक्षी एक जाति में बदल रहे थे।

बूढ़ा पुजारी अपने आपको न रोक सका। वह बच्चों की भाँति फूट-फूटकर रो पड़ा। अपना आसन छोड़कर वह बाहर आया। उसने पदम को गले लगा लिया। जब वे दोनों जाने लगे तो जैसे उसका कलेजा फट गया। वह चिल्लाया—“ठहरो पदम, सरपंच का फर्ज मैं अदा कर चुका। अब बाप का भी फर्ज मेरे सामने है। मानवता के धरातल में वही सबसे बड़ा है। मैं भी तुम्हारे साथ गाँव छोड़कर चलने को तैयार हूँ, मेरे बेटे, तुम्हारे बिना मेरा और कौन है !” सारा गाँव बूढ़े पुजारी की ओर विस्मय से देखता रहा। तभी ननकू ने फुलवा को छाती से लगा लिया—“तब मैं भी तेरे साथ चलेगा बेटा ! बुढ़ापे में समाज के ये झूठे बन्धन मुझसे नहीं सहे जाते। भगवान् खाने को दो रोटियाँ कहीं भी देगा।”

गाँव भर में कोलाहल मच गया। तरह-तरह की चर्चायें होने लगीं। यह सब जैसे एक नाटक की तरह सामने आया और खतम हो गया। गाँव का कोई आदमी बूढ़े पुजारी को छोड़ने को तैयार नहीं था। वह बचपन से उस मंदिर की पूजा करता चला आ रहा था। सारा गाँव उसकी इज्जत करता था। यदि वह गाँव छोड़कर भाग जावेगा तो फिर देवता की रक्षा कौन करेगा ? देवप्रकोप से उस गाँव को कौन बचायेगा ? उन्होंने विनती की, पर बूढ़े पुजारी का स्नेहप्लावित हृदय देवसाधना के सामने भी विनत नहीं ही हुआ। उसका हृदय आज समाज के इन जड़-बन्धनों के सामने जैसे चीख रहा था। वह बोला—“ये भेदभाव हमारे बनाये हैं, देवता के नहीं। वह सबके लिए समरस है। उसके लिए सब एक हैं। अपनी झूठी मान्यताओं की रक्षा करने के लिए हम समाज के उन अंकुरों को नहीं कुचल सकते जिन पर उसका भविष्य खड़ा है।”

सारा गाँव मुँह बाए खड़ा था। पंचायत के अन्य पंच अपना फैसला लेने को तैयार थे, पर बूढ़ा सरपंच कानून के साथ अन्याय भी नहीं करना चाहता था। उसने किसी की नहीं सुनी। वच्चों की तरह सिसकते हुए उसने गाँव से विदा ली। जाते-जाते वह कह गया कि—जब तक गाँव अपने कानून नहीं बदलता, यह बूढ़ा पुजारी उसकी धरती पर कदम नहीं रखेगा।

पत्थरहृदय पुजारी जब गेंवडे के बाहर पहुँचा तो उस दिन की डूबती संध्या ने भी रंग बदल दिया था। क्षितिज तब हल्दी की तरह पीला था, जैसे पुरानी रूढ़ियों ने उसका भी खून चूस डाला है।

१०. महत्मा-ग्राम के जंगल

महतूने आगे बढ़कर माही के हाथ से खरहरा छीन लिया और अमराई के नीचे की जमीन साफ करने लगा। जिस जल्दी में और जिस लगन के साथ महतू यह काम कर रहा था, उसे देखकर उसकी मिहरिया को जलन हो रही थी। वह चुपके-चुपके आँख उठाकर सयाने गुनियाँ की तरफ देख रही थी, और गुनियाँ ध्यान लगाये महतू की पैतरेबाजी देखने में मगन था। जब वह झाड़ चुका तो गुनियाँ ने आगे बढ़कर उसे थप-थपाया और सुकवरिया की ओर देखकर बोला—“देख सुवकी, तू कहती थी, महतू अलाल है और दिनभर पड़ा-पड़ा खाता है, काम-धंधा तो उसके बाप से भी नहीं हुआ। आज देखा कमाल तूने उसका, अब शिकायत तो नहीं करेगी?” सुकवारिया की आँखें नीचे झुक गईं। सब लोग खूब खिलखिलाकर हँसने लगे, उनकी खुशीका ठिकाना नहीं था।

जमीन ने जब सारा गोबर सोख लिया तो सुकवरिया ने मक्का के आटे से चौक पूरा और उसपर कच्चे तथा पके चावल बगरा दिये। गुनियाँ ने अपनी चकमक महतू की ओर बढ़ाई। महतू ने दीपक की “जोत” जला दी। “जोत” जलते ही सब लोग ध्यान लगाकर गुनियाँ की ओर देखने लगे। गुनियाँ नारायण देव की प्रार्थना में व्यस्त हो गया। दो-चार मन्त्रों के बाद देवता को धूप दी गई और सारे लोगोंकी आँखें सुअर पर अटक गईं। वह जमीन में मुँह लगाये पूर्ववत् खड़ा था और सारे चावल उसी तरह बिखरे पड़े थे। गुनियाँ के चेहरे पर चिन्ता की दो-

चार रेखायें उभरती दिखाई दीं। उसने देवता का नाम लेकर नारियल फोड़ा, उसपर (लंदा) शराब चढ़ाई और अपने मन्त्रों द्वारा वह सुअर की चेतना जगाने लगा। सुअर मन्त्रोंके प्रभाव से झूमने लगा और जैसे ही उसने चावल के दाने अपने मुँह से उठाये कि पीछे से महतू ने आगे बढ़कर मूसर से उसकी पूँछ काट ली। पूँछ के कटते ही नारायणदेव की आत्मा सुअर पर उतर आई, फिर उसने खूब चावल खाये। गुनियाँ ने अक्षत-चन्दन से उसकी पूजा की और आरती उतारी। बूढ़ी वैसखिया तब तक बाजू में गड्ढा बना रही थी। जब गड्ढा खुद गया तो उसने उसमें गरम पानी भर दिया। तेलामी, महतू और गुनियाँ, तीनोंने सुअर की पिछली टांगें पकड़कर, उसका मुँह उस गड्ढे में जैसे ही डाला कि वह दर्द भरी आवाज से चीख उठा। औरतों की खुशी का ठिकाना नहीं, उनका नारायणदेव जैसे प्रसन्नता से चिल्ला रहा था। देव प्रसन्न हो गए हैं, तो अब बरसभर सारा गाँव बाधाओंसे मुक्त रहेगा, कोई बीमार नहीं पड़ेगा और न किसी को भूत-प्रेत या चुड़ैल सतायेगी। सुकवरिया न जाने क्यों सबसे ज्यादा खुश थी। कमल को देखकर जैसे भौंरा गूँजने लगता है, सुअर के खूनकी धार को देखकर, काले बदन पर सेमल की तरह चमकते उसके ओंठ भी गुनगुना उठे—

तेर ना नी न ओ, तेर नाना के नाँव रे।

तेर ना ना, ना ना, तेर नाना के नाँव रे ॥

तेर ना ना ओ—

दूसरी औरतों ने सुकवरिया का साथ दिया, ढोलची भी मैदान में उतर पड़े, नगाड़ेवालों ने जैसे इन पर विजय पाने की कोशिश की और देखते ही देखते वहाँ नाच-गाने का मजमा जम गया। गुनियाँ ने महतू की पीठ पर एक हलका-सा धक्का दिया और आँखों तथा ओठों के सहारे कुछ ऐसी बात कही कि उससे न रहा गया। उसने दौड़कर सुकवरिया की कमर में हाथ डाल दिया। उसकी देखा-देखी ४-५ जोड़े भी मैदान में उतरे और गाँव के बूढ़े इस उत्सव का आनन्द लेने में तन्मय हो गए।

ढोल और नगाड़े बजते रहे, जवान जोड़े, अपने रंगीन पैतरे दिखाते रहे और अघेड़ औरतें अपने गुजरे जमाने की याद में मस्त उनके गीत का साथ देती रहीं। गुनियाँ और गाँव का बूढ़ा मुखिया बेहद खुश यह तमाशा देखते रहे। आज नारायणदेव ने उनकी पूजा स्वीकार कर ली थी। यह उत्सव शायद घंटों चलता यदि सुकवरिया की नजर काले घोड़े पर सवार उस गोरे अफसर पर न पड़ती। उसे देखते ही उसने नाचना-गाना बन्द कर दिया। महतू का हाथ छुड़ाकर वह बूढ़े मुखिया से जालिपटी। बात की बात में सारी खुशी हवा में उड़ गई, जैसे पूर्णिमा का पूरा निखरा चाँद काले मेघों की छाया में ढँक गया। गोरे अफसर के साथवाला दूसरा अफसर गरजा—“क्या बदतमीजी है?” उसकी आँखों से क्रोध की चिनगारियाँ निकल रही थीं। सब लोग भयभीत खड़े थे। दोनों अफसरों के हाथों में पिस्तौल थी और उनके पीछे ४-५ सिपाही भी थे। वे हाथों में कोड़े लिये थे।

गोरा अपने काले घोड़े से नीचे उतर पड़ा। औरतों पर उसने एक उड़ती नजर डाली और अन्त में सुकवरिया पर उसकी तीखी नजरें अटक गईं। सिर से पैर तक उसने उसे घूरा, उसके उभरते जोवन और दमकते चेहरे को देखकर मन-ही-मन वह न जाने क्या बुदबुदाया। साथवाले काले अफसर ने उसके सामने सिर झुका दिया, पर गोरे ने उसकी परवाह नहीं की। वह उसी बूढ़े मुखिया की ओर बढ़ा जिससे लिपटी सुकवरिया एक सुकुमार लता की भाँति काँप रही थी।

“टुम ये किया करटा?”—गोरे ने आँखें लाल-पीली करते मुखिया से पूछा। मुखिया उसकी बात नहीं समझ पाया। सुकवरिया को छोड़कर वह दो कदम आगे बढ़ा। बढ़कर उसने दोनों हाथों से गोरे का अभिवादन किया और प्रश्नभरी मुद्रा में उसके मुँह को निहारने लगा।

“क्या टुकुर-टुकुर देखता है, बदतमीज?”

बूढ़ा अब भी चुप था। काले अफसर ने एक सिपाही के हाथ से कोड़ा छीनकर मुखिया की पीठ में दो-चार जड़ दिये। वहाँ खलबली

मच गई। औरतें एक तरफ इकट्ठी होकर खड़ी हो गयीं। महतू को खून सवार हो गया। अपने तरकस से एक तीर निकालकर उसने अफसर को निशाना साधा ही था कि गुनियाँ ने पीछे से उसका हाथ पकड़ लिया। काला अफसर और उसके सिपाही आगे बढ़े। वे महतू को पकड़ना चाहते थे पर गोरे ने रोक दिया। काले अफसर को पास बुलाकर उसने पूछा—“ये क्या गरवर है?” काले अफसर ने यही बात गुनियाँ से पूछी तो उसने बताया कि—“हम लोग ‘लारूकाज’ मना रहे हैं।”

“लेडकाज? ! ये क्या बाट है?”—गोरे ने जिज्ञासा से पूछा। अब उसने अपना कोड़ा बन्द कर लिया था और क्रोध की जगह सुसकान आ गई थी। यह देखकर सारे बैगा कुछ आश्चस्त हो गये थे। गोरे के साथवाले बड़े सिपाही ने, जो अपने सहायकों के साथ खुसमुस कर रहा था, आगे आकर साहब को बताया कि “लारू-काज” बैगाओं का एक उत्सव है। इसे वे साल में एक बार मनाते हैं और नारायणदेव की पूजा करते हैं। नारायणदेव इन्हें विपत्तियों से बचाता है। वे प्रार्थना करते हैं कि अगले सालभर गाँव पर कोई आपत्ति न आये।”

गोरे ने पूछा—“यह नारायन, कौन देव है?”

गुनियाँ को जैसे अब गोरे की बात समझ में आ गई थी, बोला—“हुजूर, ये बीमारियों का राजा है। सारी बीमारियाँ इसीके कहने से आती हैं। हमारे गाँव में भूत-प्रेत और चुड़ैल भी हमला करते रहते हैं। यह देवता बड़ा तेज है, वह इन बाधाओं से भी हमें बचाता है।”

उसने गाँव के गेंवडे पर बनी पत्थर की कोरी और झण्डे लगे स्थान की ओर इशारा कर बताया कि—“वह है हमारा नारायणदेव।” गोरे ने सिर हिलाया जैसे वह सब कुछ समझ गया हो। यहाँ-वहाँ उसने नजर फेंकी, उस गड्ढे की ओर जहाँ सुअर उल्टा खड़ा था, अँगुली दिखाते हुए उसने कहा—“बड़ा जंगली आदमी है, दुम लोग। कैसा जानवर

१. ऊपर उत्सव का जो वर्णन कहानी में किया गया है, वह ‘लारूकाज’ का सही वर्णन है।

को मारटा है !”

“जंगली” शब्द सुनकर गुनियाँ ने प्रसन्नता से कहा—“हाँ हुजूर, हम जंगल में रहता है। सुअर हमने नहीं मारा, देवता को भेंट दी है। उसने यह भेंट मंजूर कर ली है। अब हम सब लोग यह प्रसाद खायेंगे।”

उसने महतू को इशारा किया। महतू ने सुअर को गड्डे से निकाला और अपनी टँगिया से उसे काटने लगा। काले अफसर और सिपाहियों ने नाक-भौंह सिकोड़ी। गोरे ने कहा—“ट्रेमेन्डस ! ये आदमी बहुत बड़ा जानवर है।” काले अफसर की ओर लौटकर उसने कहा—“आज रात यहीं रेस्ट करेगा।” फिर सुकवरिया की ओर इशारा कर वह बोला—“बड़ा खूबसूरत लौंडी है।” काला अफसर सब कुछ समझ गया। उसने अपने सिपाहियों को उचित आदेश दे दिये और सारी फौज गाँव के अन्दर चली गई।

२

गाँव के बाहर दूसरी ओर एक छोटा-सा पुराना टूटा-फूटा पक्का मकान था। लड़ाई के जमाने में उसे बनवाया गया था, पर कोई उपयोग नहीं हो सका। हवा और पानी की बौछारों को सहता वह जर्जर हो गया था। गाँववाले दिन में कभी उसकी परछी में बैठ-उठ लेते, पर रात में वहाँ कोई नहीं ठहरता। वे इसे “राजामहल” के नाम से पुकारते थे। इस महल के बारे में उस गाँव में कई किस्से कहे जाते थे। यहीं गोरे अफसर के ठहरने का बन्दोबस्त किया गया।

गाँव के मुखिया को जब यह खबर लगी कि यह गोरा अफसर उस जिले का सबसे बड़ा साहब है और उसके गाँव की जाँच करने आया है, तो वह कोढ़े की मार भूल गया। अपने को वह धन्य मानने लगा। इतने बड़े अन्नदाता के हाथ की मार उसे भगवान् के वरदान जैसी लगी। उसने सिपाहियों को सलाह दी की सरकार को उस महल में न ठहराया जाय, पर किसीने उसकी बात न मानी। मुखिया से न रहा गया।

गाँव में आनेवाले हर अफसर की सेवा करना उसका काम था। वह जानता था कि इन्हीं अफसरों के बल पर गाँव सुखी रह सकता है। यदि कोई नाराज हो जाय तो न जाने कब किस आदमी पर कौन-सी विपदा आ पड़े। शायद यही कारण है कि इस गाँव के किसी आदमी ने कभी अदालत नहीं देखी। गाँव के सारे झगड़े वह मुखिया बड़ी होशियारी और निष्पक्षता से निपटा देता था। उसने कभी किसी का पक्ष नहीं लिया। इसलिए सारा गाँव उसे इज्जत से देखता था। मुखिया को डर था कि यदि रात को गोरे अफसर पर किसी भूत या चुड़ैल ने धावा बोल दिया तो उसमें ज्यादा नुकसान सारे गाँव का होगा। वह मालिक है, गाँव में आग लगवा सकता है, गाँव के एक-एक आदमी को जिन्दा जलवा सकता है। वह हाथ में लाठी लिये राजामहल आ पहुँचा। दरवाजे पर उसने माथा टेका तो गोरा अफसर बेहद खुश हुआ। आगे बढ़कर उसने मुखिया के हाथ पकड़ लिये, बोला—“अमको बहोत रंज है, तुमको कोडा मारा... अमको मुआफ कर दो।” मुखिया ने सिर झुकाया—“यह क्या अन्न-दाता ! ऐसा ‘भाग’ किसे नसीब होता है !”

गोरा लज्जित हुआ। उसने मुखिया को बैठने के लिए कुर्सी दी, पर उसने स्वीकार नहीं किया। वह दरवाजे की बाजू में दीवाल से टिककर बैठ गया। हाथ जोड़कर बोला—“गुस्ताखी माफ हो, हुजूर ने इस महल में ठहर कर अच्छा नहीं किया।”

गोरे ने सिगरेट का एक कश खींचते हुए कहा—“तुमारा मतलब अम नहीं समझा।”

“हुजूर”—हाथ जोड़कर मुखिया बोला—“इस बँगले में बहुत बड़ी बाधा है सरकार। हर रात को यहाँ चुड़ैल आती है, छम-छम करती हुई। लड़ाई के बाद यहाँ कोई नहीं ठहरा। लड़ाई के जमाने में यह बँगला बना था। तब यहाँ दो पंजाबी सिपाही रहते थे। उनमें से एक तो थोड़े दिन बाद कहीं चला गया, दूसरा अकेला रह गया। वह बड़ा नेक आदमी था। सारे गाँव की उसके साथ दोस्ती थी, पर जब वह लौजा

की बेटी झिरिया से प्रेम करने लगा, तो सारा गाँव उससे चिढ़ गया। गाँव भर में दोनों के प्रेम के किस्से कहे जाने लगे। जहाँ देखो वहाँ उनकी चर्चा होती थी। ठीक भी तो है, हम बैगा पराये आदमी को भला अपने जात की बेटी पर आँखें उठाते कैसे देख सकते हैं। एक दिन गाँव के सारे बैगा अपनी टँगिया और फरसा लेकर इस बँगले पर आ धमके। मैंने उन्हें खूब समझाया तब कहीं मुझिल से वे माने। पर दूसरे ही दिन झिरिया की शादी एक ऐसे लड़के से कर दी गई जिससे वह चिढ़ती थी। जिस रात उसका ब्याह हुआ, उसी रात वह पीपल के झाड़ में फाँसी लगाकर मर गई।” मुखिया ने सामने अँगुली दिखाते हुए कहा—

“वह रहा पीपल का झाड़, जिसकी डाल में झिरिया लटक गई थी। उसकी मृत्यु से वह पंजाबी सिपाही इतना दुःखी हुआ कि उसने अपनी वर्दी में आग लगा दी और झिरिया के साथ मरने को तैयार हो गया। गाँवभर ने उसे समझाया, पर वह दीवाना था झिरिया के पीछे। जहाँ उसे दफनाया गया था, वह रोज वहाँ जाकर घण्टों बैठा रहता था। कई दिन उसका यही क्रम रहा और अन्त में एक दिन वह गाँव छोड़कर चला गया। आजतक फिर उसका पता नहीं लगा। जाते समय किसी-से कहता रहा है कि—“झिरिया रोज रात को उससे मिलने बँगले में आती थी और उससे कहती थी कि वह उसके पास आ जाय।” पंजाबी चला गया, पर झिरिया की रूह रोज रात को इसी कमरे में, जहाँ वह सिपाही सोता था, आती है और उसे खोजती रहती है। मरने के बाद झिरिया चुड़ैल हो गई। इसलिए उसकी रूह से हर कोई डरता है।

“मेरे घर का ही एक किस्सा है, सरकार। दो बरस पहले घर में लड़की हुई थी। मेरी बड़ी लड़की जब यह समाचार बताने बाहर आई तो झोपड़ी में एक उल्लू बैठा दिखा। उसे अशुभ समझकर उसने पत्थर मारा। उस पत्थर को उठाकर उल्लू भाग गया और उसके बाद से ही मेरी लड़की घुलने लगी...”

इसी समय काले अफसर ने कमरे में प्रवेश किया, एक लम्बी सेल्यूट

लगाकर बोला—“सब इन्तजाम हो गया है, सरकार। हुजूर के मन-बहलाव के लिए नाच-गाने का प्रबन्ध भी हो गया है।” मुखिया की ओर मुड़कर वह बोला—“क्यों रे, सरकार से क्या शिकायत कर रहा था ?”

• “शिकायत नहीं हुजूर” • ।”

“हाँ, शिकायत नहीं तो क्या है, हुजूर को भय दिखाता है ? उल्लू पत्थर ले गया तो तेरी लड़की घुलने लगी ! अभी झूठ बोलना सीख” • ।” काले ने बड़ी-बड़ी आँखें तरेरते हुए कहा ।

मुखिया ने झुककर हाथ जोड़े—“सही कह रहा हूँ मालिक, उस उल्लू ने वह पत्थर पानी में भिगोकर किसी ऊँची टौरिया पर रख दिया होगा । जैसे-जैसे पत्थर का पानी सूखता गया, मेरी लड़की भी सूखती गई । ओझा ने (गुनियाँ) बड़ी कोशिश की, पर उस चुड़ैल ने मेरी लड़की को न छोड़ा” • झिरिया मरकर चुड़ैल बनी और न जाने कितने वेष में वह गाँव के चक्कर लगाती रहती है । मेरी मिहरिया गाँव में सयानी मानी जाती है । वही झिरिया और पंजाबी सिपाही के प्रेम के बीच सबसे बड़ी बाधक थी । इसीसे झिरिया हम पर नाराज है और सताती रहती है । खैरियत तो यह है कि ओझा पड़ोसी है, सो रात-आधीरात मदद को आ जाता है ।”

काले अफसर ने उसे डाँटा—“रहने दे ये किस्से, चला जा यहाँ से ।” गोरे ने मुसकाकर कहा—“बहूट खूब, मुखिया, अम भूट नहीं मानटा ।” खिलखिलाकर हँसते हुए वह बोला—“राट को अम तुमारा चुड़ैल देखेगा ।” फिर काले अफसर की तरफ मुड़कर उसने पूछा—“छोकरी का क्या ?”

“वह इन्तजाम भी हो गया हजूर । रात को यहाँ करमा होगा, नाच के बाद सुकवरिया सरकार के कमरे में ठहर जायगी” • ।”

“वो टयार हो गया । खूब, दुम बहोट अच्छा अफसर है—” गोरे ने उसकी पीठ थपथपाई ।

“तैयार कैसे नहीं होगा हुजूर, ऐसा हो तो देश का शासन कैसे

चले । मार-मारकर मैंने उसके मर्द महतू से हामी भरवा ली ।”

मुखिया चुप रहा । दोनों को हाथ जोड़कर चला गया । उसके जाने के बाद गोरे ने कहा—“आज अम भूट देखेगा, और कोई काम नई करेगा । महतू को बोलो, औरट कल भेजेगा ।”

“तो क्या हुजूर हम लोग यहाँ कल भी ठहरेंगे ?”

अफसर ने खड़े होते हुए कहा—“ओ यस” और कमरे में यहाँ-वहाँ टहलने लगा—“ए ग्रेट नाइट” “स्परिट” “व्हाट नॉनसेंस !”

३

सिपाही ने आकर खबर दी कि नाचने-गानेवाले आ गये हैं और हुजूर की प्रतीक्षा की जा रही है । वह निकल कर बाहर आया । सामने के मैदान में २५-३० स्त्री-पुरुष कौड़ियों की मालाओं और आभूषणों से सजे खड़े थे । पुरुष सिर पर जंगली मैसे के सींग और मोरपंखा बाँधे थे । गोरे ने आश्चर्य से उन्हें देखा, फिर यहाँ-वहाँ नजर दौड़ाई । मुखिया कहीं न था । पूछने पर पता लगा कि उसे रास्ते में साँप ने काट खाया है । सुनकर गोरे को दुःख हुआ । वह डर गया, बोला—“स्नेक, ओ गॉड, मर गया, बरा स्वीट आदमी था” ।

गुनियाँ ने तभी कहा—“नहीं हुजूर, वह नहीं मरा ।”

“नई मरा ?” अफसर ने आश्चर्य से पूछा ।

“हाँ सरकार, साँप के काटने से कहीं कोई मरता है । अद्धाझारे^१ के पत्ते उसने वहीं इतने चबा लिए हैं कि साँप का जहर क्या लगेगा ! फिर घर में करू तुरइया भी वह खूब खा गया है । और मैं भी झाड़ आया हूँ हुजूर, साँप ने अपना जहर वापिस लेने कह दिया है, मुखिया अभी आता ही होगा ।”

गारा, आँखें निकालकर उसे देख रहा था । अपने आप वह बोला-

१. अद्धाझारा, एक प्रकार का झाड़ होता है, जिसकी जड़ लम्बी और पत्ते छोटे होते हैं । इसकी जड़ दतोन के काम आती है ।

“अजीब आदमी है। स्नेक ने प्रोमिस किया।” बाहर बरामदे में रखी कुर्सी पर वह जाकर बैठ गया। तभी मुखिया ने आकर सलामी ठोकी। गोरे ने रुमाल निकालकर अपनी आँखें पोंछीं और सिर से पैर तक मुखिया को घूरा। उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं था। बोला—
“वण्डर ।”

ढोलिये ने ढोल पर थाप मारी, अन्दर से सिहरती आवाज निकली, टिमकी, निसान और किकिर भी ब्रज उठे और जैसे ही बाँसुरी के सुरों ने हवा के लहराते झोंकों को पकड़ा कि औरत और मर्दों की टोली झूम उठी। मुखिया ने बीच में कूदकर तान छेड़ी, मर्दों ने साथ दिया—
“ओ हो SSS हाय रे हाय SSS ।” औरतों ने जवाबी स्वर छेड़े—“ये हे SSS हाय रे हाय SS ।”

धन रे अंगरिजवा

तोरी अक्कल भारी रेSS, हाय रे हायSSS

अधरे चलाय रिलगारीSS, हो हाय रे हाय

मर्दों ने टेक पर बल दिया—

ओ होSSSS, अधरे चलाय रिलगारी,

हाय रे हाय रिलगारी ।

पतलून पहनथे गोरा, उपर बढ़िया कोट,

पावन में बिलनैती जूता, सिर बिलनैती टोप ।

होSSS हाय रे हाय, बिलनैती टोप ।

सुकवरिया ने इस गीत पर जो पैतरे दिखाये, उसकी लचीली कमर ने नागिन की तरह जितने रंग बदले, गोरे अफसर की आँखों में छा गये। पहाड़ी नाले की तरह उचटती और हवा की तरह लहराती सुकवरिया उस झुण्ड में अकेली दिख रही थी। गोरा रह-रहकर जीभ से अपने होंठ चाटता और आँखें फाड़कर हरे बाँस की जवान शाखा की भाँति झूलती सुकवरिया को घूरता। गाने की तान और लय पर भी वह मुग्ध था।

देहातियों के मुँह से अपनी प्रशंसा सुनकर उसका मन फूल रहा था। जहाँ कहीं समझ में न आता वह बाजू में बैठे काले अफसर से पूछ लेता। वह तत्काल खड़े होकर अर्थ बता देता। गोरा मुसकरा देता तो अफसर के चेहरे पर सन्तोष की एक रेखा खिंच जाती।

आधीरात तक नाच-गाना होता रहा। उसके बाद सब अपने-अपने घर चले गये। सुकवरिया को भी नहीं ठहराया गया। गोरा अफसर अपने कमरे में अकेला चला गया। उसके सहायक अफसर और सिपाही बाजू के कमरे में सो गये।

४

दो घंटे बाद जैसे किसीने उसे झकझोर दिया। घबड़ाकर उसने आँखें खोलीं। इधर-उधर देखा और फिर सोने चला गया, पर उसे नींद नहीं आई। उसके दिमाग में तरह-तरह के विचार चक्कर काटने लगे। तभी कमरे के दरवाजे की संघ से ज्वाला की एक पतली-सी रेखा उसे दिखाई दी। ऐसा लगा जैसे किवाड़ जल रहे हैं। वह काँपने लगा, क्या गाँव-वालों ने आग लगा दी?—उसे कोई आवाज सुनाई दी, जैसे कमरे में कोई कराह रहा है। कराहने की आवाज धीरे-धीरे और रह-रहकर आती थी। वह कभी तेज हो जाती और कभी मन्द पड़ जाती। गोरे ने देखा आग की उस रेखा के बीच से एक लम्बा धूँधट निकाले कोई औरत उसकी ओर बढ़ी चली आ रही है। दो-चार कदम सामने आकर उसने धूँधट उठा दिया। अब उसका चेहरा साफ दिखाई देने लगा। साँवले-रंग की वह जवान लड़की गले में धुँधचियों की माला पहिने थी और आँखों से आसुओं की धारा निकलकर उसके शरीर को जैसे धो रही थी। उसका चेहरा डरावना था। अँग्रेज का मुँह जैसे किसीने बन्द कर दिया था। वह काँप रहा था और आँखों के सामने उसे केवल उस लड़की का भयानक चेहरा ही दिख रहा था। उसने जैसे ही उठने की कोशिश की कि किसीने उसके पैर पकड़कर उसे पछाड़ दिया। उसने दो-तीन

कुलाटें भरीं और बिस्तर से दूर जमीन पर जा पड़ा। नीचे गिरते ही उसके मुँह से जोर की चीख निकली।

आवाज सुनकर बाजू में पड़े काले अफसर और सिपाही लैम्प लेकर दौड़े। उन्होंने गोरे को जमीन पर अचेत पड़ा पाया। उसके सिर में चोट आ गई थी और वहाँ से खून निकल रहा था। लैम्प लेकर महल के चारों ओर सिपाहियों ने देखा, सभी ओर गहरी शांति छाई हुई थी। दूर की पहाड़ी से कभी रह-रहकर पाड़े की आवाज आ रही थी।

गोरे के घायल होने की बात, सबेरा होते ही सारे गाँव में हवा की तरह फैल गई। मुखिया ने जब यह सुना तो दौड़कर ओझा के दरवाजे खटखटाये और शाम का सारी बात उससे कह दी। गाँवभर में यह खबर फैल गई कि झिरिया ने हुजूर को दबा लिया है। मुखिया ने यही बात काले अफसर से कही, पर उसने बात नहीं मानी। बोला—“हम भूत-प्रेत कुछ नहीं मानता, यह तुम लोगों का बहम है।” आखिर गाँव-वालों के बहुत कहने पर उसका बिस्तर राजामहल से उठवा दिया गया और गाँव की एक झोपड़ी में उसे शरण दी गई।

शहर से डाक्टर बुलवाया गया। उसने आकर परीक्षा की। “स्थेटी-स्कोप” लगाकर उसने कई बार गोरे को आगे-पीछे देखा, पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। वह चक्कर में पड़ गया। इतना कुशल डाक्टर, फिर भी बीमारी उसकी समझ से परे थी। उसने दो-चार किस्म की दवाइयाँ दीं, दो-तीन इंजेक्शन लगाए पर असर किसीका नहीं हुआ। हताश होकर उसने सलाह दी कि उसे शहर के अस्पताल में तुरन्त भेज दिया जाय।

ओझा और मुखिया वहाँ हाजिर थे। मुखिया ने ओझा (गुनियाँ) की तारीफ के पुल बाँधने शुरू कर दिए। उसने बताया कि एक बार वह एक मरे लड़के को जिन्दा कर चुका है। उसे मरे दो घंटे हुए थे। जब ओझा को पता लगा तो उसने उसकी झाड़-फूँक की। उसके सिर से एक जुआँ निकालकर उसके खून से हवन किया। फिर उसकी भस्म को

एक पत्ते में लपेटकर वह उसे नदी में बहाने ले गया। जब लौटकर आया तो उसने लड़के को खेलते पाया। काले अफसर ने यह सुनकर मुखिया को डाँट दिया, बोला—“बेवकूफ बनाता है, हुजूर की जान लेना चाहता है।” लेकिन न जाने क्यों डाक्टर को मुखिया की बात पर यकीन हो गया। उसने ओझा से प्रार्थना की कि वह मदद करे। ओझा जैसे तैयार बैठा था, वह गोरे अफसर की तबीयत बिगड़ने का कारण भी जानता था। उसकी इच्छा भी थी कि गोरा उस गाँव से बीमार न जाय। यदि बीमार चला गया तो गोरा अपनी जान से हाथ धो बैठेगा और सारे गाँव पर कलंक का टीका लगेगा।

पास पड़ी झाड़ू का बड़ा-सा गुच्छा निकालकर वह जमीन पर बैठ गया। सामने एक सूप में उसने थोड़े चावल रख दिये। हाथ में पानी लेकर उसने मंत्र पढ़ना शुरू कर दिये। एक मंत्र खतम होता और पानी की अंजलि वह गोरे पर मारता। दूसरी अंजलि लेता और उसी तरह फिर मंत्र पढ़ने लगता। बड़ी देर तक यही चलता रहा। गुनियाँ ने धूप लगाई और पलंग के जैसे ही दो चक्कर काटे कि गोरा साँप की तरह अँगड़ाई लेने लगा। गुनियाँ ने आगे बढ़कर एक हाथ से उसकी बायीं कलाई पकड़ी और दूसरे से झाड़ू का टुकड़ा लेकर उसके चारों ओर घुमाने लगा।

उसने मंत्र दुहराये, जमीन पर थोड़ी लौंदा (शराब) डाली और दाहिने हाथ में पानी लेकर जैसे ही गोरे के मुख पर मारा कि उसने आँखें खोल दीं और न जाने क्या-क्या बड़बड़ाने लगा। गुनियाँ का चेहरा खुशी से फूल उठा। उसने खड़े होकर फिर मंत्र पढ़े। अब गोरा एकटक गुनियाँ की ओर देखने लगा, गुनियाँ ने उसकी आँखें बाँध लीं।

हाथ आगे-पीछे खींचते हुए उसने पूछा—“कौन है तू?”

गोरेने उत्तर दिया—“झि—रि—या।”

गुनियाँ ने मंत्र पढ़ा और फिर प्रश्न किया—“इसे छोड़, मालिक हैं गाँव के?” “नहीं, नहीं, छोड़ूँगी। मेरे पलंग पर क्यों सोया? नारायण-देव का अपमान किया, मुखिया को मारा नहीं, मैं इसका खून पी

जाऊंगी।”

“क्या कहा ?”—गुनियाँ ने झाड़ू धुमाते कहा—“खून पियेगी, मान ले, नये हैं, मालिक ने अनजान में सब किया, छोड़।”

“नहीं छोड़ूंगी”—गोरे के मुख से इतनी अच्छी हिन्दी सुनकर डाक्टर और काला अफसर आश्चर्य में थे। वे अचरज के साथ खड़े यह तमाशा देख रहे थे। गुनियाँ और झिरिया के बीच खींचा-तानी मची थी। झिरिया गोरे को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थी और गुनियाँ छुड़ाने के लिए कमर कस चुका था। बातचीत की खींचा-तानी के बीच एकाएक उठकर गुनियाँ ने गोरे के गाल में जैसे ही तमाचा मारा कि उसकी आवाज लड़खड़ाने लगी। वह रोने लगा—“मुझे छोड़ दो—छोड़ दो—।” काले अफसर को क्रोध आ गया। गुनियाँ की हिम्मत देखकर उसकी आँखों से खून चुआ जा रहा था। वह आगे बढ़ा, लेकिन डाक्टर ने उसे रोक दिया। डाक्टर बड़े गौर से सारे परिवर्तन देख रहा था। अन्त में झिरिया गोरे को छोड़ने के लिए तैयार हो गई। एक नारियल फोड़ा गया। उसने आँखें खोलीं, सारे लोग चारों ओर घेरे खड़े थे। डाक्टर ने जब अपना “रथेटिस्कोप” गोरे के आगे-पीछे लगाया तो हँस पड़ा—“आप अब ठीक हैं हुजूर !”

“ठीक हूँ।”—गोरा बिस्तर से उठ बैठा। उसने दौड़कर गुनियाँ को गले लगा लिया—“टुमने हमारा जान बचाया।” और १० का एक नोट बक्शीस के रूप में उसे देने के लिए आगे बढ़ाया, पर गुनियाँ ने उसे स्वीकार नहीं किया, बोला—“नहीं सरकार, हम आप का दिया ही तो खाते हैं।”

अब गोरे के लिए वहाँ ठहरना कड़ा गुजर रहा था। उसने अफसर को आदेश दिया कि—हम लोग अभी, इसी समय इस गाँव को छोड़ देंगे। आज्ञा पाते ही सिपाही तैयारी में लग गए। दोनों घोड़े कस दिए गए। गोरे ने झोपड़ी से निकलकर चारों ओर देखा, सामने राजामहल दिखाई दिया। उसे देखते ही रात की सारी घटना उसकी आँखों के

सामने घूमने लगी। चलते-चलते उसने गुनियाँ और मुखिया दोनों की बड़ी प्रशंसा की और अपने सहायक अफसर को आदेश दिया कि दोनों को एक-एक एकड़ बेबर सरकारकी ओर से मुक्त दे दी जाय। उन दोनों ने सरकार के सामने माथा झुका दिया। गोरे ने घोड़े को एड़ लगाई—घोड़ा आगे बढ़ा, तभी सामने से आती हुई सुकवरिया पर काले अफसर की नजर पड़ी। गोरे की बराबरी से अपना घोड़ा लाते हुए उसने कहा—
“हुजूर, खूबसूरत लैंडिया ! कहिये तो साथ—।”

“नो, नो”—गोरा झल्लाया—“जानवर आडमी ! अमको खा जाएगा—अम उसको देखना नई माँगटा !”

घोड़े हवा से बातें करने लगे और आम तथा महुआ के जंगल पीछे छूटते गए।

११. जलता सूरज

सूरज पहाड़ की नोक के पास अटका था, जहाँ धरती और आकाश मिलते हैं। उसका खून जैसा लाल रंग सारी तराई में छाया था। वह चर्च के बाहर खुले मैदान में खड़ी, इसी शून्य पर अटके, आग के गोले की तरह जलते सूरज की अन्तिम साँसों को गिन रही थी। लाल रंग धीरे-धीरे पीका पड़ता गया। उसे लगा जैसे उसके सामने एक पर्दा-सा उतर रहा है। उसमें उसकी जिन्दगी के बीते दिन ताजे बनकर एक के बाद एक आ रहे हैं। यहाँ आए उसे एक बरस हो गया। अब वह एक बच्चे की माँ भी है। सारा घर उसकी किलकारियों से गूँज उठता है, पर ये किलकारियाँ... वही तो वह हैं, जो आज भी उसे रुला रही हैं। काश, न वह यह पाप करती और न आज यह भार ढोना पड़ता।

कंगला की याद जब भी उसे आती है, एक हूक-सी उठने लगती है। जोसेफ कहने को तो उसका पति है, पर—एक साल पहिले का वह आज एकदम बदल गया है। क्यों? वह नहीं जानती। पर उसे रह-रहकर बच्चे की किलकारियाँ साल जाती हैं। कहते हैं, इससे माँ को स्वर्गीय आनन्द मिलता है, पर उसके लिए तो हर स्वर एक थपड़ है, गहरा चुभनेवाला तीर है और छाती की धड़कन के पास गड़ा काँटा है। उसे स्वप्न में भी यह कल्पना नहीं थी कि जोसेफ इस बच्चे को पराया समझेगा और उसके साथ ऐसा व्यवहार करेगा।

गुजरे जमाने की एक तस्वीर उसके सामने आई।

कोई तेन्दू के झाड़ पर चढ़ा उसे जोर-जोर से हिला रहा था। पके तेन्दू बरसाती पानी की बूंदों की भाँति नीचे टपक रहे थे। तब वह कुम्हड़ाटोले के नकटा नाले से पानी भरकर आ रही थी। बड़े-बड़े और पीले तेन्दुओं को देखकर जीभ ओंठ को चाटने लगी। झुककर उसने एक तेन्दू उठा लिया तो ऊपर से खोपड़ी पर पड़ापड़ दो चार गिरे। काँखकर वह वहीं अरअरा गई। ऊपर आँख उठाकर देखा विलियम झाड़ से उतर रहा था। विलियम उस गाँव के गायता का अकैला लड़का था। और सारे गाँव में छैला बना फिरता था। चाहे जिस छोकरी को छेड़ना और उसकी चिहुँची काटना उसका खेला था। झाड़ से उतरकर उसने उसकी बाँह पकड़ ली। बोला—“तेन्दू उठाती है!” दूसरे हाथ से उसने गाल में एक हल्का-सा चाँटा मारा और उसे अपने पास खींचते हुए बोला—“गुस्सा हो गई बंजारी! अरी, तू तो मेरी जिन्दगी है। तुझे भला मैं क्यों मारूँ। यह तो प्यार किया था तुझे!”

प्यार का नाम सुनकर उसकी घबड़ाहट हटी। गुस्सा आ गया। बोली—“बड़ा आया है प्यार करनेवाला! गाँव की हर जवान लड़की को छेड़ता है और सबसे प्यार जताता है। तेरे बाप ने गाँव पर एहसान किया है तो उसका मतलब यह नहीं कि तू हमारी इज्जत लूटे।”

“हमारी-तुम्हारी का कैसा भेद बंजारी?” वह हौले से बोला—“हम क्रिश्चियन हैं तो क्या! मेरे बापने सारे गाँव को बचाया था। जब अकाल पड़ा था तो दाने-दाने को सारा गाँव तरस गया था। तब कोई सामने नहीं आया। मेरे बाप ने खून-पसीना एक कर गाँवभर को अनाज बाँटा। हजारों आदमी जब मौत के मुँह में जा रहे थे तो गाँव में अस्पताल भी बनवा दिया।”

“बड़ा अच्छा किया!”—उसने दाँत दिखाते हुए कहा—“बहई (गुनियाँ) रोज पानी पी-पीकर तेरे वंशभर को कोसता है। और कोसे क्यों नहीं? उसकी रोजी तो छीन ली तेरे बाप ने। जरा-सा सिर दुखता है किसी का, तो सूटवारे साहब को बुला लाता है और हाथभर की सुई

घुसड़वा देता है ।” सुनकर विलियम ने नजर बदली । उसने दौड़कर बंजारी के दोनों हाथ पकड़ लिए । बोला—“अच्छा; तू जो कहेगी, वही होगा । साहब को भी भगवा दूँगा और अपने बाप का भी टिकट कटवा दूँगा । पर तू तो आँख न तरेर । कब से तेरा इन्तजार था । सोचा था, पानी भरकर नरवा से लौटेगी तो ढेर से तेन्दू तेरे आँचल में बाँध दूँगा ।” बंजारी को यह सब अच्छा नहीं लगा । उसने हाथ छुड़ाने की कोशिश की पर विलियम ने अपनी पकड़ कस ली थी । तब वह चिल्ला पड़ी । उसकी आवाज सुनकर सिदीराम दौड़ा आया । वह वहीं आसपास कहीं खेत जोत रहा था और रिश्ते में बंजारी का काका लगता था ।

सिदीराम को देखकर विलियम सिर पर पाँव रखकर भागा । सिदीराम ने बंजारी को ढाढ़स बँधाया । बोला—“रंगा स्यार है छोकरा । गाँवभर की लड़कियों को छेड़ता है और बाप की दुहाई देता है कि गाँव भर की जान बचाई । गाँवभर के चन्दे से विलायती चरच खड़ी कर रहा है । कहता है—इसमें तुम्हारे देवता बैठेंगे । एक ओर बड़े देव होंगे तो दूसरी ओर हिकिर देवता बैठेंगे । माइलोटा^१ कहीं का ।” उसने बंजारी के सिरपर हाथ फेरा, पर वह तब भी काँप रही थी । अभी उजेला था, इसलिए वह अकेले ही गाँव की ओर बढ़ गई । सिदीराम ने उसे बहुत समझाया था । उसने कहा था कि—अब वह सामने नहीं आ सकता । कभी आया तो उसकी खाल खींच लूँगा । पर बंजारी का मन बड़ा सशंकित था । उसे लग रहा था कि हर झाड़ और पेड़ के नीचे विलियम छिपा है । वह यहाँ से नहीं निकला तो वहाँ से निकलेगा । उसका डर मिथ्या नहीं था । जब वह गाँव के गंवडे में पीपर के पास पहुँची तो विलियम ने सचमुच उसकी राह रोक ली । अब की बार जब उसने चिल्लाने की कोशिश की तो विलियम ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया । बोला—“चिल्ला मत, मापी माँगने आया हूँ । मुझे नहीं मालूम था बंजारी, कि तू मुझसे इतनी नफरत करती है । मैं तो तेरे पैरों पर अपना माथा

१. माइलोटा—एक प्रकार की गाली है ।

धरकर जिन्दगी बिताना चाहता था। खैर, तू नहीं चाहती तो न सही, यह ले दो रुपए।” बंजारी ने रुपये लेने से पहिले तो इनकार कर दिया था, पर उसकी अजीजी के सामने उसे झुकना पड़ा था। आज भी ये दो रुपये उसकी नजर के सामने घूमते हैं। वे दो गोल-गोल चाँदी के रुपये। उसका मन हुआ था कि उन्हें फेंक दे। वह इन टुकड़ों को डालकर उसकी इज्जत लेना चाहता था। पर “दो रुपये कम होते हैं ! उसका तापे (बाप) दिन भर छाती मारता है तो मुश्किल से छः-सात आने पाता है, और आवा तपती दुपहरी में खेत काटती है तो एक पायली मक्का पाती है। दो रुपये पाना तो दूर, देखना भी दुर्लभ था। चील के घोंसले में कब इत्ता पैसा जमा होता है। उसने आँचल की गाँठ जोर से बाँध ली थी और संतोष की साँस ली थी। उस दिन रातभर वह बेचैन रही। बार-बार उसके मन में आता था कि वह विलियम की छेड़खानी की चर्चा अपने आवा और तापे से करे। पर हाथ एकाएक कमर की गाँठ में चला जाता था और साँस लेकर रह जाती थी। रातभर उसकी आँखों के सामने विलियम की शकल झलती रही। उसके लहरीदार बाल, बार-बार उसे सामने दिखाई देते रहे। इस रातभर की चिन्ता ने उसे अचानक विलियम के बहुत पास ला दिया था।

और तब, उसे वह सवेरा भी याद आ गया, जब वह माफी माँगने विलियम के यहाँ जानेवाली थी, पर वह खुद उसके घर आ धमका था। विलियम बड़ी देर तक, बजारी के घर आकर उसके तापे से यहाँ-वहाँ की बातें करता रहा था। चलते समय उसने बंजारी को एक लाल साड़ी और एक पोलका दिया। बंजारी यह एहसान नहीं लेना चाहती थी, पर जब विलियम ने करवट बदली और उसके तापे से कहा—“पटेल, क्या बहिन को भी भेंट देना मना है ?” तो तापे की आँख में आँसू आ गये थे। बंजारी को आगे बढ़कर उसकी भेंट स्वीकार करनी पड़ी।

विलियम की दी साड़ी और पोलका पहिने जब वह बाहर निकली तो सारे गाँव में हलचल मच गई। उसे गाँव की हर निगाह अनोखी

लगी। रधिया ने बेवर के पास उसका आँचल पकड़ लिया—“भाग लेकर आई है गुनियाँ, हममें इतना गुन कहाँ ? हम तो तरसते हैं, कोई प्रेमी आकर प्यारभरी चुटकी ले जाय।” सिंदीराम ने उसे देखा—तो बखरना छोड़कर दौड़ा आया। बोला—“विलियम जैसा छवीला किसकी मुट्ठी में आता है—सरपा भी तो तेरी बहिन है बंजारी, कुछ गुन उसे भी सिखा दे।”

सिंदीराम की बातें सुनकर बंजारी को प्रसन्न होना था, पर वह नहीं हुई। सबको झिड़क कर वह चली गई। टौरिया के पास वह फिर मिल गया। करौंदा की छाँव के नीचे बैठा बाँसुरी बजा रहा था। उसकी तान पर बंजारी उसी तरह मोह गई जिस तरह नागिन बिन पर मोह जाती है। वह आम के झाड़ के पास तक पहुँची थी कि विलियम ने तान बन्द कर दी और उसे खींचकर ले गया। बंजारी को भी तब मजाक सूझा। उसने एक चुटकी ली—“भइया...!” विलियम ने उसकी चोटी इतने जोर से खींची कि वह काँखकर रह गई। बंजारी ने कहा—“तूने ही तो मेरे तापे के सामने मुझे बहिन बनाया है। देखता नहीं, अपने भाई की दी साड़ी पहिने आज बाहर निकली हूँ।”

विलियम साधारण आदमी नहीं था। वह शायद इस तरह के कई खेल खेल चुका था। हँसते हुए बोला—“नाते-रिश्ते तो मानने के होते हैं, बंजारी। जब जो मन में आया, मान लिया।” बंजारी ने प्रतिवाद किया था और कहा था कि यह बदलाहट उसी की ही जात में है—“हम तो रिश्ते पर जीवन भर चलते हैं और एक जीवन नहीं, जन्म-जन्म तक हमारे रिश्ते नहीं बदलते।” विलियम ने यहाँ भी अपनी हार मान ली। बोला—“चल, तेरी ही सही, बात मानने की है न ? तू मुझे अपना भाई मानना, मैं तुझे अपनी रानी मानूँगा।” उस दिन करौंदे की उस छाँव में विलियम ने प्रेम के हजारों किस्से सुनाए। न जाने कहाँ-कहाँ की और कितनी रसभरी बातें कहीं और इन्हीं बातों की भूल-भुलैया में वह खो गई।

बंजारी ने सहसा लम्बी साँस ली । उसके पैर दर्द करने लगे थे । गेट की दीवार का सहारा लेकर वह खड़ी हो गई । आज उसके पास दो नहीं, कई रुपए हैं । पर जब वह रुपयों को देखती है तो उसकी आँखें भर जाती हैं । इन्हीं रुपयों ने उसे यहाँ लाकर खड़ा किया । इन्हीं रुपयों ने उससे उसके प्यारे कंगला को छीना था । उस कंगला को, जो नाम से भले ही कंगला हो, दिल का कंगाल नहीं था ।

महुआ के लाल-लाल फूल गाँव को घेरे खड़े थे, जैसे उसकी कपाल में कुमकुम भरा था । हरपू पाण्डुम का त्यौहार था । नीले आकाश में पूरा खिला चाँद, बीरन के ढोल और हरपू के दिल में चुभनेवाले गीत । और इसके साथ लाँदा की मस्ती । बंजारी को वह क्षण याद आ गया जब नाच करते-करते कंगला ने उसका अँगूठा दबाया था । वह काँख-कर रह गई थी । उसका मन तब कितना खुश था, कंगला ने अपना प्यार जो जताया था । पर वह प्यार !—बंजारी फिर आह भरकर रह गई । विलियम की शकल उसे सामने घूमती दिखाई दी । उसका मन प्रतिहिंसा से भड़क उठा । उसे लगा कि वह मिल भर जाय तो वह उसकी खाल खींच ले ।

नुका नौरदाना पाण्डुम का त्यौहार था । गाँवभर की कुमारियाँ रीना गा रही थीं । बंजारी अपने नाच के लिए प्रसिद्ध थी । वह घंटों नाचती पर कभी थकती नहीं थी । उस दिन न जाने क्या हुआ कि आध घंटा नाचने के बाद ही वह गश्त खाकर गिर पड़ी । और जब उसे पता लगा कि उसका पेट रह गया है तो उसके पैरों से जमीन खिसक गई । उसके आवा, तापे और बीर ने सिर पीट लिया । गाँवभर की उपेक्षा उसे मिली । इतना ही नहीं, सारा गाँव यह जान गया था कि यह सब विलियम का है । उसके तापे का हुक्का-पानी गाँवभर ने बन्द कर दिया । और किसी का पेट होता तो चल जाता, पर वह तो परजात का था । बंजारी की आँखों के सामने अँधेरा छा गया था । पर तभी उसे विलियम की बात याद आ गई थी—“घबड़ाने की इसमें क्या

बात है बंजारी ? मैं तो तुझे अपनी रानी बना लूँगा ।” उसने मन पर भारी पत्थर रखकर कंगला को भुला दिया और विलियम के हाथ गहने की बात तय की । पाप उसने किया था । वह नहीं चाहती थी कि इसकी सजा उसके आवा और तापे सहें और वे गाँव से दूर हो जायँ ।

पर... , पर विलियम सचमुच रंगा स्यार निकला । बंजारी के तापे से उसने कह दिया था—“बंजारी तो मेरी बहिन है पटेल । पर है वह बड़ी छँटी छुई । मैंने उसे गाँव के न जाने कितने लड़कों के साथ घूमते देखा है । ऐसी आवारा लड़की को क्यों मेरे गले बाँधता है ?” यह सुनकर बंजारी पहिले तो सन्न रह गई, पर फिर उसने साहस दिखाया । उसने पंचायत भराई । पंचायत भराने का उससे क्या मतलब था, वह खुद नहीं जानती थी । उसका सरपंच विलियम का बाप ही तो था । वही तो गाँव का गायता था । जो हो, बंजारी ने वेशरम होकर सब कुछ पंचों के सामने कह दिया । विलियम सारी बातों को साफ टाल गया । बहिन बनाने की बात पर वह बराबर अड़ा रहा ।

सरपंच आखिर विलियम का ही बाप था न ? उस विलियम का, जो कहता था कि नाते-रिश्ते तो मानने के होते हैं ! उसने बड़ी हमदर्दी दिखाई । बोला—“कुछ भी हो, बंजारी अभी नादान है । किसीके बहकावे में आ गई होगी । उसका कोई दोष नहीं । वह प्यार कंगला से करती थी, कंगला चाहे तो उसे ब्याह ले ।” कंगला तो तभी गाँव छोड़कर चला गया था जब उसे पता चला था कि बंजारी के पेट आ गया है । सरपंच यह बात भी जानता था । पर जानते हुए भी अनजान बनने की उसमें आदत थी । आखिर जब कोई उसको ब्याहने को तैयार नहीं हुआ तो वह जोसेफ के गले बाँध दी गई । जोसेफ जाति का गोंड था, पर वह क्रिश्चियन बन चुका था और अपने को पक्का क्रिश्ची मानता था । बंजारी अपनी जाति नहीं बदलना चाहती थी, पर अपने किये होता क्या है ?

बंजारी की आँखों के सामने वह चरच शूल रही थी जिसके सामने

खड़े होकर उसने जोसेफ का हाथ पकड़ा था, अपनी जात-पाँत बदली थी, घर-द्वार छोड़ा था और उसी के साथ वह बंजारी से बदलकर मिसेज बेंजो जोसेफ बन गई थी।

वह रात भी उसे याद है, जब जोसेफ ने प्यारभरी बातें की थीं। और बेंजो ने उन प्यारभरी बातों में अपना सारा दुःख भुलाने की कोशिश की थी। उसने कहा था—कि वह अब इस गाँव में नहीं रहना चाहती। वहाँ का हर झाड़ उसे करौंदे का झाड़ लगता है, जिसकी छाया में उसे नागिन दिखती है। जोसेफ ने उसकी बात मान ली थी। दूसरे दिन तिरतिरबेरा में दोनों ने वह गाँव छोड़ दिया था। बंजारी की आँखों के सामने गाँव छोड़ते वक्त के सारे दृश्य झूलने लगे। उसे वह नकटा नाला दिखा, जिसे उसने डरके मारे खुद पार नहीं किया था और जोसेफ ने गोद में उठाकर उसे दूसरी तरफ पहुँचाया था। तब उसने फिर लौटकर अपने गाँव को नहीं देखा था। पर... जोसेफ—उसने आह भरी !

सामने सूरज अब नहीं था। बाहर हलका-सा अँधेरा घिर आया था और घर के अन्दर से बच्चे के रोने की आवाज आ रही थी। जोसेफ तब कह रहा था—“हरामजादा, मरता भी नहीं। पराई थाती सिर का बोझ बनी हुई है। एक पापिन का साथ मिला है। यह मुझे भी गड्ढे में डालेगा।”

तब चर्च के मैदान में लगे बबूल के झाड़ों की फलियाँ हवा के झोंकों से खड़खड़ा उठी थीं और अपने आँसू पोंछकर एक माँ ने चौखट के अन्दर पैर रखे थे। जिन्दगी जब तक है, जीनी पड़ेगी। काश, आज उसमें इतनी ताकत होती कि वह इच्छा करती और उसकी जिन्दगी का चिराग हवा में लड़खड़ाकर सदा के लिए सो जाता।

१२. माया, माटी और मानव

शम्भू सिंह अपनी बखरी की देहली में तब भी उदास बैठे थे। उनकी पत्नी की दशा का तो कहना ही क्या ? अपने इकलौते बेटे की साँस उखड़ते ही वे बेहोश होकर गिर पड़ी थीं। और १२ घण्टे हो गये, उन्हें होश नहीं आया। गाँव के सबसे पुराने वैद्यराज उनकी नाड़ी देख चुके थे और यह बता चुके थे कि बहू को गहरा सदमा पहुँचा है, पर डर की बात नहीं है। शम्भू सिंह इस समय अपने आप में बुरी तरह उलझे थे। संध्या के झुटपुटे में हल और बैलों को साथ लिए किसान घर लौट रहे थे। रास्ते में जब मालिक की बखरी दिख जाती तो वे दो कदम रुक जाते, मालिक को सिर झुकाते और दुःखभरी लम्बी साँस छोड़ चल देते। यदि गाँव का कोई बड़ा-बूढ़ा निकलता तो उनके दुःख में अपने को शरीक कर देता और संसार की असारता के किस्से सुनाकर चला जाता, किन्तु शम्भू सिंह का 'मूढ़' बेहद खराब था। उन्हें जितना दुःख अपने बेटे के मरने का नहीं था, उससे अधिक क्रोध और घृणा गाँववालों पर थी। उनका नन्हा-सा बेटा दूध के लिए तड़पता रहा, पर वे अन्तिम बार एक बूँद दूध भी न पिला सके। गाँवभर में बर्तन लेकर घूम आये, किसीने तनिक-सा भी दूध नहीं दिया और अब वही गाँवावाले समवेदना और हमदर्दी की लम्बी-लम्बी बातें करते हैं। शम्भू सिंह जितना इस विषय पर सोचते, उनकी प्रतिहिंसा उतनी ही भड़कती। उन्हें लगता कि यहाँ से निकलने

वाले प्रत्येक राहगीर को गोली से उड़ा दूँ।

×

×

×

×

शम्भू सिंह का भी एक जमाना था। उनके पिता यदुनाथ सिंह १८ गाँव के जमींदार थे। घर में घी-दूध की नदियाँ बहती थीं और ठाठ-बाट किसी राजा से कम नहीं रहा। गाँववाले यदुनाथ सिंह के इशारों पर नाचते थे। यदि मालिक के सिर में थोड़ा-सा दर्द हो गया तो सारे गाँव के पेट में वायशूल उठ जाता था। उनकी बखरी के सामने भीड़ लग जाती और सारा गाँव चिन्ता से जलने लगता। जब उनकी मृत्यु हुई तो तीन दिन गाँवभर में कोई चूल्हा नहीं जला और लोगों के चेहरे पर भूलकर भी हँसी के चिह्न नहीं दिखाई दिये। तब शम्भू सिंह नादान थे, खरगोशों जैसी चपलता और अल्हड़ता उनमें भरी थी। इतनी बड़ी जमींदारी का बोझ उनके सिर पर नहीं डाला जा सकता था इसलिए उनकी माता ने कार्यभार अपने हाथ में संभाला।

शम्भू सिंह की माता ६० वर्ष की धर्मपरायणता वृद्धा थीं और जिस कुशलता से उन्होंने गाँव का शासन चलाया, वह अब गाँव के इतिहास का स्वर्णपृष्ठ बन गया है। उन दिनों की याद जब लोगों को आती है तो आप ही आप आँखों से श्रद्धा और दुःख के आँसू गिर पड़ते हैं। वृद्ध माता के शासन को लोग “औरत का शासन” कहकर आज भी पुकारते हैं और उन्होंने यह धारणा बना ली है कि जितना अच्छा शासन औरत कर सकती है, पुरुष नहीं कर सकता।

बुढ़िया इतनी बड़ी जमींदारी का कारवार घर बैठे-बैठे चलाती रही। घर के बाहर कभी उसने पैर नहीं रखे। कभी खेत में जाकर उसने यह नहीं देखा कि कितना अनाज बोया गया है, फसल कैसी हुई है, कितने बोझे कटे और कितना अनाज घर आया। उसके नौकर ही वास्तव में मालिक थे। उन पर मालकिन को अटूट विश्वास था, इसलिए जो कुछ भी अनाज घर आ जाता उसीसे वह सन्तोष कर लेती। उसने कभी किसीकी ईमानदारी परखने की कोशिश नहीं की और न किसीके बारे

में कभी किसी दूसरे मजदूर से पूछा। यही कारण था कि सारा गाँव इस वृद्धा को अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति से देखता। वहाँ से निकलनेवाला प्रत्येक ग्रामीण उसके सामने मस्तक झुकाता और दो आशीर्वाद भर शब्द लेकर आगे बढ़ता। बुढ़िया भी सारे गाँव को अपना समझती और गाँव के हर आदमी को बेटे से बढ़कर मानती थी। किसीके घर कोई बीमार हुआ और बुढ़िया को खबर लगी तो उपचार के लिए वह स्वयं प्रबन्ध करती थी। गाँव में यदि कोई भूखा है तो उसे बुलाकर वह खुद परोसकर भोजन कराती थी और आगे वह भूखा न रहे, इसका भी प्रबन्ध कर देती थी। तब बुढ़िया के यहाँ २८ हजार मन गेहूँ पैदा होता था और ८ बण्डे मुँह से लबालब भर जाते थे। इसके बाद भी कभी-कभी खेत से पूरी फसल न कट पाती, आकाश में मेघ आ जाते, तो गेहूँ के पौधे जड़ सहित उखाड़कर एक कमरे में बन्द कर दिये जाते थे। धन-धान्य और समृद्धि का उस गाँव में ऐसा अटूट साम्राज्य था कि शायद ही वैसा कहीं देखने को मिला हो। गाँव-का-गाँव उछलते-कूदते पहाड़ी नाले की तरह खुशी से खेलता, खाता और गाता रहता था। कभी किसीका चेहरा उदास नहीं दिखा। यदि किसीको कोई छोटी-मोटी तकलीफ होती तो भी उसे वे छिपा लेते थे, क्योंकि उन्हें मालूम था कि यदि गाँव के किसी आदमी के पैर में छोटा-सा काँटा भी गड़ गया तो मालकिन के दिल में सुई चुभ जायगी।

अनाज बेचना मालकिन पाप समझती थीं। उसने कभी पायली भर भी अनाज नहीं बेचा। जो अनाज खरीदने आते उनसे वह कह देती कि—“बाजार खुला है।” जो उधार माँगने आते उनसे वह कहती कि—“हमारे यहाँ खाता नहीं रखा जाता।” जिसे वह कष्ट में देखती, मन-दो-मन अनाज मुफ्त में दे देती थी। गाँव में जब कभी किसीके यहाँ शादी-ब्याह होता तो बखरी से मनमाना अनाज भेजा जाता। बुढ़िया कहती—“मेरे बेटे (या बेटे) का ब्याह हो रहा है, वारातियों को तकलीफ न हो। खाने-पीने को उन्हें खूब मिले। यदि उन्हें तकलीफ

हुई तो सारे गाँव की इज्जत में बड़ा लग जायगा।” वह अपने विश्वस्त मुंशी को भेजा करती थी जो देखता था कि किसी मेहमान को कष्ट तो नहीं है।

उस जमाने में चोरी-चपाटी का बड़ा भय रहता था, पर इस गाँव में कभी चोरी नहीं हुई। गाँव के किसी आदमी ने अपनी नीयत नहीं बिगाड़ी, पराये धन-दौलत की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा। एक दिन की बात है, मालकिन दालान में बैठी माला फेर रही थी। चैत का महीना था। दिनभर खूब धूप तपी और शाम को आकाश में राक्षस की तरह भयंकर काले मेघ उमड़ आये। ऐसा लगता था कि प्रलय हो जायगा, इतना पानी आखिर समायेगा कहाँ ? गेहूँ के बोझे खेत में पड़े थे, इसलिए मजदूर तन-मन लगाकर उन्हें खलिहान पहुँचाने में व्यस्त थे। इस भाग-दौड़ में मंगल की नजर बदल गई और वह खलिहान का रास्ता छोड़कर अपने घर चला गया। रामा ने यह देखा तो खुशी से उछल पड़ा। उसके और रामा के बीच कोई पुरानी अनबन थी, अब बदला लेने का उसे मौका मिल गया। जब सारे बोझे खलिहान पहुँच गये और मजदूरों को छुट्टी मिली तो रामा सीधे बखरी पहुँच गया। उस समय मालकिन बरामदे में बैठी माला फेर रही थी। रामा ने सिर झुकाकर मालकिन से आशीर्वाद लिया और बरामदे के एक कोने में बैठ गया। थोड़ी देर वह चुप बैठा रहा और जब मालकिन ने उसके आने का कारण पूछा तो उसने कहा—“मालकिन, एक बड़ी बात है, पर कहने में हिचक लगती है।” उसकी हिम्मत नहीं हुई कि वह एकदम शिकायत कर दे। मालकिन ने उठकर उसके सिर पर हाथ फेरा—“ऐसी कौन-सी बात है रे, जिसे कहने में हिचक लगती है ? आज तक तो तू कभी नहीं हिचका !” मालकिन के इस मृदु व्यवहार से उसे सहारा मिला, परन्तु फिर वह डरते-डरते बोला—“आज मंगल एक बोझा गेहूँ अपने घर चुरा ले गया। मैंने अपनी आँखों से उसे घर ले जाते देखा है।” खलिहान से जब छूटा तो मैंने सोचा मालकिन के कान में यह बात डाल दूँ।” सो चला आया।”

रामा की बात सुनकर मालकिन मुस्करा दी। उसने मुंशी को

आवाज लगाई और रामा को चार कुडो गेहूँ देने की आज्ञा दी। सुनकर रामा चौंक पड़ा। उसने हाथ जोड़कर कहा—“नहीं, नहीं मालकिन, मुझे गेहूँ नहीं चाहिए। मैंने तो अपना कर्तव्य...”

“यह तो तुमने ठीक किया रामा”—मालकिन ने बीच में रोककर कहा—“पर असल में अनाज तुझे भी चाहिए था। अन्तर यही है कि तूने अपनी ईमानदारी नहीं बेची, जबकि मंगल को अपनी ईमानदारी बेचने पर मजबूर होना पड़ा। उसे जरूर कोई ऐसा कष्ट होगा जो वह मुझसे छिपा रहा है। तू जा और जाकर मंगल से कहना—‘मालकिन अभी मरी नहीं हैं। उसके गाँव में अकाल नहीं पड़ा। बोझा ले आये सो तो ठीक किया, जाकर चार कुडो गेहूँ और ले आओ और अपना दुःख मालकिन से कह दे वरना वह आज खाना नहीं खायेंगी।’”

मंगल ने मालकिन का यह सन्देशा सुना तो सिर पटक लिया। उसका साहस नहीं हुआ कि वह मालकिन को जाकर मुँह दिखाये, पर वह यह भी हिम्मत नहीं कर सका कि मालकिन का बुलउआ टाल दे और उसे भूखा रहने दे। वह दौड़ा-दौड़ा बखरी गया और मालकिन के पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगा। मालकिन ने उसके सिर पर हाथ फेरकर उसे उठाया और कहा—“बेटा, तुमने कोई पाप नहीं किया, सिर्फ तुमने एक भूल की है और वह भूल है कि तुमने अपने दुःख को मालकिन से छुपाया। वह जमीन तुम्हारी है, इस जमीन के मालिक तुम हो। तुम्हारा खून जब पसीना बनकर खेतों की काली मिट्टी में गिरता है तो गेहूँ की बालें उस पर खड़ी होकर मुसकुराती हैं और धान के पौधे उसमें लोटकर अठखेलियाँ करते हैं। फिर अपनी जीज की चोरी कैसे?” मंगल में आगे सुनने की सामर्थ्य न थी, वह उठकर भाग गया लेकिन जब घर जाकर उसने देखा कि मालकिन ने एक बोरा गेहूँ पहुँचाया है तो उसे लगा कि नदी में डूबकर वह आत्महत्या कर ले। वह इतना लज्जित हुआ कि फिर कई दिनों तक घर के बाहर नहीं निकला।

समय परिवर्तनशील है। वह निरन्तर घड़ी की सुई की तरह घूमता रहता है। शम्भू सिंह जब बीस बरस के हो गये तो इस गाँव से औरत के शासन की बागडोर उनके हाथ चली गई। पहिले से ही उन्हें अपनी वृद्ध माता के इस अत्यधिक नम्रता से घृणा थी, लगाम जैसे ही आई कि करेला और फिर नीम चढ़ा जैसी बात हो गई। एकदम गाँव का नक्शा बदल गया। अब वहाँ एक रूप-सुंदरी आ गई। दिनभर वह खेतों की निगरानी करती, एक मजदूर को दूसरे के विरुद्ध भड़का कर सारा भेद मालूम करती और शम्भूसिंह को रिपोर्ट देती। किसीकी मजाल क्या कि गेहूँ की एक बाल भी खेत के बाहर चली जाये। मजदूरों पर विश्वास करना हराम है। शम्भू सिंह का दृढ़ विश्वास था कि गरीब बड़ा नमकहराम होता है। ईमानदारी उससे डरती है। इसीसे उनके आते ही प्रताड़ना, मारपीट, दंड, और जुर्माना जैसी घटनायें शुरू हो गईं। जहाँ की जनता स्वच्छन्द रहती थी, धुएँ में अब उसका दम घुटने लगा। पूरा शासन किसी तानाशाह की तरह कस दिया गया और इनके मूल में शम्भू सिंह के सिवाय उस रूप-सुंदरी का भी गहरा हाथ रहने लगा। वह कहने को नौकरानी थी किन्तु अवकाश के समय नृत्य-संगीत जैसे मनोरंजनों से भी मालिक का दिल बहलाया करती थी। जाम के जाम वहाँ चले आते और खाली चपक वापिस कर दिया जाता। रोज आधी राततक बखरी में खूब जशन मनाया जाता था। लगता था जैसे तीनों लोक की सुख और समृद्धि यहीं इकट्ठी हो गई है। गरीबों की गुंजाइश ऐसी जगह कहाँ ?

एक दिन शम्भू सिंह दालान में बैठे कुछ लोगों से बातें कर रहे थे कि एक अंधा लाठी टेकते, एक लड़के का सहारा लिये दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया। उसने देहली पर अपना सिर टेक दिया और हाथ जोड़कर मालकिन से बोला—“आज घर में खाने को नहीं है मालकिन, थोड़ा-सा अनाज मिल जाय तो इस लड़के का पेट तो भर दूँ।” कमल के पत्ते में पड़े हुए पानी की तरह, अंधे की यह प्रार्थना भी बेकार साबित हुई।

वे क्रोध से सिंह की तरह गरजे—“तो क्या हमने ठेका ले रखा है। खाने को नहीं है तो जा डूब मर।” अंधे ने फिर हाथ जोड़कर प्रार्थना की—“एक बार मेरी दो मुर्गियाँ चढ़ाव में बखरी आई थीं। यदि उनकी ही कीमत मिल जाय...।” मुर्गी के पैसों की बात जैसे ही शम्भू सिंह ने सुनी कि उनके तन-बदन में आग लग गई, सावन के मेघों की तरह क्रोध से गरजते हुए उन्होंने कहा—“तगादा लगाने आया है हरामजादे ! तेरी यह हिम्मत !”

शम्भू सिंह ने तुरन्त मलथू को आवाज दी और उसकी पीठ में २५ जूते लगाने का हुक्म दिया। मलथू ने अपने जूते उतारकर अन्धे की नंगी पीठ पर तड़ातड़ २५ जूते लगा दिये। अन्धे के मुँह से न एक शब्द निकला न और आँखों से आँसू गिरे। वह जैसे पत्थर हो गया। गरीबी भी कितना बड़ा पाप है। आज अपना ही अधिकार दूर खड़ा हँस रहा था। अन्धे ने लाठी उठाई और पीछे की ओर मुड़ा। चलते समय उसने कह ही दिया—“मैं अन्धा हूँ मालिक, पर आँख मेरी नहीं फूटी, आँख तो तुम्हारी फूटी है। मुझ भरे को क्या मारते हो। मुझे दुःख इस बात का है कि जिस घर से कोई आदमी खाली हाथ नहीं लौटा, आज उसी घर के सामने यह दुर्दशा हो रही है।”

इस समय बूढ़ी मालकिन भीतर चारपाई पर पड़ी अपनी अंतिम घड़ियाँ गिन रही थी। जब अन्धे के साथ किये गये इस व्यवहार की उसे खबर लगी तो वह काँप उठी। उसने शम्भू सिंह को बुलाया और कहा कि—“बेटा, इस घर से कभी कोई खाली नहीं लौटा। हमारे यहाँ परमात्मा का दिया खूब है, फिर परमात्मा की इन सन्तानों को पहिचानो !”

“क्या हमने सदावर्त खोल रखा है ?”—शम्भू सिंह आवेश में बोले—“क्या हमने गाँवभर की ठेकेदारी ले रखी है ?”

“हाँ, गाँवभर की ठेकेदारी ले रखी है—” वृद्ध मालकिन आवेश में आ गयी—“यदि तू ठेकेदारी नहीं सभाल सकता तो गाँव सरकार को लौटा दे...पर यदि ऐसी ज्यादाती करेगा तो तेरा गर्व मिट्टी में मिल जायगा। घमंड का घर खाली होता है शम्भू। थोड़ा ‘उससे’ भी तो

डर, 'उसके' यहाँ देर है पर अन्धेर नहीं..." वृद्धा उल्टा-सीधा खूब समझाती रही लेकिन शम्भू सिंह पर इसका कोई असर नहीं पड़ा। वे तो गरीबों को गुलाम समझते थे और उनका कहना था कि—यदि इन्होंने सिर उठाने की तनिक भी कोशिश की तो बुरी तरह कुचल दिये जायेंगे।

सारा गाँव त्रस्त था और 'त्राहिमाम' की पुकार करता था। रोजी और रोटी के सम्भावित खतरे से वह बेचैन हो गया था। खेत में अब मजदूरों की जगह मशीनें काम कर रही थीं। एक मशीन छोड़ दी कि घण्टे भर में खेत बो गया, एक घण्टे में फसल कट गई और बिजली के पंखे पल भर में उड़ाकर भूसा दूर फेंकने लगे। अब न तो पवनदेव की पूजन की जरूरत रह गई और न 'चढ़ाव-पर्व' मनाने की आवश्यकता। नयी-नयी किस्मों की खाद से जमीन की भूख पूरी की जाने लगी। यहाँ जैसे आदमी और आधुनिक शस्त्रों के बीच होड़ लगी थी, लेकिन इस होड़ का परिणाम अच्छा नहीं हुआ। ज्यों-ज्यों दवा दी गई मर्ज बढ़ता ही गया। जहाँ ८ बंडे अनाज से लबालब भर जाते थे अब ४ बंडे भरना भी मुश्किल हो गया। बाकी बंडे मुँह फाड़े भूखे तड़पते रहते। उनमें काँच की फूटी शीशियाँ और घर का कचड़ा शोभा पाने लगा। मालकिन ने अपनी जिन्दगी में जो बहार देखी थी वह उसीके सामने उड़ने लगी।

एक दिन आधी रात को मालकिन ने शम्भू सिंह को अचानक बुलाया। उस समय वे परियों के नाच में मस्त थे। सुरा की रंगीन मादकता की सुखी उनके गोरे-गोरे गालों में बिखरी हुई थी। माँ की आज्ञा पाकर लटपटाते कदमों से शम्भू सिंह वहाँ पधारे और खाट के एक कोने में जा बैठे—“आखिर जल्दी काहे की है माँ, इतनी रात को बुलाने का प्रयोजन?”

“अब मैं तुमसे जुदा हो रही हूँ बेटा”—माँ ने अपना ममता-भरा हाथ उनके सिर पर फेरा, तो सुरा की सुगन्ध से तड़प उठी—“यह क्या शम्भू? तू ने शराब पी है?”

“पी नहीं माँ, पिला दी है।”

“किसने पिलाई है रे”—माँ व्यग्र हो उठी।

“अप्सरा ने, बड़ी मिठी है उसकी मुस्कान। क्या मजा है जिन्दगी में, तुम नहीं जानती माँ—” शम्भू सिंह झूम उठे।

माँ ने गहरी साँस ली—“मुझे नहीं जानना बेटा, पर इस घर को देख, बहू को देख, वह किस अप्सरा से कम है।” सुनकर शम्भू सिंह ने मुँह बिचका दिया। माँ ने फिर एक गहरी निश्वास छोड़ी—“तेरी मरजी, पर मैं कहे देती हूँ कि इन हरकतों से तेरे बाप-दादों के नाम पर कलंक लगेगा शम्भू। याद रख, गाँव के लोग हमारी रियाया हैं, लेकिन हम उनके मालिक नहीं। जमीन हमारी है पर अधिकार उनका है, जो मेहनत करते हैं। इन मेहनत करनेवालों का दिल न दुखे, इसका ध्यान रखना बेटा। गरीब की हाथ बखरी की मान-मर्यादा और वैभव को नष्ट कर देगी। यदि तूने उनके साथ दुर्व्यवहार किया तो फिर तेरी देहली पर कोई माथा टेकनेवाला नहीं रहेगा और तेरा दुःख-दर्द केवल तुझ तक ही सीमित रहेगा।” “यदि गरीब खुश हैं तो समझो तुम्हारी जिन्दगी फूल रही है लेकिन यदि उसने एक आँसू भी गिराया तो तुम्हारा वृक्ष जड़ सहित सुखकर टूट रह जायगा।”

“तुम भी क्या बहकी-बहकी बातें करती हो माँ—” शम्भू सिंह उठकर चलने लगे तो वृद्धा ने हाथ पकड़ लिया—“खबरदार, यदि तुमने जमीन के प्रति स्वामित्व प्रकट किया। वह आखिर मिट्टी है और मिट्टी का कोई मूल्य नहीं होता। मूल्य उस मिट्टी का है जिससे सोना निकलता है। जब तक मेरी बात मानोगे, तुम्हारी मिट्टी सोना उगलेगी अन्यथा...” और एकाएक उस गाँव का आलीशान चिराग सदा के लिए बुझ गया। शम्भू सिंह मुसकुराते हुए अपने ड्राइंग-रूम में चले गये—“अच्छा हुआ, काँटा हट गया।” बाहर दरवाजे पर गाँव के लोग मौन खड़े अपनी प्यारी मालकिन की मृत्यु पर शोक मना रहे थे। उस दिन उस गाँव से सदा के लिए औरत का नाम-निशान मिट गया।

प्रस्तुत कथा-संग्रह अनुभव, ज्ञान की परिपक्वता तथा मनोरंजन के के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। आपको ठीक वही आनन्दानुभूति मिलेगी जो कि एक बड़े अजायबघर के देखने पर होती है। लेखक ने हास्यप्रद घटनाओं का चित्रण करने में वास्तविक संसार की बेढंगी गति को लक्षित किया ही है, साथ ही गौण ज्ञान को प्रकाश में लाकर कृति को अमर कर दिया है। इसका मूल्यांकन तो आप स्वयं पढ़ने के उपरान्त कर सकेंगे।

हास्यरस से परिपूर्ण रेखाचित्र श्रेष्ठ चित्रकार द्वारा चित्रित होने से पुस्तक की साज-सजा आदि सभी उत्कृष्ट हैं।

रु० २'५०

१. खरगोश का सपना.....२. चालाक खरगोश

रु० २'२५

रु० २'००

लेखक : कृष्णचन्द्र

उपरोक्त दोनों सचित्र लघु उपन्यास किशोरों के लिए लिखे गये हैं। 'खरगोश का सपना' में खरगोश बड़े जानवरों के अत्याचार से परेशान छोटे जानवरों को मुक्ति दिलाने के लिए स्वप्न-सा देखता है। वह बड़े खूँखार जानवरों को मारने का निश्चय करता है।

अपनी चालाकी के सहारे सभी को नीचा दिखाने और एक-एक को मारने में खरगोश सफल होता है। छोटे जानवरों को अत्याचार से मुक्ति मिलती है और उसका स्वप्न 'चालाक खरगोश' में पूरा होता है।

आवरण-पृष्ठ, कागज, छपाई एवं चित्रादि की सम्मिलित सुन्दरता से पुस्तक अतीव सुन्दर बन पड़ी है। बालकों एवं किशोरों को अपूर्व आनन्द तथा ज्ञानलाभ के लिए उपयोगी है।

अनुपम प्रकाशन

उपन्यास

मैं हारी	जेन आस्टन	५.००
जब खेत जागे	कृष्णचन्द्र	३.००
अंधेरा-उजाला	ख्वाजा अहमद अब्बास	२.२५
यात्रा	साने गुरुजी	४.००
जहाँ बर्फ गिरती है	ए. हमीद	३.५०
झील और कमल	„ अनु. श्यामू संन्यासी	६.००
खरगोश का सपना	कृष्णचन्द्र	२.२५
चालाक खरखोश	„	२.००
इशारा	ना. सी. फडके	५.५०
मुंडे-मुंडे मतिभिन्ना	श्री सत्य	२.५०
मीनाक्षी	„	१.५०
जग की रीति	यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'	२.५०
मध्यमार्ग	बलजाक	३.२५

कहानियाँ

यहाँ से वहाँ तक	महेन्द्रनाथ	२.२५
निशानियाँ	उपेन्द्रनाथ 'अश्व'	३.००
मम्मी	सआदत हसन मण्टो	२.५०
महुआ-आम के जंगल	राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित'	२.५०

नाटक

निर्माण का देवता	विनोद रस्तोगी	२.५०
बाबू	आचार्य आत्रेय	२.००
नेपथ्य	आरिगपूडि	३.००

बम्बई प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

बम्बई १

लेखक की अन्य कृतियाँ

- भकड़ी के जाले (कहानियाँ)
- गंगा की लहरें
- वन्यजातियों की लोक कथाएँ
- सूरज किरन की छाँव (आंचलिक उपन्यास)

159

SPS

891.433 R 14 M



21203

15

169

